।। कोबातीर्थमंडन श्री महावीरस्वामिने नमः ।।

।। अनंतलब्धिनिधान श्री गौतमस्वामिने नमः ।।

।। गणधर भगवंत श्री सुधर्मास्वामिने नमः ।।

।। योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।।

।। चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीमद् कैलाससागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।।

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

पुनितप्रेरणा व आशीर्वाद

राष्ट्रसंत श्रुतोद्धारक आचार्यदेव श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

जैन मुद्रित ग्रंथ स्केनिंग प्रकल्प

ग्रंथांक : १

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-३८२००७ (गुजरात)
(079) 23276252, 23276204
फेक्स : 23276249
Websiet : www.kobatirth.org
Email : Kendra@kobatirth.org

शहर शाखा

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
शहर शाखा
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
त्रण बंगला, टोलकनगर
परिवार डाइनिंग हॉल की गली में
पालडी, अहमदाबाद – ३८०००७
(079) 26582355

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रिय शिक्षाएँ

मुनि महेन्द्र सागर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रिय शिक्षाएँ

आशीर्वाद प्रदाता

प.पू.राष्ट्रसंत आचार्यदेव श्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म.

प.पू.प्रशांतमूर्ति आचार्यदेव

श्री वर्धमान सागरसूरीश्वरजी म.

लेखन/संपादन

प.पू. पंन्यासप्रवर श्री विनयसागरजी म.

के शिष्य

मुनि श्री महेन्द्रसागर

प्रकाशक

आचार्य पद्मसागरसूरि चेरिटेबल ट्रस्ट

अहमदाबाद

For Private And Personal Use Only

कृति : प्रिय शिक्षाएँ

: कृतिकार :

मुनि श्री महेन्द्रसागर

संस्करण प्रथम : वि.सं. २०६२ ई.सं. २००६.

प्रतियाँ : २०००

मूल्य : ५० रूपये

प्राप्ति स्थल

अनिल भाई जे. शाह

A/5, झवेरी पार्क जैन फ्लेट्स

Opp. स्थानकवासी वाड़ी

नारणपुरा रेल्वे क्रोसिंग, अहमदाबाद - 380013

फोन : (079) 27558639

मुद्रक

श्री विश्वकर्मा ऑफसेट

पुलिस थाना के पीछे, खेडावास,

तखतगढ़ जिला-पाली (राज.) 306912

फोन : 02933-220264 मो. 9414463673

हमारे प्रकाशन

(१) मुक्तिना मंगल प्रभाते

श्रावक के बाहर व्रतों का रोचक विवेचन (गुजराती)

(२) मुक्ति का महल

श्रावक के बारह व्रतों का सरल व रोचक शैली में विवरण (हिन्दी)

(३) गुरू कैलासना चरणे

चारित्रचूडामणि आ. श्री कैलास सागरसूरीश्वरीजी म.सा. के जीवन की संक्षिप्त झलकियाँ (गुजराती)

(४) श्रीमाली वंशनो इतिहास

विद्याधर कुलभूषण आचार्य श्री स्वयंप्रभसूरी म. द्वारा महाजन संघ, श्रीमाली वंश और प्राग्वाद्वंश की स्थापना कब कहाँ, कैसे और क्यों की गई? उसका विश्लेषण। (गुजराती)

(५) जिनगुण सरिता

वर्तमान चौबीसी के प्रत्येक तीर्थंकरों के चैत्यवंदन, स्तवन, स्तुतियों और सज्झायों का संग्रह। (गुजराती)

(६) बुढ़िया का पिटारा

जीवन्त संदेश देने वाली और ह्रदय को छु जानेवाली छोटी-छोटी बातों को बड़े रूप में समझानेवाली जीवनोपयोगी किताब (हिन्दी)

(७) आओ, सुक्तियों की बगिया में चलें (द्वितीय संस्करण)

प्रेरणात्मक सुक्तियों का आकर्षक आलेखन (हिन्दी)

(८) श्री पद्म-वर्धमान संस्कृत धातु रूपावली (भाग १-२)

संस्कृत भाषा में प्रवेश करने वालों के लिए यह प्रथम द्वार है। (संस्कृत)

(९) बुद्धि योग स्वाध्याय सागर

आचार्य पद्मसागरसूरि चेरीटेबल ट्रस्ट

अहमदाबाद

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तनिक सोच .....

जैनजगत् में उपाध्यायजी महाराज के प्रिय नाम से सुप्रसिद्ध पूज्य यशोविजयजी म. ने बहुपयोगी कई संस्कृत ग्रन्थ रचे है और गुर्जर भाषा में भी उन्होंने कई रचनाएँ की है, उनमें एक अध्यात्मसार नामक ग्रन्थ भी है। इसी ग्रन्थ के आत्मानुभवाधिकार नामक बीसवें अधिकार के अन्त में आत्मसाक्षात्कार करके मनुष्य जीवन सफल बनाने की इच्छा वाले साधकों को बहुत ही बढ़िया योग्य और सर्वहितकर ऐसी उन्नतीस शिक्षाएँ दी है। कहना होगा कि उपाध्यायजी महाराज ने इस आत्मानुभवाधिकार रूपी गागर में सागर भर दिया है। प्रस्तुत किताब में कुल उन्नतीस शिक्षाएँ है। ससुराल विदा हो रही पुत्री को माँ जिस तरह हितशिक्षा देती है, वैसे हमें भी उपाध्यायजी ने संसार रूपी ससुराल में कैसे रहना उसकी प्रिय शिक्षाएँ दी है। आत्मकल्याण के लिए प्रत्येक शिक्षाएँ ग्रहणीय है। शिक्षाओं पर विवेचन प्रस्तुत करके, ज्ञानार्थिजनों तक पहुँचाने का प्रयास भर किया है। अतः इसमें जो कुछ शुभ है उसके लिए सुग्रहित जिनेश्वरों की कृपा और परम श्रध्धेय मेरे गुरुभगवन्तों का अनुग्रह ही कारणभूत है मुझे आशा है कि यह किताब वाचकों को जीवन की सही दिशा और प्रकाश देगी। वाचक शिक्षाओं को पढ़ और सोचकर जीवन में उतारेगा तो मेरा यह प्रयास सार्थक गिना जाएगा। विवेचन करने में कहीं कोई त्रुटि रह गई हो, आशय स्पष्ट न हुआ हो, स्खलना, अज्ञान व प्रमादवश जिनाज्ञा के विपरीत कुछ भी लिखा गया हो तो हार्दिक मिच्छामि दुक्कड़म्।

मुनि महेन्द्र सागर

13-11-05

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

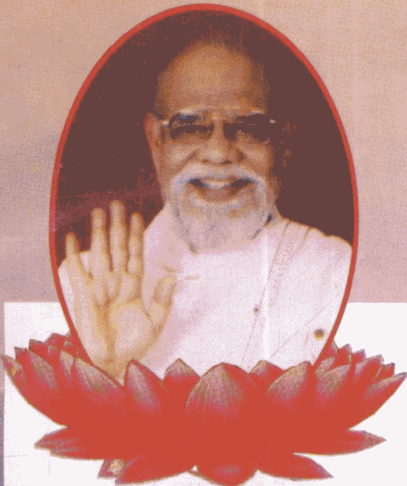

आशीर्वचन

श्री सद्गुरूभ्यो नमः

मेरी हार्दिक अनुमोदना

उपाध्याय श्री यशोविजयजी द्वारा रचित अध्यात्मसार प्रकरण अध्यात्ममार्ग के पथिक भव्यात्माओं के लिए परम पथदर्शक है. इसमें पूज्य उपाध्यायजी भगवन्तने अपने अनुभव और ज्ञान का बहुमूल्य उपहार प्रस्तुत किया है. जिन मुमुक्षुओं को अपनी आत्मा की सतत उर्ध्वगति करनी है उन्हें तो इस प्रकरण ग्रन्थ का वारंवार अध्ययन मनन और चिन्तन करना चाहिए.

प्रवचनकार मुनिवर श्री महेन्द्रसागर छोटी उम्र में होते हुए भी चिन्तन प्रिय है. उनका अध्यात्म से अच्छा खासा नाता है. मुझे बड़ी खुशी और प्रसन्नता हुई जब मुनिश्री ने इस ग्रन्थ के आत्मानुभव नामक प्रकरण की मननीय हितशिक्षाओं पर अपना मौलिक चिन्तनवाला विवेचन तैयार कर प्रस्तुत किया.

इस हितोपदेश मूलक विवेचन में सर्व जीवों को करणीय बातों का प्रेरणादायी मार्गदर्शन मिलेगा. इस से अध्यात्मप्रिय मुमुक्षुओं को अपने जीवन व्यवहार को शुद्ध करने का तरीका मिल पाएगा ऐसी मेरी अवधारणा है.

मुनिश्री का यह प्रयास संस्तुत्य ही नहीं परन्तु स्वपर उपकारक भी है. लोगों को इस में परोसी गई हितोपदेश वानगी से परम तृप्ति का अनुभव हो ऐसी शुभ कामना करता हूँ.

पद्मसागरसूरि

बोरीज तीर्थ (गांधीनगर)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

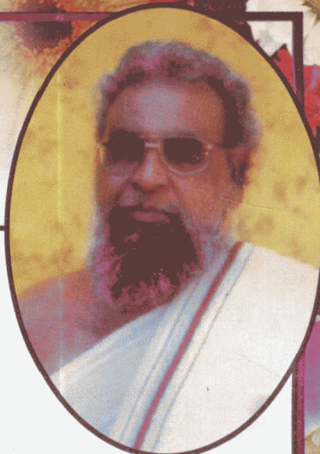

अंतराशीष

न्याय विशारद् उपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजी म. सा. के अध्यात्मसार ग्रंथ के आत्मानुभवाधिकार में जो शिक्षाएं है। वह जीवन के लिए अति उपयोगी है।

जिनके जीवन में शिक्षा-गुण न हो उनके जीवन का कोई मूल्य नही हैं। हित शिक्षा से- गुणों से व्यक्ति महान् बनता हैं।

विद्वान् मुनि श्री महेन्द्रसागरजी म. ने शिक्षा पर सुंदर सरल भाषा में विवेचन किया हैं। घर-घर में इनकी "प्रिय शिक्षाएँ" नामक पुस्तक दिपक की तरह प्रकाश देने वाली बनेगी। ऐसा मेरा मानना हैं।

मुनि श्री अपने जीवन काल में अधिक से अधिक जीवन उपयोगी साहित्य सर्जन करते रहै। ऐसी हृदय से अंतराशीष एवं मंगल शुभ कामना।

વર્ધમાન સાગરસૂરિ

शत्रुंजय तीर्थ, पालीताना

For Private And Personal Use Only

हृदयाशीष

हितशिक्षा यानी आत्मा का हित करने वाली शिक्षा

हितशिक्षाओं ने कईबार कईयों का जीवन बदल दिया हैं। जीवन में हितशिक्षा बहोंत जरूरी हैं।

गाँधीजी ने एक बार कहा था मेरे जीवन में तीन हितशिक्षाएँ नहीं होती तो मैं क्रिश्चन बन जाता। विदेश जाने के लिए जब माँ से पूछा गया तब माँ ने कहा- अपने घर पू. गुरू महाराज रोज गोचरी के लिए आते हैं उनको पूछ के बताऊंगी। पू. गुरूदेव से पूछा गया तब उन्होंने कहा - विदेश जाना है तो तीन बातों का ध्यान रखें। दारू, मांस और पर स्त्री गमन का त्याग रखें। फिर दुनिया में कहीं पर भी जाय। कोई चिंता करने की जरूरत नहीं।

तीन हितशिक्षाओं के कारण (नियम) के कारण एक सामान्य व्यक्ति में से महात्मा गांधी बन गये।

युवा प्रवचनकार मुनि श्री महेन्द्र सागरजी म. खूद अच्छे प्रवचनकार एवं अच्छे लेखक भी है यह उनका तीसरा प्रकाशन हैं। उनके हाथ से ओर भी प्रकाशन होते रहे ऐसी शासनदेव से प्रार्थना।

पं. विनयसागर

नव्वाणुं यात्रा प्रसंग
समदडी भवन, पालीताना

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूर्वकथन

गाँव के बीच लगा लेम्प घोर अन्धकार को आने से रोकता है, वैसे ये शिक्षाएँ भी गुणप्रकाश देकर जीवन के अन्धकार को दूर करेंगी। ये शिक्षाएँ मधुमक्षिका के समान हैं जिनमें डंक भी है तो शहद भी हैं एवं शरीर से छोटी भी है। दिखने में छोटी भले ही हो मगर जिन्दगी में बड़े काम की है। आबाल वृद्धजन अपनी मानसिकता के अनुरूप उनका रसास्वादन कर सकेंगे। इनमें कितनीक शिक्षाएँ धर्मश्रद्धा को बढ़ाने वाली है। कितनीक शिक्षाएँ अंतरंगसत्व को बढ़ाने वाली है। कितनीक शिक्षाएँ जीवन के पाप घटाने वाली है। अतः हर दिन एक शिक्षा को चबा-चबा कर पढ़ा जायेगा तो जीवन की सुबह प्रकाशित हो जायेगी। इस किताब को केवल ऊपर-ऊपर से पढ़ लेने से कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा और पल्ले पड़े बिना उसका अंशमात्र भी अनुसरण नहीं हो सकेगा। अगर ये शिक्षाएँ भली-भाँति हृदयंगम हो जाय तो, आत्मोत्थान में रामबाण औषधि के समान अचूक सिद्ध हो सकती है।

इन शिक्षाओं को पढ़ कर मेरे और आपके जीवन में सुगन्ध बिखरे ऐसी कामना के साथ........

महेन्द्र सागर
13/11/05

For Private And Personal Use Only

प्रकाशन सहयोगी

- शा. भीखमचन्दजी भगाजी चौहान परिवार
  बेंगलोर (बाली) द्वारा आयोजित श्री नव्वाणुं यात्रा के आराधक

- श्री तखतगढ़ मंगल भवन ट्रस्ट, पालीताणा

- तखतगढ़ (राज.) निवासी
  श्रीमान् तोलचंदजी मियाचंदजी, चैन्नई

- वलदरा (राज.) निवासी
  श्रीमान् धनरूपचंदजी किशनाजी, मुम्बई

- त्रापज (गुज.) निवासी
  स्व. व्रजलाल रतिलाल शाह, मुम्बई

- चैन्नई निवासी
  स्व. मनुभाई, समीर, नानालाल, ह. सुशीला बेन

- गुडा बालोतान (राज.) निवासी
  श्रीमती विमला बेन अम्बालालजी के नव्वाणुं यात्रा के निमित्त (बेंगलोर)

- बाली (राज.) निवासी
  श्रीमान देवराजजी भीखमचंदजी चौहान (बैंगलोर)

- बाली (राज.) निवासी
  श्रीमती वक्तावरी बाई देवराजजी चौहान (बैंगलोर)

- श्रीमान गुणवन्तभाई बबाभाई शाह (कोबा वाला) एवं
  चिराग महेशभाई शाह (डभोडा वाला)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहाँ क्या मिलेगा?

क्र.सं.	विषय	पेज नं.
1.	लोक में किसी की भी निंदा नहीं करनी	8
2.	पापियों की भी भवस्थिति का विचार करना	16
3.	गुणीजनों का बहुमान करना	22
4.	थोडे/छोटे से गुण पर भी प्रेम रखना	27
5.	बालक से भी हितकर चींज स्वींकारनी	31
6.	दुर्जन के बकवास से क्रोधित न होना	40
7.	अन्य की आशा नहीं रखनी	47
8.	संग मात्र बंधन जानना (समजना)	54
9.	स्वप्रशंसा से अहंकार न करना	60
10.	लोगों की निंदा से क्रोधित नहीं होना	68
11.	धर्मगुरू की सेवा करनी	74
12.	तत्त्व जिज्ञासा रखनी चाहिए	83
13.	पवित्रता रखनी	91
14.	स्थिरता रखनी	101
15.	दम्भी मत बनो	109
16.	वैराग्यभाव धारण करना	117
17.	आत्म नियंत्रण करना	125
18.	संसार के दोषों का दर्शन करना	133
19.	देह आदि की विरूपता सोचनी	141
20.	भगवान में भक्ति धारण करनी चाहिए	48
21.	सदा एकान्त स्थान का सेवन करना	156
22.	सम्यक्त्व में स्थिर रहना	164
23.	प्रमादरूपी शत्रु का भरोसा मत करो	173
24.	आत्मज्ञान की निष्ठा का ध्येय रखना	181
25.	सभी जगह आगम को आगे रखना	189
26.	कुविकल्पों का त्याग करना	198
27.	वृद्ध पुरूषों का अनुसरण करना	206
28.	आत्म तत्त्व का साक्षात्कार करना	214
29.	ज्ञानानंद से मस्त होकर रहना	222

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्यात्मसार - आत्मानुभवाधिकार श्लोक ३९:४५

निन्द्यो न कोऽपि लोके,[१] पापिष्ठेष्वपि भवस्थितिश्चिन्त्या[२]।
पूज्या गुणगरिमाढ्या,[३] धार्यो रागो गुणलवेऽपि[४] ।।१।।

ग्राह्यं हितमपि बाला[५]दालापैर्दुर्जनस्य न द्वेष्यम्।[६]
त्यक्तव्या च पराशा,[७] पाशा इव संगमा ज्ञेयाः[८] ।।२।।

स्तुत्या स्मयो न कार्यः,[९] कोपोऽपि च निन्दया जनैः कृतया[१०]।
सेव्या धर्माचार्या[११]स्तत्त्वं जिज्ञासनीयं च[१२] ।।३।।

शौचं[१३] स्थैर्य[१४]मदम्भो,[१५] वैराग्यं[१६] चात्मनिग्रहः कार्यः।[१७]
दृश्या भगवतदोषा[१८]श्चिन्त्यं देहादिवैरूप्यम्[१९] ।।४।।

भक्तिर्भगवति धार्या,[२०] सेव्यो देशः सदा विविक्तश्च।[२१]
स्थातव्यं सम्यक्त्वे,[२२] विश्वास्यो न प्रमादरिपुः[२३] ।।५।।

ध्येयात्मबोधनिष्ठा,[२४] सर्वत्रैवागमः पुरस्कार्यः।[२५]
त्यक्तव्याः कुविकल्पाः,[२६] स्थेयं वृद्धानुवृत्त्या च[२७] ।।६।।

साक्षात्कार्यं[२८] तत्त्वं, चिद्रूपानन्दमेदुरैर्भाव्यम्।[२९]
हितकारी ज्ञानवता, मनुभववेद्यः प्रकारोऽयम् ।।७।।

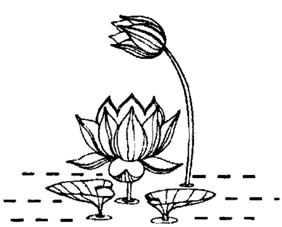

For Private And Personal Use Only

1 निन्द्यो न कोऽपि लोके

(लोक में किसी की भी निंदा नहीं करनी)

मेरा एक प्रश्न है, आपको जबाव देना है। ऐसा कौन सा रस है जिसका त्याग मुश्किल हैं। जिसको छोड़ना कठिन हैं। मोसंबी का? संतरे का? आम का? सिरड़ी का? निंबू का? अनार का? करेले का? अनानस का? नही, ये सारे रस तो सहजता से त्यागे/छोड़े जा सकते है। परन्तु मुश्किल है निंदा रस त्याग। इन सब रसों का त्याग करने वाला भी निंदा रस का त्याग नहीं कर सकता है। साहित्य में नौ रस बताये हैं श्रृंगार रस, हास्य रस, करूण रस, रौद्र रस, वीर रस, भयानक रस, बिभत्स रस, अद्‌भूत रस और शांत रस। परन्तु इन सभी रसों से बढ़कर निंदा रस हैं। बेचारें साहित्यकार निंदा रस को स्थान देना भुल गये लगता है, निंदा को भी रसों में स्थान मिला होता तो शायद रसाधिराज शांतरस न होता, निंदा रस होता। कामकाज की बातों के शिवा अपनी व्यर्थ की बातों में मुख्य रूप से लगभग क्या होता है? बहुधा हम किसी की निंदा ही करते रहते है। किसी जगह पर चार मिले नहीं कि पाँचवें की निंदा शुरू हुई समझों। चार में से एक चला गया तो शेष बचे तीन, चले गये चौथे की निंदा किये बिना नहीं रहेंगे। निंदक मण्डली में बैठकर निंदा की प्यालियाँ भर-भर कर पीने वालों को समझ लेना चाहिए कि अभी दूसरे की बुराई हो रही है, परन्तु जैसे ही मैं गैर मौजूद रहुंगा तो मेरी भी निन्दा होने वाली हैं। हम दूसरे की निंदा करते हैं और दूसरा हमारी निंदा करता हैं। यूं जीवन को हम सार्थक बनाते रहते हैं। महाभारत के रचनाकार वैदव्यासजी ने हमारी कमजोरी की तरफ रेड सिग्नल किया कि मेहरबानी करके किसी की भी निंदा मत किजिए। चलो बस! निंदा नहीं करेंगे, आपकी बात मान ली, पर दूसरा कोई निंदा करता हो तो क्या करना? किसी की निंदा के शब्द हमारे कान में जाएं तो क्या करना? आँख तो बंद कर ले, परन्तु कान कैसे बन्द कर ले। कान के थोडी ना पलके हैं! वेदव्यासजी कह रहे है कि निंदा किजिए भी मत और निंदा सुनिये भी मत, क्योकि निंदा करने में पाप है वैसे निंदा सुनने में भी पाप हैं। आप लोग कहेंगे

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अगर कोई बोलता है तो हम क्या कर सकते है? उसके शब्द/बातें कान में जायेंगी ही न, क्या कर्ण में अंगूली डालनी? वेदव्यासजी कहते है, हाँ यदि आप ऐसी जगह पहुँच गये हो जहाँ निंदा सुननी ही पड़े, वैसा हो तो कान में अंगूली डाल दो। क्या? सभी लोगों के बीच में कान में अंगूली डालनी? कितना अभद्र दिखेगा। क्या दूसरा उपाय नहीं है? वेदव्यासजी कह रहे है अगर आप कान में अंगुली नहीं डाल सको वैसा हो तो उस जगह से रवाना हो जाओं। किसी की निंदा करनी नहीं, कोई कर रहा हो तो कान बंद कर लेना, या वहाँ से चले जाना। किसी आदमी की कोई बात हमें पसन्द न हो तो मुझे यह बात पसन्द नहीं हैं ऐसा कहने में क्या तकलिफ हैं? क्या इसमें भी निंदा का दोष लगता है? विचित्र जगत है, विचित्र लोग है, विचित्र व्यवहार हैं, सबका सब ही अच्छा लगे यह जरूरी नहीं हैं। जो हमें अच्छा न लगता हो उसे कम से कम दूर करना चाहिए। हमें दूसरों का टेढ़ापन अच्छा न लगता हो तो कम से कम खुद में रहा टेढ़ापन दूर करना चाहिए न? जब हम दूसरे की ओर एक अंगूली करते है तब शेष अंगूलियाँ अपनी ओर झूकी होती हैं। यह भूलने जैसा नहीं है, अन्य में जितने दोष है उससे तीन गुना तुझमें है, झूकी हुई तीन अंगुलियाँ यहीं दर्शा रही है। अच्छा, कोई दोष हमें अच्छा नहीं लगता तो निंदा करने से क्या फायदा? हमारी निंदा से वह दोष मुक्त नहीं हो जायेगा। जो-जो दोष हमें अच्छे न लगते हो उन्हे जीवन से बाहर निकालने चाहिए। इसमें तो हम स्वतन्त्र है जिस दोष की हम निंदा कर रहे है, वही दोष कहीं हममें तो नहीं हैं न! आदमी अधिकांश किसकी निंदा करता है? बड़े आदमी की, जैसे बड़े आदमी की प्रसिद्धि बड़ी वैसे निंदा भी रहेगी। बड़े आदमियों के दोष जल्दी नजर आते हैं। आदमी की वृत्ति ही कुछ इस प्रकार की हैं। देखों, इतने बड़े आदमी में भी इतने दोष है, तो हम तो छोटे लोग हैं, हमारी तो बात ही क्या? हम तो उनसे बहुत छोटे हैं। कालिदासजी कह रहे हैं कि महापुरूषों के निंदा की बात तो दूर रही उनकी निंदा सुननी भी नहीं चाहिए। अरे वाह! सुनने में क्या हर्जा है? आप सुनते नहीं तो वह बोलता? जंगल में जाकर तो बोलेगा नहीं न। आप सुनकर उसे प्रोत्साहित कर रहे हैं। आप उसकी बात सुने ही नहीं तो उसे बोलने का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मन होगा। आप सुनने में उत्सुक हो इसलिए बोल रहा हैं न! हम कहते है सुनने में क्या पाप है, हम कहाँ किसी की निंदा कर रहे है? वह बोलता है हम क्या करे! कवि कालिदासजी ने कहा है, महापुरूषों की निंदा करने वाला ही नहीं सुनने वाला भी पापी है। जो गुण में, ज्ञान में, शक्ति में या अन्य बाबतों में भी आगे बढ़ा हुआ है वह दूसरों की निंदा क्यों करे? वह तो स्वनिर्माण में ही इतना डूबा रहता है कि निंदा के लिए उसके पास अवकाश ही नहीं रहता। सामान्यतया उदारचरित शक्तिशाली निंदा नहीं करते। निंदा तो अशक्ति की निशानी है। निंदा ईर्ष्या की चिनगारी है, नीचता का चिन्ह् है, निंदा वैचारिक हिंसा हैं। नीच लोग दूसरे की किर्तीरूप आग से जल उठते हैं, उनके स्थान पर, समकक्ष पहुँच नहीं पाते है इसीलिए निंदा का रास्ता अपनाते हैं। सारी दुनिया को अपना बनाना हो तो अपने हाथ की बात हैं। चाहे कैसे भी संयोग आ जाये, कैसी भी घटना हो जाये, दुसरे की निंदा मत करो। फिर देखो जग वश में होता है या नहीं, फिर कामण, टुमण, टोटके या वशीकरण की जरूरत नहीं है। कौन किसकी निंदा करता है? आप निरीक्षण करना, चोर कभी चोरी की निंदा नहीं करते, भ्रष्ट कभी भ्रष्टाचार की निन्दा नहीं करेंगे, मुर्ख कभी मुर्खता की निंदा नहीं करेंगे। जहां सभी नंगे हो वहां वस्त्र वाला ही निंदा पात्र बनेगा। सभी दुर्जन हो वहाँ सज्जन की निंदा होगी ही। आज हम यही देख रहे है। किसी ने सच ही कहा है! चोर चन्द्र की, नौकर गृहस्वामी की, कुशील सुशील की, असती सती की, अज्ञानी ज्ञानी की, गरीब धनवान की, निरक्षर साक्षर की, अकुलीन कुलीन की, युवा वृद्ध की, कुरूप रूपवान की और नीच श्रेष्ठ मनुष्य की निंदा करता हैं। दोष यानी मलिनता! दोष यानी विष्ठा! विष्ठा को कोई हाथ लगाता है? माँ जैसी माँ भी खुद के पुत्र की विष्ठा को हाथ नहीं लगाती। किन्तु कागज या ठिकरे में उठाती है, परन्तु इस निंदक की तो क्या बात करें, वह दुनिया भर की विष्ठा को खुद की जीभ से उठाता हैं। विष्ठा कौन उठाता है? ढेड़ भंगी, चांडाल जैसे लोग। ढेड़ भंगी या चांड़ाल होना किसी को अच्छा लगता है? औरों की तो बात छोड़िये जो है उन्हे भी अच्छा नहीं लगता। इसीलिए तो हरिजन या अनुसूचित नाम दिये है। चांडाल चार प्रकार के कहे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है– (1) जन्म चांडाल, (2) कर्म चांडाल, (3) क्रोध चांडाल और (4) निंदा चांडाल। हम चांडाल के घर/कुल में नहीं जन्में इसलिए हम चांडाल नहीं है, जिसका जन्म चांडाल कुल में हुआ हो वह जन्म चांडाल। कर्म चांडाल– उत्तम कुल में जन्म होने पर भी काम चांडाल जैसे करता हो वह कर्म चांडाल। क्रोध चांडाल– जिसका गुस्सा तीव्र हो बात बात में गुस्सा करता हो वह क्रोध चांडाल। निंदक चांडाल– हम किसी की निंदा करते है तब चांडाल बनते है। यह बात हमेशा याद रहे तो कितना अच्छा है! निंदा को क्रिया का अजीर्ण कहा हैं। चार प्रकार के अजीर्ण है– (1) भोजन, (2) ज्ञान, (3) तप और (4) क्रिया। इन चारों का अजीर्ण हो सकता हैं। खाने के बाद वोमिट हो, लुझ मोसन हो तो समझना कि भोजन पचा नहीं है। खुद के ज्ञान का प्रदर्शन करने का मन हो तो, या अहंकार बढ़ने लगे तो समझना कि ज्ञान पचा नहीं हैं। बात बात में गुस्सा आये दिमागी संतुलन न रहे तो समझ लेना कि तप पचा नहीं है। दूसरे की निंदा बढ़े तो समझलो कि क्रिया पची नहीं हैं। हमारी उत्कृष्ट क्रिया दूसरे की निंदा करने का सर्टीफिकेट/लायसन्स न बन जाय, उसका पूरा–पूरा ध्यान रखना। निगोद में अनन्तकाल तक वाणी थी ही नहीं, बेइन्द्रिय में पहली बार जीभ मिली। जीभ मिलने से हमें वाणी मिली, परन्तु व्यवस्थित और योग्य बोलना तो मनुष्यभव में ही मिला। जिस वाणी के द्वारा अनन्ता तीर्थंकरों–गणधरों–युग प्रधानों और आचार्यो ने मोक्ष मार्ग कहा, उसी वाणी को हम निंदा के द्वारा अपवित्र करेंगे? गंगा को गटर बनायेंगे? अमृत को जहर बनायेंगे? एक जगह बडे काम की बात लिखी है–

यदीच्छसि वशीकर्तु जगदेकेन कर्मणा।
पराडपवाद सस्येभ्यो, गां चरन्ति निवारय।।

समग्र जगत को यदि एक ही काम से आप वश करना चाहते हो तो पर निंदा रूपी घास चरने वाली अपनी वाणी रूपी गाय को अटका दें। निंदा से अगर हम अटकेंगे तो सचमुच हम अनर्थों से बच सकते हैं। हम अच्छी से अच्छी क्रिया करें, यह अच्छी बात है, दूसरे भी अच्छी से अच्छी क्रिया करने लग जाय ऐसी भावना रखना यह भी अच्छी बात है। परन्तु कोई अच्छी क्रिया करता न हो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तो उसे तुच्छकार/दुत्कार के उसकी निंदा करे या तिरस्कार करे यह जरा भी योग्य बात नहीं है। मैं अच्छी से अच्छी क्रिया करूं तो दूसरे क्यों न करें? दूसरों को भी करनी चाहिए! दूसरे क्रिया में कितनी घोलमाल करते है? मैं ही बराबर शुद्ध क्रिया करता हूँ। ऐसी वृत्ति आदमी को निंदा करने के लिए प्रेरती है। ऐसे लोगों को समझना चाहिए कि मैं भी पहले से ऐसी शुद्ध क्रिया करता था? धीरे-धीरे ही सब सीखा हूँ न, और मेरी क्रिया शुद्ध ही है ऐसा किसने कहा केवल ज्ञानी की दुष्टि में कैसी होगी। किसको पता? मैं खुद ही खुद को सर्टिफिकेट दे दुं तो कैसे चलेगा? दूसरों की क्रिया बाह्रय दृष्टि से शायद हीन हो परन्तु केवली की दृष्टि से पूर्ण हो सकती है। मेरी अपूर्ण नजर सर्वत्र अपूर्ण ही देखती है। कमी से भरी नजर सब जगह कमी ही देखती है, ढूंढती है। मुझे दुसरी जगह कमी दिखती है, उस का अर्थ ये है कि मैं कमी से भरा हूँ। केवल ज्ञानि सब के सारे ही दोष जानते है, फिर भी कभी कहते नहीं है, मैं नही जानता और नहीं देखता फिर भी बक-बक करता हूँ। मैं जगत को अपूर्ण रूप में देखता हूँ, मुझे दूसरे अपूर्ण दिखते हैं वह मेरी ही अपूर्णता की निशानी है। ऐसी विचारधारा से व्यक्ति निंदा और क्रिया के अजीर्ण से बच सकता है। अच्छा! यह बात तो ठीक है कि ऐसी विचारधारा से हम निंदा करने से बच सकते हैं। परन्तू दूसरा कोई हमारी निंदा करता हो तो क्या करना? उस निंदा में कोई सच्चाई हो तो भी ठीक पर केवल कीचड़ उछालने की ही नीयत हो तो क्या करना? वह हमारे सामने कीचड़ उछाले तो क्या हमें भी उसके सामने कीचड़ उछालना? जैसे के साथ तैसे वाला सिद्धान्त अपनाना? या फिर अपना संतुलन खो बैठना? निंदक तो महा उपकारी है।

कबीर कहते हैं- **निंदक दूर न कीजिए, दीजे आदरमान,**
निरमल तन मन सब करें, बकि बकि आनहिं आन।।

अपनी निंदा हो रही हो तो नाराज होने की जरूरत नहीं है किंतु खुश होने की जरूरत है। व्यक्ति किसी नगण्य आदमी की निंदा नहीं करता हैं। आपके चारों तरफ निंदा हो रही हो तो समझ लेना कि आप में कोई पात्रता कोई विशेषता आई है, आपकी निंदा प्रगति की सूचक है। आपकी प्रगति ने

For Private And Personal Use Only

प्रतिस्पर्धीयों में इर्ष्या जगाई है जो अभी निंदा रूप में बाहर आ रही है। "ड़ेल कार्नेगी" कहते है– अनुचित टीका परोक्ष रूप में आपकी प्रशंसा ही है। याद रखें आदमी मरे हुए कुत्ते को लात नहीं मारता। हम भूल करे तब दुनिया निंदा करे किंतु भूल बिना निंदा करे तब कैसे चला ले? ऐसा सोचना मत , आप बर्फ या आकाश जैसे स्वच्छ हो, फिर भी लोग आप के विषय में कुछ नहीं बोलेंगे, ऐसा मानना ही मत। अरे! राम को नही छोडने वाले लोग आपको छोड़ देंगे? आदमी की एक बड़ी खूब विशेषता है। जब वह किसी की अच्छी बात सुनता है तब शायद ही सच मानता है। परन्तु किसी की गलत बात तुरन्त ही सच मान लेता है। किसी भी आदमी की परीक्षा कर लेना। दूसरे की क्यों? अपनी ही मनोवृत्ति का विश्लेषण करके देखे न? किसी के विषय में प्रशंसा सुनी, कि फलां आदमी बहुत दानी है। अपना शंकाशील मन तत्काल बोल उठेगा ना! कोई इतना दान कैसे कर सकता है? ये तो दो नंबर का निकाल है। ये कोई दान है, किसी अति सज्जन गिनेजाने वाले आदमी पर पाँच सात लाख रू. के घोटाले या आक्षेप की बात सुनी तो अपना शंकाशील मन तुरन्त बोल उठेगा देखा ना, हम तो पहले से ही कर रहे थे। ये आदमी ऐसा ही है , पाँच सात नहीं ज्यादा होंगे, जरा अंदर/भीतर से खोज करो। इस तरह की मानसिक विकृति के कारण ही हमें दूसरे की निंदा सुननी अच्छी लगती है। अपनी श्रवण रूचि को देखकर बोलने वाले भी (सुनाने वाले भी) मस्ती में आ जाते है और मिर्च–मसाला डालकर ज्यादा से ज्यादा अपने को उत्तेजित करते है। ऐसे लोगों से बचने की जरूरत है। समझदार तो तुरन्त समझ जाते है। जो मेरे आगे दूसरे की बुराई करता है वह मेरी बुराई दूसरे के आगे कर सकता है। एक जगह शेखसादी की बात पढ़ी थी। आदमियों के गुप्त दोष प्रगट मत कर। क्योंकि तू उन्हें लज्जित करेगा और अपने आपको अविश्वस्त। चाणक्य कहते हैं। **"अशक्ता स्तत्पदं गन्तुं ततो निंदां प्रकुर्वते"** निंदक को ऐसा भ्रम होता है कि दूसरे सब दोष भरे है अकेला मैं ही दोष मुक्त हूँ। दूसरे सब कौवे में अकेला ही हंस। दूसरे सब कोयले मैं अकेला ही हीरा। दूसरे सब पत्थर मैं अकेला ही पारस! दूसरे सब कांटे मैं अकेला ही फूल! मैं अकेला ही शेर दूसरे गीदड़।

For Private And Personal Use Only

एक गाँव में एक संत पधारे। संत के प्रवचन में सारा गाँव आया। इस गाँव में एक आदमी रहता था। वह बड़ा ही निंदक था। माँ–बाप हो या साधुसंत यदि अवसर मिल जाये तो वह किसी को भी बख्सता नहीं था। गाँव के लोग प्रवचन में गये तो वह भी उनके साथ–साथ चला गया। संत का कोई विक पोईंट दिख जाय तो उनकी निंदा करने का अवसर मिल जायेगा इसलिए वह गया था। नित्य प्रवचन सुनने से उसकी जिन्दगी में ऐसा अद्भूत परिवर्तन आ गया। उसे अपने पाप का भारी दुःख पहुँचा। एक दिन उसने अकेले में संत के पास आकर निवेदन किया। गुरूदेव! मैंने अब तक बहुत लोगों की निंदा की है। साधुसंतों को भी मैंने नहीं छोड़ा। आपका प्रवचन सुनकर मेरे जीवन में परिवर्तन आया है। कृपा करके मुझे प्रायश्चित्त दिजिये। संत ने अपने पास पड़े कागज को हाथ में लिया और हो सके उतने उस कागज के छोटे–छोटे टुकड़े किये। सारे टुकड़ों को सम्हाल कर उस आदमी के हाथों में सौंप दिये और कहा– इन तमाम टूकड़ों को लेकर जाओ और गाँव के बीच टॉवर पे चढ़ जाओ। फिर इन टूकड़ों को हवा के संग आकाश/आसमान में उड़ा दो, पश्चात् मेरे पास आओ। वह आदमी तो सोच में पड़ गया यह कैसा प्रायश्चित्त? पर उसे संत के ज्ञान पे भरोसा था। इस कथन के पीछे जरूर कोई रहस्य होगा। यह सोचकर वह उन टुकड़ों को लेकर टॉवर की और चला। झट से टॉवर पे चढ़ गया और तमाम टुकड़ों को आकाश में उड़ा दिये। हवा के साथ वे टुकड़े चारों दिशा में फैल गये। संत के पास आकर उस आदमी ने कहा। गुरूदेव! जिस तरह आपने कहा था वैसा ही मैने किया है। सारे कागजी टुकडों को टॉवर पर चढ़कर आकाश में उड़ा दिये है। अब तो प्रायश्चित्त हो गया न? अब तो मैं शुद्ध हो गया न? अब तो कोई विधि बाकी तो नहीं रही न? संत ने कहा : अभी तेरा प्रायश्चित्त आधा ही हुआ है। आधा बाकी है। उसने कहा– जो कुछ भी बाकी हो कृपा करके मुझे कह दिजिए तो जो बाकी है वह भी मैं करने को तैयार हूँ, क्योंकि मुझे पूर्णतः पाप से मुक्त होना है। संत ने कहा– अब तुमने जितने कागज के टूकडे हवा में उडाये थे उन्हें एक–एक करके उठाकर ले

For Private And Personal Use Only

आओ। एक भी टुकड़ा रह न जाय उसका ख्याल रखना। वह आदमी तो विचार में डूब गया। उसे दिन में ही तारे दिखने लगे। उसने कहा– गुरूदेव! यह कैसे हो सकता है? संत ने कहा– अगर यह नहीं हो सकता तो निंदा का प्रायश्चित्त भी नहीं हो सकता। निंदा एक ऐसा भयंकर पाप है जिसका प्रायश्चित्त होना मुश्किल है। क्योंकि आज तक जिन–जिन लोगों की निंदा करके लोगों के कानों में जो जहर डाला है .... उस जहर को कानों से फिर कैसे निकाल सकोगें? क्योंकि तुम उन सभी को पहचानते हो? क्या तुम उन सभी को अपनी भूल का इकरार करने के लिए एक जगह पर इकट्ठे कर सकोगें? एक बार निंदा रस पीने की आदत हो जाने पर निंदक किसकी निंदा नहीं करेगा। यह एक सवाल है। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत तुकाराम ने कहा है– जिस घर में संत निंदा है, वह घर नहीं अपितु स्मशान है। इतना सुनकर निंदा के पाप से छुटेंगे तो शुभ होगा। निंदा का रस न छूटे तो भी कोई बात नहीं निंदा जरूर किजिये, परन्तु अन्य की नहीं अपनी खुद की ही निंदा किजिये।

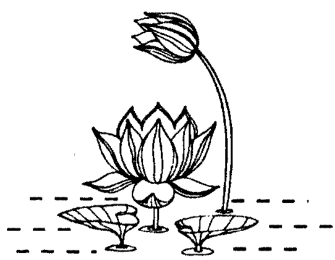

For Private And Personal Use Only

2 पापिष्ठेष्वपि भवस्थितिश्चिन्त्या

(पापियों की भी भवस्थिति का विचार करना)

उपाध्यायजी महाराज दूसरे गुण/शिक्षा के विषय में बता रहे हैं। जो हमें शिष्ट बनाएं या शिष्टाचार सिखाएँ वही शिक्षा है। वे कह रहे हैं कि पापी की भी निंदा मत करना। स्थूल बुद्धि से सोचें तो हमें लगता है कि धर्मीजन की बुराई--निंदा करे तो पाप लगता है। परन्तु पापियों की निंदा करने में थोडी न पाप लगता है? सामान्य रीति से हम इस तरह सोचते हैं। जो देव की निंदा करते हैं, गुरू की बुराई और अवर्णवाद करते हैं धर्म के द्वेषी है। उनकी निंदा करने में क्या दोष हैं? उनकी निंदा तो करनी ही चाहिए न! यह तो अच्छी बात है न! किन्तु उपाध्यायजी महाराज कह रहे है कि निंदा किसी की भी की जा रही हो चाहे वह धर्मी हो या अधर्मी चाहे वह छोटा हो या बडा, चाहे वह पापी हो या पुण्यवान, चाहे वह नामी हो या अनामी, निंदा या धिक्कार करना हो तो पाप का किया जाना चाहिए, पापी का नहीं। हमने ऐसे शब्द बहुत बार सुने है। परन्तु हकीकत/ वास्तविक जीवन में पाप और पापी के बीच की भेद रेखा मिटती नजर आंती है। पाप की निंदा करते-करते पापी की निंदा कब शुरू हो जाती है उसका ख्याल ही नहीं रहता है। पापी की निंदा करने वाले हम कौन होते है? तिरस्कार करने वाले हम कौन है? क्या हमने कोई पाप नहीं किया है? क्या हम खुद पाप रहित है? अगर हम पाप रहित नहीं है तो हमें निंदा और तिरस्कार करने का कोई अधिकार नहीं है। ये ताज्जुब की बात है कि संपूर्ण पाप रहित परमात्मा कभी किसी की निंदा नहीं करते। वे तो पापी को भी पूर्ण रूप में देखते है जबकि हम किसी को नहीं छोड़ते। योगनिष्ठ बुद्धि सागर सूरीश्वरजी महाराज ने एक भजन पद रचना के प्रारम्भिक शब्दों में यही बात कही है-

आतम ध्यान थी रे संतो सदा स्वरूपे रहेवुं।
कर्माधीन छे सहु संसारी कोई ने कांई न कहेवुं।।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भूल हो जिससे वह इन्सान होता है। पाप न हो जिससे वह परमात्मा होते है। पाप हो जिससे वह इन्सान होता है।

एक महिला को गाँव के लोग–लाठी और पत्थर आदि के प्रहार से मार डालना चाहते थे। क्योंकि उस स्त्री पर किसी व्यभिचार का आरोप था। इस कारण से लोग उसे मार डालना चाहते थे। वह स्त्री भाग रही थी अपनी जान बचाने के लिए। बचाओ...बचाओं......बचाओं... की चीख उसके मुँह से निकल रही थी। सद्भाग्य से वह एक संत के चरणों में पहुँच गई और उस संत ने सिंह गर्जना करते हुए कहा– 'कौन इस महिला को मारना चाहता है? अगर इसे मारना है तो खुशी से मारें। इसे खत्म कर दें परन्तु इस स्त्री को वही मार सकता है, जिसने अपने जीवन में कोई पाप न किया हो। संत के शब्दों में इतना बल था–इतना वजन था कि सुनने वालों के हाथ–पाँव तो क्या हृदय काँप गये (उठे)। जो लोग इस स्त्री को मारना चाहते थे। जो लोग उस स्त्री को सजा देना चाहते थे। उनमें कोई बड़े–बड़े शेठ थे, कोई धर्मी कहे जाने वाले लोग, तो कोई बड़ी–बड़ी पगड़ी वाले भी थे, तो कोई सुटेड़–बुटेड़ भी थे। उनके हाथों से पत्थर नीचे गिर गये, क्योंकि उन्हें भी अपने–अपने पाप याद आ रहे थे। संत ने कहा था और पुरजोर शब्दों में कहा था। इस स्त्री को वही मारेगा जिसने कभी मन–वचन काया से व्यभिचार न किया हो। है कोई ऐसा जो इसे मार सके। सभी चूपचाप चले गये। मनुष्य जाति को संतों का एक ही उपदेश है, पाप का तिरस्कार करो। पाप का तिरस्कार करते–करते पापी का तिरस्कार न हो जाय उसकी सावधानी रखो। मक्खी उड़ाते–उड़ाते नाक ही न उड़ जाय उसका ध्यान रखना है। तीर्थंकर परमात्माओं की जीवनी को पढ़ा होगा। सुना भी होगा। कहीं आपने पढ़ा और सुना कि उन्होनें कभी किसी पापी का तिरस्कार किया हो। गोशाला, जमाली, संगम जैसे पापियों का भी प्रभु ने तिरस्कार नहीं किया है। इन्द्र सभा में सौधर्मेन्द्र ने प्रभु वीर की बड़ी प्रशंसा की और प्रशंसा में कहा कि प्रभु मेरू की तरह बेडौल है उन्हे कोई डिगा नहीं सकता है। इन्द्र की प्रशंसा–संगम से बर्दास्त नहीं हुई। मन ही मन निश्चय

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर लिया कि मैं उनको डिगा दुंगा। मेरे सामने टिक सके वैसा समर्थ कौन है। क्षणभर में उन्हें तहस नहस कर दूंगा। उस दुष्ट संगम ने प्रभु को भयंकर से भयंकर कष्ट दिये एक रात्रि में बीस-बीस उपसर्ग किये। फिर भी प्रभु अडोल रहे। आखिर संगम थक गया, हार गया। जब संगम जाने लगा तो प्रभु की आंखों में करूणा के आँसू आ गये। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्रसूरिजी म. ने सकलाऽर्हत् में प्रभु की उस समय की मनोभावना का सुन्दर विश्लेषण किया है:-

कृतापराधेऽपि जने, कृपामन्थरतारयोः
ईषद्बास्पार्द्रयोर्भद्रं श्री वीरजिननेत्रयोः ।।२७।।

कई जीव मुझे पाकर सद्गति को पाते हैं। मेरे संपर्क/संग से वे पा जाते है परन्तु इस संगम का क्या होगा। बेचारा दुर्गति का मेहमान बनेगा और दुःखों को प्राप्त करेगा। इस तरह की भाव दशा से उनकी आंखों से करूणा के आंसूं निकल पड़े थे। त्रिदंड़ि वेषधारक मरीचि की भगवान आदिनाथ ने निंदा नहीं की थी, परन्तु उनमें छीपे और भविष्य में प्रगट होने वाले महावीरत्व को जाहिर करके, भरतादि को आश्चर्य में डाल दिया था। भगवान की ऐसी आज्ञा नहीं है कि तुम पापियों का तिरस्कार करो। उनकी आज्ञा तो ये है। अगर पापी हमें हेरान-परेशान कर रह हो तब भी उनका तिरस्कार मत करो। पापी पालक को स्कंधकाचार्य के शिष्यों ने धिक्कारा नहीं था.... चमड़ी उखाड़/निकालने वालों के प्रति खंधक मुनि ने क्रोध /द्वेष नहीं किया था। सोमिल ससूर पर गजसुकुमाल मुनि ने द्वेष नहीं किया था। मेतारज मुनि ने सोनी को तिरस्कृत नहीं किया था। कुरगडु मुनि ने अभद्र व्यवहार करने वाले मुनियों का अपमान नहीं किया था। जिन्होनें भी पापी को नहीं धिक्कारा परन्तु उनकी संसार स्थिति का विचार किया उन्हें केवल ज्ञान का तोहफा मिला है। जिन्होंने सहन किया उन्हें क्या मिला? उन सबको केवल ज्ञान मिला। पापियों का तिरस्कार/ निंदा करने से क्या फायदा? क्या वो सुधर जायेंगे? अपनी निंदा से या अपने धिक्ककार से कभी कोई सुधर नहीं जाता है। तो क्या इन सब को देखते रहना?

For Private And Personal Use Only

कुछ कहना ही नहीं? किसी को हित शिक्षा भी नहीं देनी? किसी को रोकना ही नहीं। यहाँ रोकने की या हितशिक्षा की बात नहीं है। जो रोकने–टोकने पर भी या हितशिक्षा–सलाह देने पर भी अपनी सच्ची सलाह भी मानने को तैयार न हो, सुनने को भी तैयार ही न हो। तब क्या करें? तब सोचना कि भगवान महावीर की बातों को नहीं मानने वाले भी थे। उसमें खुद भगवान का जमाइ जमाली भी सामिल था तो मेरी हर बात कोई मान ही ले जरूरी तो नहीं। संसार की सभी आत्माएं एक ही साथ मोक्ष जाने वाली नहीं है। मेरा पुण्य या आदेयनामकर्म इतना जोरदार नहीं है कि सब मेरी बात का स्वीकार कर ही ले। अरे... तीर्थंकर जैसे तीर्थंकर का उत्कृष्ट पुण्य और पूर्वजन्म की सभी जीवों के उद्धार की उत्कृष्ट भावना होने पर भी सब को अपनी बात नहीं समझा सके थे या सब को तार भी नहीं सके थे। तो फिर मेरी क्या औकात? मैं तो एक साधारण इनसान से विशेष कुछ नहीं हूँ। उनको सुधारने के लिए मैं ऐसा दुर्ध्यान करूं ये मैने ठेका नहीं ले रखा है। इस तरह की विचारधारा से पापी के उपर भी समताभाव रख सकते हैं। हमारी बात स्वीकार ने योग्य या कितनी भी सही क्यों न हो अगर कोई न माने तो हमें उन पर क्रोध नहीं करना चाहिए बल्कि माध्यस्थ भावना को याद कर चिंतन करना चाहिए। माध्यस्थ भावना ऐसे लोगों के लिए ही है। ज्ञानियों ने ऐसा नहीं कहा कि अगर वो लोग तुम्हारी बातों का अस्वीकार करे तो उनका तिरस्कार करो– अपमान करो, उनको मारो पीटो। नहीं ऐसे संयोग में मैत्रीभावना के साथ माध्यस्थ भाव रखना चाहिए। आज की कली आने वाले कल का फूल हो सकती है। आज का बीज आने वाले कल का वृक्ष हो सकता है। आज का पत्थर आने वाले कल की प्रतिमा हो सकती है। आज का सोना आने वाले कल का मुकट बन सकता है। आज का दूध आने वाले कल का मक्खन बन सकता है। वैसे आज का पापी आने वाले कल का प्रभु/परमात्मा हो सकता है। जिन का मैं तिरस्कार करता हूँ उन में से कोई तीर्थंकर, गणधर आचार्यादि की आत्मा हो और मुझसे से भी पहले मोक्ष में जाने वाली हो। सिद्ध भगवंत भी जिनको स्व–साधर्मिक गिनते हो उन की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निंदा कैसे कर सकते हैं? इसीलिए कहता हूँ किसी भी जीव का धिक्कार परमात्मा का धिक्कार है। किसी भी आत्मा का अपमान प्रभु का अपमान है।

महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत तुकाराम के पूना जिल्ले में अनेक भक्त थे। दुनिया का यह नियम है। जिनका आदर होता है उनका अनादर भी होता है। जिन की स्तुति होती है उनकी निंदा भी होती है। जिनके भक्त होते है उनके विरोधी भी होते हैं।

संत तुकाराम का भी शिवराम कंसारा नामक विरोधी था। एक दिन एक भक्त तुकाराम के पास आया। उसने कहा संतजी! सिर पे बेटी की शादी का प्रसंग हैं, हाथ में एक भी रूपया नहीं है। तो मैं क्या करूं? संत तुकाराम ने कहा अगर तुझे मदद चाहिए तो शिवराम कंसारा के पास चला जा। वो तेरी मदद करेगा। भक्त सोच में डूब गया। क्योंकि शिवराम संत तुकाराम का कट्टर शत्रु था। उसकी जानकारी उसे थी। भक्त को विचार में डूबा देख संत ने कहा ज्यादा सोच मत, शिवराम को मेरा नाम देकर मदद के लिए कहना। भक्त शिवराम के पास पहुँचा और कहा– मुझे तुकाराम ने भेजा है। मेरे घर शादी का प्रसंग है। आप मेरी मदद करो न! मैं क्या तेरी मदद करूं? तेरा तुका ही तेरी मदद करेगा। यूं कह कर गुस्से ही गुस्से में शिवराम ने भक्त पर ताम्बे का एक सिक्का फेंका। भक्त के सिर पर सिक्का जोर से लगा। ताम्बे के सिक्के को सहाय/मदद समझकर भक्त ने उठा लिया और सीधा ही तुकाराम के पास चला आया। उसने तुकाराम से सारी बात कही। तुकाराम ने कहा तु चिन्ता मत कर। उस ताम्बे के सिक्के को तू भट्टी में तपा। भक्त ने वैसा किया तो आश्चर्य जनक बात हुई। भट्टी की गर्मी से थोडी ही देर में ताम्बे का सिक्का सोने में बदल गया। भक्त ने उस सोने के सिक्के से शादी का प्रसंग धूमधाम से मनाया (पुरा किया) ताम्बे का सिक्का सोने में बदल गया यह खबर देखते ही देखते चारों तरफ फैल गई। खुद शिवराम कंसारा को भी जब ये समाचार मिले तब उसे भी आश्चर्य हुआ। वह मानने लगा कि तुकाराम के पास जरूर पारसमणि होगा। उसके प्रभाव से सिक्का सोने का बन गया लगता है। मैं भी तुकाराम की सेवा

For Private And Personal Use Only

करके उस पारसमणि को प्राप्त कर लूँ। जिससे संपूर्ण जिदंगी मुझे आराम हो जाय। शिवराम ने संत तुकाराम की शरण स्वीकार की। सतत छः महिने उसने सेवा की। पर अफसोस वह तन से सेवा करता था, परन्तु उसका मन उसकी आँखे तो पारसमणि को खोज रही थी। छह महिने खोजने पर भी पारसमणि नहीं दिखी, इसीलिए उससे रहा न गया। एक दिन उसने हिम्मत कर के पूछ ही लिया। संतजी! आपके पास जो पारसमणि है वो मुझे दिखाओ न, संत तुकाराम ने कहा : शिवराम! मेरे पास तो पारसमणि नहीं है। मेरे पास तो अखंड रसमणि है। अगर तू कहे तो तुझे दे दूं। मुझे आपकी ये गुढ़भाषा समज में नहीं आ रही है। बात को स्पष्ट करके कहो न! तुकाराम ने कहा– प्रभु का नाम, प्रभु का स्मरण प्रभु की भक्ति यही अखंड रसमणि है। उसके प्रभाव से ही सब कुछ संभव होता है। इसके सिवा मेरे पास कोई ओर मणि नहीं है। शिव राम ने संत के चरणों में सिर झूका दिया। उसके हृदय का परिवर्तन हो गया। आँखों से बहते आंसू ही बता रहे थे। एक समय का कट्टर दुश्मन संत तुकाराम का परम भक्त बन गया।

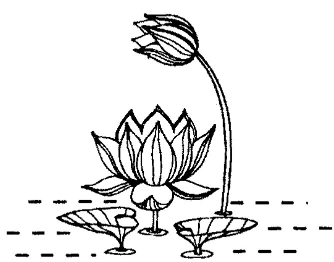

For Private And Personal Use Only

3

पूज्या गुणगरिमाढ्या:

"गुणीजनों का बहुमान करना"

समुद्र में रत्न भी होते है और कचरा भी होता है। तालाब में कमल भी होते हैं और कीचड़ भी होता हैं। गुलाब के पौधों पर फूल भी होते है और कांटे भी होते हैं। चन्द्रमा में चान्दनी भी है और कलंक भी हैं। वैसे ही इस संसार में गुण भी है और दुर्गुण (दोष) भी है। गुण पूजक मनुष्य बुराई में भी अच्छाई देख लेता है और दुर्गुण दर्शक अच्छाई में भी बुराई देख लेता है। गुण पूजक मनुष्य यदि समुद्र के पास जाएगा तो कहेगा कि धन्य है इस समुद्र को कि जिसमें कितने ही रत्न पैदा होते हैं। कितना अद्‌भूत है ये समुद्र कि जिसके गर्भ में अनेक रत्न समाएं हुए है। यदि दोष दर्शक मनुष्य समुद्र के पास जाएगा तो उसे कचरा ही नजर आएगा, वह कहेगा भले ही समुद्र में रत्न छिपे हो किन्तु कचरा कितना भरा है इसमें। और इसका पानी भी खारा होता है। गुण दर्शक तालाब के पास जायेगा तो कहेगा कि धन्य है इस कमल के फूल को जो किचड़ में पैदा होकर भी कितना निर्मल और निर्लेप है। दोष दर्शक कहेगा कि कमल तो कितनी गन्दगी में खिलता है। गुण दर्शक चन्द्र को देखेगा तो कहेगा कि वाह! क्या दिव्यता है चन्द्रमा की और इसका प्रकाश भी कितना सुहाना और शीतल लग रहा है। दुर्गुण दर्शक यदि चन्द्रमा को देखेगा तो कहेगा चन्द्र में तो कलंक है, धब्बा है। गुण पूजक अगर गुलाब के पौधों के पास जाएगा तो कहेगा कि वाह! गुलाब का तो क्या कहना। ये कितनी खूब सूरती से लहरा रहे है और महक रहे है। जबकि दुर्गुण दर्शक कहेगा कि इन पौधों में फूल तो बहुत कम है, कांटे ही कांटे दिख रहे है। निंदा से छुटने का उपाय क्या है? निंदा दूर कैसे होती है? निंदा दूर करने का उपाय उपाध्याय श्री यशोविजयजी महाराज बता रहे हैं– निन्दा दूर करने का उपाय है गुणीजनों का बहुमान। गुणीजनों का बहुमान करने से पहले गुणीजनों को खोजना पड़ता है। इससे गुण और गुणी ढुंढ़ने की आदत बनती है। अभी हमारी आदत क्या है? गुणों को देखने की और

For Private And Personal Use Only

खोजने की आदत नहीं है परन्तु अब तक हमारी आदत दोषों को ढुंढ़ने की रही है। जिस प्रकार समुद्र खारे जल से भरा होता है, परन्तु उसमें भी रत्न पाए जाते हैं, उसी के कारण वह रत्नाकर कहलाता है। रत्नों की प्राप्ति सागर से होती है परन्तु कोई आदमी समुद्र के खारे जल से घृणा करता है तो वह रत्नों को नहीं पा सकता है। जो आदमी समुद्र के खारे जल की उपेक्षा कर के मेहनत/प्रयत्न करता है, वही रत्नों को हासिल कर सकता है। उसी तरह यह संसार दोषों की खान है। दोषों की खान रूप इस संसार में गुणवान मनुष्य, समुद्र में रत्नों की तरह विरले ही मिलते है। जो व्यक्ति अन्य में रहे दोषों की उपेक्षा करके, गुणीजनों के गुणों की मुक्तकंठ से प्रशंसा करता है उसके गुणों को प्राप्त कर लेता है।

एक बार कृष्ण महाराजा अपनी राजसभा में बैठे हुए थे। उनके दिमाग में खयाल आया। मेरे इस नगर में कितने अच्छे और बुरे लोग है, उनकी सूचि/फेहरिस्त तैयार करवानी चाहिए। उसी वक्त धर्मराज युधिष्ठिर ने राजसभा में कदम रखें अर्थात् प्रवेश किया। महाराजा कृष्ण ने कहा– युधिष्ठिर एक कार्य करना है। कहिए महाराज! युधिष्ठिर बोले। कृष्ण बोले यह पन्ना लो और नगर में जाओं। इस नगर में जितने दुष्ट लोग हैं, उनके नाम लिखकर ले आओ। मुझे उन लोगों के नाम चाहिए। कृष्ण महाराजा की आज्ञा/आदेश सुनते ही युधिष्ठिर ने पन्ना उठाया हाथ में लिया और नगर की और चल दिये। कुछ देर बाद राजसभा में दुर्योधन ने प्रवेश दिया। महाराजा ने कहा दुर्योधन एक काम करना है। फरमाइये महाराज! सेवक सेवा में तत्पर है। दुर्योधन का उत्तर था। कृष्ण महाराजा ने कहा लो यह पन्ना और नगर में जितने भी गुणी–सज्जन व्यक्ति है उन लोगों के नाम लिखकर ले आओ मुझे उनके नाम चाहिए। पन्ना हाथ में लेकर दुर्योधन ने भी विदाई ली। युधिष्ठिर सारे नगर में घूम गये, परन्तु उन्हे एक भी बुरा/खराब व्यक्ति नजर नहीं आया। हर व्यक्ति में उनको कुछ न कुछ अच्छाई–गुण दिखाई दे रहे थे। इधर दुर्योधन भी नगर में घुम रहा था परन्तु उसे एक भी उत्तम सज्जन आदमी–गुणी व्यक्ति दिखाई

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं दे रहा था। उसे हर आदमी में कुछ न कुछ बुराई–दुर्गुण नजर आ रहे थे। अगले दिन युधिष्ठिर ने राज सभा में प्रवेश किया और उसने वह पन्ना महाराजा को सौंप दिया। युधिष्ठिर के द्वारा जो पन्ना महाराज को दिया गया था। वह पन्ना खालिस कोरा था। कृष्ण महाराजा ने आश्चर्य से पूछा– क्यों युधिष्ठिर! नगर में गये नहीं अगर गये थे तो घूमें नहीं? युधिष्ठिर बोले– महाराज! मैं कल बहुत घूमा हूँ, सुबह से शाम तक घूमा हूँ, परन्तु पुरे नगर में मुझे एक भी दुर्जन व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। मुझे तो प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ गुण दिख रहा था। अरे! जिसमें एक भी सद्‌गुण हो उसे मैं दुर्गुणी कैसे मान लूँ? युधिष्ठिर की गुण दृष्टि से महाराजा खुश हो गए। थोडी देर बाद दुर्योधन ने राजसभा में प्रवेश किया। उसने भी जो पन्ना हाथ में लेकर गया था वापिस महाराज के हाथ में सौंप दिया महाराजा ने देखा तो पन्ना पुरा भंरा हुआ था। तस्सुभर भी जगह नहीं थी। दुर्योधन ने कहा स्वामिन! आपको क्या बताऊं, इस दुनिया में सभी लुच्चे और लफंगे लोग हैं। बाहर से उजले दिखते है परन्तु अन्दर से तो काले ही है। कृष्ण महाराजा ने कहा : (सोचा), जिसकी दोष दृष्टि होती है उसको सब बुरा ही नजर आ रहा था, उस युधिष्ठिर को कोई गुणहीन नहीं दिखा और उस दुर्योधन को कोई गुण सहित नहीं दिखा। अपने में आज भी वो दुर्योधन वाली आंखे जड़ी हुई है। हमें गुण सहितता कम ही दिखती है। सर्वत्र दोष और दोष दिखते है। जैसे चील की नजर मरे हुए पशु पर, मक्खी की नजर घाव पर, कुत्ते की नजर हड्डी के टुकड़े पर, और सुअर की नजर विष्टा पर होती है, उसी प्रकार दोष दृष्टि वाले की नजर हमेशा दोष पर ही होती है। गुण देखने की नजर नहीं होगी तो गुण कैसे दिखेंगे? गुण दिखेंगे नहीं तो बहुमान किसका करेंगे? गुणीजनों का बहुमान तो तिजोरी की वह चाबी है जिसकी प्राप्ति होने पर गुण रूपी खजाने की प्राप्ति होती है। अपने से छोटे व्यक्ति में रहे गुण का बहुमान अनुमोदन और प्रशंसा करनी चाहिए। इसी बात को जैन धर्म में उपबृहणा कहा हैं। अपने से भी छोटे व्यक्ति के गुण की प्रशंसा करने से उस व्यक्ति का उत्साह बढ़ता है और ऐसे प्रोत्साहन से उसका

For Private And Personal Use Only

उत्साह दुगुना हो जाता हैं माना कि गुणियों का बहुमान करना चाहिए परन्तु उससे लाभ क्या होगा? उनके गुण उनके पास है, हमें क्या लाभ? किसी करोड़पति का बहुमान करने से क्या करोड़पति बन सकते है? याद रखो और अच्छी तरह से याद रखो कि करोड़पति का बहुमान करने से करोड़पति बनेंगे या नहीं बनेंगे परन्तु गुणीजनों के बहुमान से तो गुणी बनेंगे ही। क्योंकि रूपये पैसे बाहर से मिलने वाली चीज है जबकि गुण भीतर से पैदा होने वाली चीज है। अंदर का सब कुछ अपने हाथ में है जबकि बाहर का कुछ भी हाथ में नहीं हैं। दूसरे में जो गुण है वो हम में भी गुप्त रूप से पड़े हुए हैं। शुसुप्त रूप से पड़े हुऐ है उन्हें मात्र प्रगट करने की जरूरत है। गुणियों को देखकर हमें ये विश्वास होता है कि हम भी गुणी बन सकते हैं। जैसे भीतर सोया सिंह, सिंह की गर्जना सुनकर जाग उठता है। वैसे गुणी के बहुमान से हममें निष्क्रिय सोये हुए गुण जाग्रत बन जाते हैं। वो गुणी बन सकते है तो हम भी बन सकते हैं। हम से जो अधिक गुणवान हो या समान गुणवाले हो ऐसे लोगों के साथ रहना चाहिए। गुणवानों के संग में रहेंगे तो गुणवान बनेंगे इससे विपरीत गुणहीन के संग में रहेंगे तो गुणहीन बन जायेंगे। हम जिनका बहुमान करते है जाने–अनजाने उन्हीं की तरह होते जाते हैं। यह एक अनुभवसिद्ध सत्य है। अपना निरीक्षण करना हम हकिकत में क्या चाहते है? किसे पूजते है, जिसे पूजते होंगे या चाहते होंगे वह मिल जाएगा। भगवान के दर्शन–पूजन किसलिए करने? क्योंकि भगवान के पास गुणों का उत्कृष्ट वैभव हैं। उनका दर्शन–पूजन करने से अपने में भी वे गुण (आहिस्ता–आहिस्ता) उतरते हैं। पद्मविजयजी महाराज ने आदिनाथ परमात्मा के स्तवन में यही बात कही है। ***जिन उत्तम गुण गावता गुण आवे निज अंग।*** गुणियों के गुणगान और बहुमान से उन गुणों का हममें अविर्भाव होता है। करोड़पति या अबजपति का बहुमान करने से कोई करोड़पति अबजपति नहीं बनता होगा। परन्तु उसके मन में ये इच्छा तो जरूर होती है कि मुझे भी करोड़पति अबजपति बनना है। एक बार उसकी कामना भीतर में तीव्र बनेगी तो आदमी उस चीज के लिए प्रयत्नशील

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बनेगा ही। मुख्य बात है कामना की। गुणों की कामना और बहुमान ही हमें गुणी बना सकता है। जिन–जिन गुणों का अपने जीवन में अभाव हो उन–उन गुणों के धारकों के प्रति हृदय में आदर भाव लाना चाहिए। अगर गुस्सा बहुत आता है तो गजसुकुमार मुनि आदि क्षमावतार मुनियों का ध्यान धरना। अहंकार/अभिमान सताता हो तो नम्रता के शिखर गुरू गौतमस्वामी का ध्यान धरना। माया–कपट सताये तो मल्लिनाथजी का ध्यान धरना। लोभ सताये तो पुणिया श्रावक का स्मण करना। जिनको विषय सताता हो उनको स्थूलभद्रजी विजय शेठ विजया शेठाणी का स्मरण करना चाहिए। ऐसी विचारधारा से ध्यान से और स्मरण से आदमी दोषमुक्त बनता है, और गुणो से भरता जाता है। शिक्षक– मोटर साईकिल में कितने पहिये होते हैं? ढ़ब्बू : छह। शिक्षक : छह कैसे? ढ़ब्बू सर मोटर में चार और साइकिल में दो पहिये हाते हैं तो मोटर साइकिल के मिलाकर कुल छह होते है न! इसि तरह गुणानुराग और गुण प्रशंसा से अपनी जिन्दगी में भी गुणवृद्धि होती हैं।

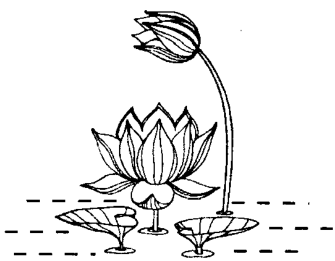

For Private And Personal Use Only

4 धार्यो रागो गुणलवेऽपि

"थोडे/छोटे से गुण पर भी प्रेम रखना"

गुण पक्षपात अन्य में विद्यमान गुणों को खींचने का श्रेष्ठ चुम्बक है। जिस प्रकार वटवृक्ष के छोटे से बीज में विशाल वृक्ष छिपा हुआ है, उसी प्रकार एक गुणानुराग में सर्वगुणों को विकसित करने की ताकत मौजूद है।

गुणानुराग में एक नये पैसे का भी खर्च नहीं है फिर भी उसकी साधना अत्यन्त कठिन है। कहा भी गया है **गुणी च गुणरागी च सरलो विरलो जनः** गुणवान और गुणानुरागी तो कभी कभार ही देखने को मिलते हैं। व्यक्ति हजारों रूपयों का त्याग कर सकता है, दान दे सकता है, दीर्घ काल तक तप कर सकता है– ज्ञान की श्रेष्ठत्तम आराधना कर सकता है परन्तु दूसरों में रहे हुए गुणों की प्रशंसा करना ऐसे महात्मा पुरूषों के लिए भी अत्यन्त कठिन हैं यदि गुणानुराग की प्रवृत्ति का जीवन में विकास नहीं करेंगे तो इस गुण को भस्मीभूत करने वाला इर्ष्या दोष अपने उपर हावी हुए बिना नहीं रहेगा। इर्ष्यालु कभी दूसरे के उत्त्थान को देख नहीं सकता है, दूसरे के पतन में ही उसे मजा आता है। संसार से विरक्त होकर वज्रनाभ चक्रवर्ती ने भागवती दीक्षा अंगीकार की। उनके साथ पीठ–महापीठ और बाहु सुबाहु ने भी संयम स्वीकार किया। रत्नत्रयी की साधना–आराधना में आगे बढ़ते हुए वज्रनाभ मुनि 500 शिष्यों के गुरू और आचार्य बने। आचार्य वज्रनाभ अपने शिष्यों का सुंदर ढंग से योगक्षेम करने लगे। पीठ और महापीठ शास्त्र के अध्ययन अध्यापन में मग्न रहने लगे। बाहु और सुबाहु में वैयावच्च का विशिष्ट गुण था। वे अपने गच्छ की गोचरी पानी आदि से खुब–खुब भक्ति करने लगें। गच्छ की भक्ति में उन्होने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। उन की अपूर्व भक्ति से खुश होकर गुरूदेव ने उन दोनों की बहुत–बहुत प्रशंसा की। बाहु व सुबाहु की प्रशंसा सुनकर अन्य सभी खुश हुए, किंतु पीठ और महापीठ के इर्ष्या होने लगी। वे मन ही मन सोचने लगें, वैयावच्च करने वालों की इतनी प्रशंसा और हम इतना–इतना स्वाध्याय करते हैं हमारी कुछ भी प्रशंसा नहीं। बस, बाहु सुबाहु के प्रति रहे इर्ष्याभाव के कारण

ही पीठ महापीठ ने स्त्री वेद का बंध किया। वहाँ से मरकर वे देवलोक में गए और देवलाक में से च्यवकर ब्राह्मी व सुंदरी के रूप में स्त्री रूप में पैदा हुए। पीठ और महापीठ के पास भी गुणानुराग की कमी रह गई तो उन्हे अगले जन्म में स्त्री रूप में जन्म लेना पड़ा। स्त्रीयाँ स्वाभाविक ही इर्ष्याखोर होती है। गुण के द्वेषी और इर्ष्यालु को स्त्री अवतार देकर कर्मसत्ता मानो कह रही है कि तुम्हें इर्ष्या अच्छी लगती थी न! लो अब करो इर्ष्या। स्त्री का सहज स्वभाव ही ऐसा है कि वह इर्ष्या बिना रह ही नहीं सकती। इर्ष्या मतलब स्त्री और स्त्री मतलब इर्ष्या। इर्ष्या हो वहाँ गुणानुराग पैदा नहीं हो सकता। **धार्यो रागो गुणलवेऽपि** गुणों के स्वामि बनने के लिए छोटे गुण भी प्राप्त करने चाहिए। एक–एक रूपया बचाने से जैसे करोड़पति बना जाता है वैसे छोटे–छोटे गुणों से गुण सम्राट बना जाता है। क्योंकि दुनिया बहुलतया दोषों से भरी है। ऐसी परिस्थिति में छोटा सा भी गुण दिख जाय तो खुश होकर नाचने जैसा है। मारवाड़ में केर का छोटा सा वृक्ष भी मिल जाय तो धुप से संतप्त मुसाफिर कैसे प्रसन्न हो जाता है? गुणानुरागी पुरूष भी वैसे ही प्रसन्न हो उठता है। गुणानुराग बिना के गुण अहंकार पोषक ही बनते हैं अगर दूसरों के गुणों के प्रति प्रेम न हों। सेवा–ज्ञान–ध्यान इत्यादि गुणपाने के लिए अहंकारी भी प्रयत्न करता है, क्योंकि वह गुणों को प्राप्त करेगा। तभी दुनिया में कोई उसके भाव पूछेगा। ज्ञान हो तो पंडित ..... करते आयेंगे। ध्यान हो तो कहेंगे ये तो बहुत ध्यानी है (ध्यानी बाबा है) उनसे कुछ समझने को मिलेगा। सेवा का गुण होगा तो कहेंगे कि सचमुच यह आदमी सोने जैसा है। किसी के भी काम के लिए सदैव तत्पर रहता है। ऐसे मीठे वचन किसे अच्छे नहीं लगेंगे? धन का अहंकार फिर भी पहचाना जा सकता है परन्तु गुणों का अहंकार पहचानना मुश्किल है। ऐसे अहंकार को भी गलाने–पीघलाने वाला गुणानुराग है। गुणानुराग बिना के गुण अंहकार पोषक है। दुसरे का दान अगर मुझे अच्छा नहीं लगता हो तो मेरे दान की कीमत नहीं है। दूसरे का तप, सेवा, ज्ञान, ध्यान, भक्ति आदि के समाचार सुनकर हृदय खुशी से झूम न उठे तो मेरे तप सेवा, ज्ञान, ध्यान में धूल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पडी। इसलिए तो शास्त्रकार कहते हैं, गुणी बनना सरल है परन्तु गुणप्रेमी बनना मुश्किल है। हृदय में गुणों के प्रति आकर्षण होना ही चाहिए। अधिकांश लोगों को गुणों का नहीं परन्तु शक्ति पुण्य, धन, सत्ता या भौतिक पदार्थों का आकर्षण होता है। उसके पीछे हम भागते हैं। जहाँ पुण्य वैभव दिखता है वहाँ हम दौड जाते है। पुण्य वैभव को ही गुण, वैभव समझ लेते है परन्तु पुण्य वैभव हो वहाँ गुण वैभव हो ही, यह जरूरी नहीं है। अकबर के दरबार में बीरबल का अपना ऊँचा स्थान था। बादशाह अकबर भी उसे आदर की दृष्टि से देखते थे। कहीं भी समस्या खड़ी होने पर बीरबल की सलाह अवश्य लेते थे। बीरबल की ख्याति चारों तरफ बढ़ रही है। अकबर बादशाह के ही दरबार में काम करने वाले एक हजाम को बीरबल के प्रति भारी इर्ष्या थी। बीरबल की प्रसिद्धि उससे सही नहीं जा रही थी। इस कारण से वह बीरबल को किसी भी उपाय से खत्म करना चाहता था उस के दिल में इर्ष्या की आग जल रही थी। वह बीरबल को भस्मासात् करना चाहता था, परन्तु उसे पता नहीं था कि उसके हृदय में रही हुई इर्ष्या की आग उसे खुद को ही खत्म कर देगी। इर्ष्यालु हिताहित का विचार नहीं कर पाता है। बीरबल को खत्म करने के लिए इर्ष्यालु हजाम ने एक योजना (घड़ी) बनाई।

एक बार वह अवसर देखकर बादशाह के बैठक कक्ष में पहुँचा गया। महाराज उस दिन खुश–मिजाज में बैठे थे। अवसर देखकर हजाम ने कहा! जहाँपनाह आपके अब्बाजान को जन्नत/स्वर्ग में गये वर्षो बीत चूके हैं। आप तो यहाँ मौज उडा रहे हो, अब्बाजन के कुछ समाचार भी नहीं मंगवाए? बादशाह अकबर ने कहा, भाई तुम्हारी बात तो ठिक है, परन्तु जन्नत /स्वर्ग में किसे और कैसे भेजा जाय? वह बोला जहाँपनाह मेरे पास एक मंत्र है स्वर्ग में भेजने की व्यवस्था हो जाएगी, चिता/आग में किसी के प्रवेश करने के बाद मैं मंत्र पढुंगा तो वह व्यक्ति धुएँ के साथ स्वर्ग में पहुँच जाएगा। परन्तु स्वर्ग में किसे भेजा जाय.... हजाम बोला। दुसरा कोई व्यक्ति तुम्हारी नजर में है? बादशाह बोला। जहाँपनाह मेरी नजर तो बीरबल पर जाकर ठहरती हैं, उसमें

For Private And Personal Use Only

हर प्रकार की योग्यता है, वह आपके इस कार्य को आसानी से कर सकता है। अच्छा! तब फिर मैं बीरबल को आज्ञा कर देता हूँ। कुछ देर बाद अकबर ने बीरबल को बुलाया और स्वर्ग में जाकर अब्बाजान/पिताजी के समाचार लाने का आदेश दिया। बीरबल को हजाम के षड्यंत्र की गंध आ गयी। तुरंत ही उसने बादशाह को कहा कि आगामी पूर्णिमा के दिन आग मे प्रवेश कर, स्वर्ग में पहुँचकर आपके अब्बाजान की खबर ले आऊंगा। बीरबल ने चिता की भूमि के नीचे सुरंग–भूगर्भ खुदवा दिया। और पहले से ही सुरंग के भू–भाग के ऊपर चिता तैयार करवा दी थी। पूर्णिमा का दिन आ गया। भव्य जुलुस के साथ बीरबल स्मशान भूमि में पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर बीरबल ने चिता में प्रवेश किया। हजाम के मंत्रोच्चार के साथ ही चिता में आग लगा दी और उधर उसी समय बीरबल गुप्त रूप से सुरंग में पहुँच गया। चिता की ज्वालाएं उपर उठने लगी। हजाम सोच रहा है, चलो अच्छा हुआ, पाप गया। रात को बीरबल भू–मार्ग से अपने भवन में आ गया। बराबर दो महिने बाद बीरबल अकबर बादशाह की सभा में उपस्थित हुआ। बीरबल की जटा, दाढी, मुंछ काफी बढ़ चूकी थी। बादशाह ने पूछा क्यों बीरबल जन्नत में जाकर आ गए? क्या खबर है? खैरियत तो है न? बीरबल ने कहा– जहांपनाह! जन्नत में आपके अब्बाजान आदि मजे में है परन्तु। परन्तु क्या? अकबर ने कहा। सम्राट! जन्नत में हर तरह की सुख–सुविधाएँ हैं परन्तु जटा और दाढ़ी बनाने के लिए कोई हजाम नहीं है। अतः अब्बाजान ने एक हुशियार/दक्ष हजाम को बुलाया है। देखो न! मैं वहां दो महिने रहा तो मेरी भी दाढ़ी कितनी बढ़ गई है? तुरंत ही बादशाह ने हजाम को आदेश देते हुए कहा भाई! तुम्हे जन्नत में जल्दि जाना होगा। बादशाह की आज्ञा सुनते ही हजाम को पानी छुट गया। वह कुछ भी बोल नहीं पाया। अगले ही दिन हजाम को भव्य जुलुस के साथ स्मशान ले जाया गया और उसे जिंदा ही अग्नि में प्रवेश करना पडा। बीरबल से की गई इर्ष्या उसे ही खा गई क्योंकि इर्ष्यालु दूसरे का नहीं खुद का ही विनाश करता है।

For Private And Personal Use Only

5 ग्राह्यम् हितमपि बालात्

"बालक से भी हितकर चीज स्वीकारनी"

चाणक्य कहता है कि कुड़ादान अगर कचरे–गंदगी से भरा हो, परन्तु उसमें अगर सोना गिरा हो तो ले लो, गंदगी की चिंतामत करो। छास अगर खट्टी हो परन्तु उसमें अगर मक्खन हो तो ले लो, खटास की चिंतामत करो। पौधों में अगर फुल है तो उन्हें ले लो काटों की चिन्ता मत करो। वृक्ष में अगर फल है तो उन्हे ले लो शूलों की चिन्ता मत करो। कुल अगर नीच हो, परन्तु उत्तम कन्या हो तो ले लो, कुल की चिंता मत करो। बालक अगर छोटा हो, परन्तु उसकी बात अगर हितकर हो स्वीकार कर लो। उसकी उम्र की चिंता मत करो। सत्पुरूषोंने कहा है। यदि तुम्हें कहीं कुछ अच्छाई लगे,जो किसी में भी हो, उसे अपना लो, ग्रहण कर लो। चाहे वह अच्छाई जीव में हो जड़ में हो, वृक्ष में हो व्यक्ति में हो, पशु में हो पक्षी में हो, वृद्ध में हो बालक में हो तब भी ले लो ये अच्छाई तुम्हें काम लगेगी। ये मत सोचो कि ऐसे नीच तुच्छ और छोटे से क्युं ग्रहण करूं। छोटे के पास अच्छाई होने से छोटी नहीं हो जाती है और गलत के पास अच्छाई होने से गलत भी नहीं हो जाती है। जैसे आपके हाथ में गजमुक्ता/मोती है, आप चलते–चलते उन्हें हाथ में लेकर/उठाकर कहीं जा रहे हैं। उस वक्त आपके हाथों से मोती अचानक गिर जाय, और वह भी किचड़ –गोबर में गिरे तो क्या किचड़–गोबर में गिरने से मोती का अवमूल्यन हो जाएगा। नहीं किचड़ में गिरने से मोती के मूल्य में कमी नहीं आती। हिरा भी किसी ऐसी ही जगह गिर जाय तो क्या उसके मूल्य में फर्क आ जाएगा? नहीं उसके मूल्य में कोई फर्क नहीं आएगा वह तो मूल्यवान ही रहेगा। वो मोती और हीरा गन्दगी में गिर जाने पर भी अपना मूल्य बरकरार रखते है। वैसे गलत व्यक्ति के पास अच्छाई होने से अशुद्ध या अहितकर नहीं बनती। वह तो शुद्ध और हितकर ही रहेगी। कहते हैं कि दत्तात्रय के चौबिस गुरू थे इन चौबिस में पशु–पक्षी बगेरह भी थे। जहाँ ज्ञान मिला सीखने को मिला जानने को मिला,

For Private And Personal Use Only

जीवन विकास और आत्मविकास की प्रेरणा मिली, प्रेरणा लेते गए। छद्मस्थ मनुष्य चाहे कितना भी बड़ा हो जाय......... परन्तु अब कहीं से कुछ सीखना बाकी नहीं है ऐसा नहीं हो सकता। अब मुझे किसी प्रेरक या उपदेशक की जरूरत नहीं अब मुझे कुछ सीखने का बाकी नहीं है। तुम हित शिक्षा देने वाले कौन होते हो? ऐसे विचार अहंकारी को जरूर आ सकते है। परन्तु विनम्र इन्सान ऐसा कभी नहीं सोच सकता। बड़े–बड़े दिग्गजों को भी छोटे लोगों की छोटी–छोटी घटनाओं से प्रेरणा मिली है। नव दीक्षित की अपूर्व समता देखकर चंड़रूद्राचार्य को केलव ज्ञान हुआ था। स्वयं की शिष्या साध्वी मृगावती के कारण ही आर्याचंदना/चंदनबाला केवलज्ञानी बनी थी। एक साध्वीजी की प्रेरणा/टकोर से श्वेताम्बराचार्य वादिदेवसूरिमहाराज, दिगम्बराचार्य कुमुदचन्द्र के सामने वाद करने के लिए तैयार हुए थे और उस दिगम्बराचार्य को परास्त किया था। वो हरिभद्र भट्ट! परम राजमान्य पुरोहित! ओ महावीर! तेरी देह लालित्य हष्ट पुष्ट मोटा–ताजा शरीर ही कह रहा है कि तुने हमेशा माल–मलिदा उडाया है , कोई तप नहीं किया है, कोई कष्ट नहीं सहा है। अचानक हो गये मूर्ति के दर्शन से कैसा मजाक उडाया। **हस्तिनाताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जिनमंदिरम्**। हाथी के पेरों के नीचे कुचलकर मर जाना कुबुल परन्तु महावीर के मंदिर की सीढ़ी पर पेर रखना मंजुर नहीं। किन्तु कमाल है वहि हरिभद्र साध्वीजी से और गुरूवर से शिक्षा पाकर जिन शासन के तेजस्वी सितारे बन गए और याकिनी महत्तरा सूनु कहलाये। धवलक नाम के श्रावक की टकोर से आचार्य रत्नाकर सूरि परिग्रहवृत्ति से बचे थे श्रेयः श्रिया मंगल केलिसद्म (मंदिर छो मुक्तितणा मांगल्य क्रीड़ाना प्रभु यह प्रसिद्ध स्तुति इसी का गुजराती अनुवाद है)। की स्वदुष्कृतगर्हागर्भित भाववाही स्तुति बनाई थी।

समवसरण में कई आत्माएँ/जीव उपस्थित थे तब इन्द्र ने यह प्रश्न पूछा प्रभु इस सभा में से सबसे पहले मोक्ष में कौन जाएंगा? उस समवसरण में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गणधर भी होंगे श्रृतधर भी होंगे आचार्य और साधु साध्वी भी होंगे, व्रतधर श्रावक और श्राविकाएँ भी होंगी, इन्द्र और देव देवी भी होंगे, पशु पक्षी आदि तिर्यंच भी होंगे। तब संभवनाथ भगवान ने प्रत्युत्तर में कहा था। यह छोटा सा दिखनेवाला चूहा सबसे पहले मोक्ष में जाएगा। ऐसा कहकर/बताकर भगवान ने छोटे से – नन्हे से चूहे की लोक हृदय में प्रतिष्ठा करी थी। तैमुर को मार ड़ालने के लिए दुश्मन पीछे लगे थे। शत्रुओं से घबराया हुआ। तैमुर भागता हुआ एक शून्य निर्जन खंड़हर में प्रवेश कर गया। उस खंड़हर में छिपकर खड़ा रह गया। वहीं उस की नजर एक चींटी के उपर गिरी। वह चींटी एक दाने को घसीट कर ले जाना चाहती थी। परन्तु ऐसा हो नहीं पा रहा था क्योंकि चींटी की साइज से भी दाने की साइज बड़ी थी। फिर भी हिम्मतबाज चींटी का निर्धार था कि दाने को छोड़ना नहीं हैं। तैमुर ने अपनी ही आंखों से देखा कि चींटी ने कुल 69 बार प्रयत्न किए और अंत में वह सफल हो गई। उस दाने को घसीटकर बील में ले ही गई। बस इतना ही प्रसंग देखकर तैमुर में हिम्मत आ गई। मन में निर्धार करके दुश्मनों पर तूट पड़ा। एकलवीर होकर सब दुश्मनों को मार भगाया और पुनः राज्य प्राप्त किया। एक छोटी सी चींटी से भी प्रेरणा ली जा सकती है। "चलणा है, रेणा नहीं" दासी के इस वाक्य से प्रेरणा लेकर एक बादशाह ने बादशाही छोड़कर फकीरी स्वीकार करी थी। दासी के कहने का तात्पर्य ये था कि जहाँपनाह! वहाँ छलनी तो है, पर बेंगन नहीं है। बादशाह ने दासी से छलनी में पड़े बेंगन मंगवाए थे। छोटे से बालक की बात भी फेंक देने जैसी नहीं होती है। कितनीक बार उसकी बातें भी बड़े काम की होती है। आठ वर्षीय बाल अभयकुमार ने किनारे रहकर कुए से अंगूठी बाहर निकाल कर दिखायी थी। 499 मंत्री इस कार्य को नहीं कर पाये थे। सूर्यास्त की छोटी सी घटना देखकर हनुमान को, बीखरते बादल देखकर अरविंद राजा को, चाचा की अपमृत्यु से लव–कुश को, वृद्ध आदमी को देखकर दशरथ को संसार से वैराग्य हुआ था और उन्होनें संयम पथ–स्वीकार किया था।

एक बार रास्ते पर पुल के नीचे, उपर रेल्वे का पुल था। नीचे से रास्ता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुजरता था। वहाँ एक ट्रक फंस गया, सामान काफी ऊँचाई तक लदा था। न इस तरफ आ सके न उस तरफ जा सके उस वजह से पूरा ट्राफिक रूक गया। पुलिस अधिकारी आये कुछ उपाय न मिला कोशिश की खिंचने की, इंजिनियर आया। कुछ न समझ पाये कि क्या करना? इतने ट्रक इस तरफ रूक गये, शोरगुल मच गया, लोगों की भीड़ लग गई। एक आदमी ने कहा मेरी कोई नहीं सुनता। गरीब आदमी डंडा लिये किनारे खड़ा था, कहा ट्रक की हवा क्यों नहीं निकाल देते? जहाँ बड़े इंजिनियर मौजुद हो वहाँ उसकी कौन सुने? वह ठीक कह रहा था हवा ही निकालनी पड़ी और ट्रक तुरन्त बाहर निकल गया।

एक था शेठ। वह सो रहा था। रात में लक्ष्मीने उसे दर्शन दिये और कहा शेठजी इस घर में रहते–रहते मुझे बहुत दिन हो गये, बहुत समय हो गया अब में इस घर से जाना चाहती हूँ। जैसे आपका भी कभी मन पीकनीक जाने का करता है। तीर्थयात्रा जाने का करता है, बाहर घूमने जाने का करता है। जैसे मन का स्वभाव चंचल है वैसे लक्ष्मी का स्वभाव भी चंचल है। तो लक्ष्मीजी ने कहा मैं जाना चाहती हूँ, मेरा मन घुमने का हो रहा है इसलिए मैं आज्ञा चाहती हूँ। शेठ तो बहुत घबराया, बहुत परेशान हुआ उसने हाथ जोड़कर कहा देवी ऐसा मत करो आप जाओगी तो मैं बेसहारा हो जाऊंगा असहाय हो जांऊगा, अनाथ हो जांऊगा बेचारा हो जांऊगा। अगर हमसे कुछ गलती हो गई हो कुछ कसुर हो गया हो तो क्षमा कर दिजिये। लक्ष्मी ने कहा ना मैंने जाने का सोच लिया है निर्णय कर लिया है संकल्प कर लिया है। जरूर जाऊंगी। लेकिन हाँ इतना जरूर है तुम्हारे साथ रहते–रहते मुझे बहुत दिन हो गये तुसमे थोड़ा सा प्रेम हो गया तुमसे थोड़ा सा प्यार हो गया तुमसे थोड़ा लगाव हो गया इसलिए एक काम करो कि कोई एक वरदान जो मांगना चाहते हो मांग लो। शेठ ने कहा ठीक है अगर आप नहीं मानती तो ठिक है एक वरदान मैं मांगूंगा लेकिन मुझे एक दिन का समय चाहिए एक दिन की महोलत चाहिए। लक्ष्मी ने तथास्तु कहा और वह अंतर्ध्यान हो गई। दूसरे दिन शेठ ने

For Private And Personal Use Only

अपने चारों बेटों को बुलाया चारों बहुओं को बुलाया। बुलाकर के रात का वृत्तान्त उन्हें कहा और पूछा बताओं क्या मांगू? शेठ ने अपनी चारों बहुओं से कहा बताओ बेटा क्या मांग लूं! बड़ी बहु ने कहा पिताजी ठीक है अगर लक्ष्मी जाने को तत्पर है और जाने की उसने ठान ली है तो एक वरदान मांगना है एक बहुत अच्छा बंगला एक बहुत अच्छी कोठी एक बहुत अच्छा मकान मांग लो मकान रहेगा हमारे पास जीवन आराम से गुजर–बसर जाएगा हमें और क्या चाहिए। समाज में हमारा रूतबा रहेगा समाज में सम्मान रहेगा इसलिए कहें बहुत विशाल बहुत भव्य और नगर में सबसे सुन्दर एक कोठी मांगलो। दूसरी बहु से कहा बेटा तुम्हारा क्या विचार है क्या ख्याल है? दूसरी बहु ने कहा कि पिताजी ठीक है मेरा तो ख्याल थोड़ा सा अलग है मेरी बड़ी दीदी कह रही है कि एक कोठी मांग लो लेकिन कोठी मांगने से क्या होगा अगर पैसा नहीं होगा रूपया नहीं होगा संपत्ति नहीं होगी तो उस कोठी की व्यवस्था कैसे होगी, उसका रख रखाव कैसे होगा। उसका संचालन कैसे होगा? उसके लिए तो पैसे चाहिए। इसलिए पिताजी मेरी तो इच्छा है। हार्दिक इच्छा है देवी से एक ही वरदान मांगो और वो वरदान मांगो कि हमारी जो फेक्ट्री है वो फेक्ट्री चलती रहनी चाहिए। हमारा जो कारखाना है वो दिन दुगुना और रात चौगुना बढ़ते चलते रहना चाहिए उसमें कोई व्यवधान कोई बाधा न पडे अगर कारखाना चलेगा। फेक्ट्री चलेगी हमारे पास पैसा आता रहेगा और पैसा आता रहेगा तो नयीं कोठियाँ बनती रहेगी। हमारे जीवन में कोई अभाव नहीं आएगा। शेठ ने कहा ठीक है तुम्हारा भी विचार सुना। तीसरी बहु से कहा बेटा बताओ, क्या मांगना चाहिए लक्ष्मीजी से? तो तीसरी बहु ने कहा कि पिताजी मेरे विचार से तो लक्ष्मीजी से बहुत सारा गोल्ड मांग लेना चाहिए, बहुत सारा सोना मांग लेना चाहिए क्योंकि सोना बहुत बहुमूल्य है इसका भाव बढ़ता ही जाता है अगर हमारे पास रहेगा तो हमारे काम अपने आप होते जाऐंगे शेठ ने कहा ठीक है। तुम्हारी बात भी मैंने सुनी। अब जो सबसे छोटी बहु थी उससे कहा कि बेटा तुम बताओ क्या मांगना चाहिए? छोटी बहु ने हाथ जोड़कर कहा पिताजी अभी

For Private And Personal Use Only

तो मैं बहुत छोटी हूँ मुझमें बहुत ज्यादा अनुभव नहीं है, मुझमें बहुत ज्यादा समझ नहीं हैं। लेकिन आप अगर कहते हैं तो मैं भी अपने मन की बात कहती हूँ। ध्यान रखना छोटी बहू बहुत हुशियार होती है लेकिन आप लोग छोटी को छोटी कहकर उसके विचारों को उसकी भावनाओं को कभी महत्त्व नहीं देते हो, घर में अगर चार बहु है तो छोटी बहू के विचारों को जरा समझना वो बहुत हुशियार होती है बडी चतुर होती है लेकिन ये दुनिया छोटे को छोटा कहकर नजर अंदाज कर देती है और छोटे को छोटा मानकर के उसे अलग कर देती है। उसके विचारों को ठुकरा देती है। इसलिए छोटी बहू ने कहा मेरे पास तो ज्यादा ज्ञान है नहीं। लेकिन आपका आग्रह है, आपका आदेश है तो मेरे ख्याल से तो आप देवी से यही वरदान मांगना और ये वरदान मांगना। देवी से कहना कि हे माँ जा रही हो तो जाओ अगर जाने का निर्णय कर लिया है तो लेकिन जाते-जाते एक वरदान दे जाओ। तो शेठ ने कहा कौन सा वरदान छोटी बहु ने कहा एक ही वरदान मांगना वो ये वरदान मांगना कि हमारे बेटों में परस्पर प्रेम बना रहे बस ये वरदान दो और कुछ नहीं चाहिए शेठ को छोटी बहू का प्रस्ताव अच्छा लगा। दूसरे दिन। जब शेठ सो गए रात में लक्ष्मी पुनः आई और कहा मांग लो। क्या वरदान मांगना हैं? शेठ ने कहा माँ देवी! वरदान और कुछ नहीं एक ही वरदान मांगना है। वर दो कि मेरे चारों ही बहू बेटों में परस्पर में प्रेम बना रहे एक दूसरे में स्नेह की भावना बनी रहे बस यही वरदान दो मुझे और कुछ नहीं चाहिए। लक्ष्मी ने सुना तो लक्ष्मी ने शेठ से कहा शेठजी मैं इस घर से नहीं जा सकती हूँ। शेठ ने कहा क्यों? लक्ष्मी बोली कि जहाँ प्रेम का बास वहीं मेरा भी निवास होता है और लक्ष्मी फिर उस घर में स्थिर हो गई। देवी ने अपने इरादे को बदल दिया और कहा कि अब आप मुझे भगाओगे तो जाने वाली नहीं हूँ। क्योंकि बहू और बेटों में प्रेम है। जहाँ प्रेम होता है वहीं देवी का वास होता है। जहाँ क्लेस कलह होता है वहां घर आई हुई लक्ष्मी भी भाग जाती है। और जहाँ प्रेम और प्यार बना रहता है वहाँ बाहर से लक्ष्मी आती है और उस घर को अपना आसरा बना लेती है।

For Private And Personal Use Only

उस घर को सहारा और अपना स्थान बना लेती है। घटनाएं छोटी हो या बड़ी, सामने वाला छोटा हो या बड़ा ये महत्त्वपूर्ण नहीं है इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, परन्तु हम उसमें क्या देखते है और क्या ग्रहण करते है यह महत्त्वपूर्ण है। छोटों का महत्त्व नहीं होता, बड़ो का ही महत्त्व होता है ये विचार ठीक नहीं हैं। क्योंकि आंख छोटी सी है परन्तु विराट–आकाश को अपने में समा लेती है। अंकुश छोटा सा ही होता है परन्तु हाथी को वश में रख लेता है। चींटी छोटी ही होती है परन्तु हाथी के भी प्राण ले सकती है। वज्र छोटा सा होता है परन्तु बड़े–बड़े पर्वतों को तोड़ डालता है। छोटी सी चिनगारी घास के ढेर को जला सकती है। छोटा सा छेद नाव को डूबो देता है। छोटा सा दिया बड़े खंड के अंधकार को भगा सकता है।

नन्द के राजवंश का नाश न करूं वहां तक मैं चोटी में गांठ नहीं लगाऊंगा। यह प्रण चन्द्र गुप्त ने किया था। फिर चन्द्रगुप्त ने चाण्यक के तत्त्वावधान में सेना का संगठन करना शुरू किया। धननन्द जैसे शक्तिशाली राजा से युद्ध करने के लिए एक शसक्त सेना संगठित करना जरूरी था। सैन्य संगठन के पश्चात् चन्द्रगुप्त ने पाटलीपुत्र पर आक्रमण किया। पर उस प्रथम युद्ध में नन्द ने उसकी सेना को नष्ट कर दिया। अपनी भयंकर हार के पश्चात् चन्द्रगुप्त और चाणक्य को जंगलों और पहाड़ों में छुप–छुप कर अपने प्राणों की रक्षा करते हुए काफी समय तक इधर से उधर भटकना पड़ा। एक दिन की बात हैं, चाणक्य और चन्द्रगुप्त को पकड़ने के लिए उन्हें मारने के लिए सेना पीछे पड़ी थी जैसे तैसे भी दोनों सेना के हाथ से छिटक गए। शाम का समय हो गया था, झुरमुटा हो रहा था। गाँव की एक बुढ़िया माजी के घर पहुँचे। वे सोच रहे थे भूख तो लगी है अगर कुछ खाने को मिल जाय तो खाकर आगे भाग निकले। आये हुए अतिथि का सत्कार करना ये भारतीय परंपरा है। ये भारतीय परंपरा/संस्कृति है कि घर के दरवाजे पर आया हुआ दुश्मन भी हमारा अतिथि है, उसके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। भोजन का समय भी हो चूका था। दोनों गुप्त वेश में हैं किसी को पता नहीं है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कि ये चन्द्रगुप्त और चाणक्य है। माजी ने गरम–गरम खीचड़ी परोस दी, वो जल्दबाजी में तो थे ही क्योंकि उन्हे ओर भी आगे निकल जाना था। और उन्होंने गरम–गरम खिचड़ी की थाली में हाथ ड़ाल दिया। हाथ में लिए कवल को मुँह में पहुँचने से पहले ही छोड़ देना पड़ा। बुढ़िया बोली तुम भी चाणक्य जैसे महामूर्ख लग रहे हो। बुढ़िया के मुंह से यह शब्द सुनकर दोनों ही चौंक गए। परन्तु बात को सम्हालते हुए उसने पूछा। माताजी! चाणक्य तो बड़ा बुद्धिमान है आपने मेरी तुलना उससे क्यों की? क्या खाक बुद्धिमान है उसके जैसा बुद्धु कोई नहीं। माताजी ऐसी क्या बात हुई। अरे! चाणक्य जैसी भूल करता है तुमने भी वैसी ही भूल की। सीधे बीच में ही हाथ डाल दिया उसका परिणाम क्या आया? हाथ में लिया कवल बीच में ही छोड़ देना पड़ा न! अगर अगल–बगल से खिचड़ी खायी होती तो बीच की खीचड़ी अपने आप ठंडी हो जाती। चाणक्य भी ऐसी ही गलती बार–बार कर रहा है। छोटी सी सेना लेकर पाटली पुत्र पर आक्रमण करता है और हर बार मुँह की खानी पड़ रही है। अगर वह छोटे–छोटे रजवाड़ों को पहले अपने अधीन करेगा। तो पाटलीपुत्र अपने आप अपने अधीन हो जाएगा। बुढ़िया की इस बात से, युक्ति से सबक लिया, शिक्षा ली। पुनः सेना संगठित की – राजा पर्वतक से मित्रता की और उसे नन्द के राज्य के उपर आक्रमण करने के लिए येन केन प्रकारेण सहमत किया। पर्वतक की सहायता प्राप्त करने के बाद चन्द्रगुप्त और चाणक्य ने पहले तो छोटे राज्यों–रजवाड़ों को वश में किया।

फिर एक दिन नन्द वंश का अंत कर पाटलीपुत्र के राजसिंहासन पर अपना अधिकार कर लिया। इस तरह चन्द्रगुप्त ने नन्दराज वंश को समाप्त कर मौर्यवंश की स्थापना की। राजगृही के राजा श्रेणिक के बगीचे में आम्रफलों की चोरी हुई। बगीचे की सुरक्षा के लिए चारों तरफ कंटिली बाड़ लगाई गई थी। कोई किसी फल को ले सके, तोड़ न सके वैसी व्यवस्था और सुरक्षा की गई थी फिर भी चोरी हो गई और ये मालुम नहीं हो रहा था कि आम्रफल किसने चुराये हैं। चोरी का पता लगाने का और चोर को पकड़ने का काम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अभयकुमार को सौंपा गया। अभयकुमार ने चोर को पकड़ कर राजा श्रेणिक के सामने हाजिर किया। श्रेणिक ने कहा यही चोर है? इसे फांसी की सजा दे दो। मंत्री अभय ने कहा– इसके पास दो विधाएँ है उनममामि और अवनमामि उस विद्या के बलबूते पर ही वृक्ष की डालियों को झूकाकर फलों को पा सका था। और अपनी पत्नी को उत्पन्न हुए आम्र फलों को खाने के दोहले को पूरा किया था। अतः इसके पास जो दो विधाएँ हैं पहले आप उन्हें शिख लिजिए। वह जो चोर था वह जाति से हरिजन था। राजा खुद सिंहासन पर बैठे और हरिजन (चोर) को नीचे बिठाया इस कारण से विद्या आ नहीं रही थी, तब अभय कुमार ने कहा। पिताजी! विद्या ऐसे नहीं आऐगी। उसे पाने के लिए आपको नीचे बैठना होगा और हरिजन को सिंहासन पर बिठाना होगा तब विद्या आएगी। मंत्री के कहने से उस प्रकार किया गया तो तुरन्त ही विद्या ग्रहण हो गई। फिर श्रेणिक ने कहा कि अब इस चोर को फांसी के फंदे पर लटका दो। तब अभय कुमार ने कहा कि यह तो आपके विद्या गुरू है– विद्या दाता हैं। इन्हें मृत्युदंड की सजा कैसे दे सकते है। श्रेणिक राजा ने उस हरिजन को गुरू मानकर विद्यादाता मान कर सजा माफ कर दी। कहने का तात्पर्य यही है कि राजा होकर भी जब वे एक हरिजन से शिख सकते है तो हम क्यों नहीं शिख सकते। कभी भी किसी भी उम्र में कहीं भी कहीं से भी शिखने की तमन्ना रखनी चाहिए।

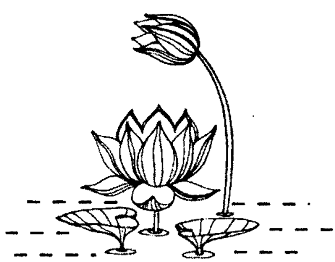

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

6 आलापैर्दुर्जनस्य न द्वेष्यम्

"दुर्जन के बकवास से क्रोधित न होना।"

बहुत बार कितनेक गुणीयल सज्जन सोचते हैं कि हम किसी का कुछ भी बिगाड़ते नहीं। हो उतना भला ही करते हैं फिर भी लोग अपने पीछे क्यों पड़ जाते हैं? परन्तु ऐसे सज्जन यह भूल जाते हैं कि आप गुण वैभव में आगे बढ़ चूके हैं यही आपके पीछे पडे/लगे हुए लोगों को अच्छा नहीं लगता। आप अन्य से जरा उपर उठे यही आपकी भूल! आप यदि उनकी तरह रहते तो कोई आपके पीछे नहीं पडता। कई लोग दुर्जनों की टीका से डरकर सत्कार्यों को छोड़ देते हैं उन्होने अभी दुनिया का स्वभाव जाना नहीं है। खुद की प्रशंसा से ही वो डर गये हैं। टीका को एक प्रकार की प्रशंसा ही समझ लें तो सज्जन कभी अपने कार्यों को छोड़ेंगे नहीं। हकिकत में आपके कार्यों की टीका परोक्ष रूप में आपकी प्रशंसा ही है। लोग इतने निठल्ले नहीं है कि फिजुल के कार्यो की टीका करते रहें। इतना समय किसके पास है? समझदार सज्जनों को खुश होना चाहिए। दुर्जनों का बकवास सुनकर, ऐसे बकवास से ही आत्मतेज बढ़ता हो तो उसमें नाराज होने की बात ही कहाँ रही? यदि आपके कार्य की दुर्जन भी टीका न करता हो तो सोचना कहीं भूल तो नहीं हुई न? मेरा कार्य तो गलत नहीं है न? गलत कार्य की दुर्जन कभी टीका नहीं करते। वो तभी गुस्सा होते हैं। जब अच्छे कार्य से समाज में आपकी प्रशंसा हो रही हो। यही बात उनसे बर्दास्त नहीं होती। हमसे कोई आगे कैसे निकल सकता है? हम वहीं रह जाय और दूसरा आगे बढ़ चले ये हो ही कैसे सकता है? हम पत्थर रह जाये और तुम हीरे बन जाओ। हम पीतल ही बने रहे और तुम सोना/कंचन बन जाओ हम कलीयाँ न बन सके और तुम फूल बन जाओ, नहीं नहीं ऐसा मैं देख नहीं सकता। फिर तुम्हे पत्थर, पीतल और कली बनाकर ही छोडेंगे। ये है दुर्जनों का बकवास।

ये दुनिया का स्वाभाव है आप फिक्र मत करो। दुर्जन तो आपके लिए

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्नि की भट्टी है उस में तपकर ही कंचन/कुंदन रूप में बाहर आ सकते हो। कुंदन को अग्नि का भी उपकार मानना चाहिए। जो उसे शुद्ध करके कीमती बनाती है और दुनिया के सामने लाती है। सज्जनों को ऐसे द्वेषी दुर्जनों को धन्यवाद देना चाहिए। जो लोग उनके धैर्य और सत्व की परीक्षा करते हैं। जिन लोगों ने राम जैसे की भी धुलाई की थी, वो आपको कैसे और क्युं छोडेंगे? ये तो दुर्जन लोगों की आदत ही होती है। सभी टीकाएँ गलत ही होती है, ऐसा भी नहीं हैं, कभी सच्ची और योग्य टीकाएं भी होती है। टीकाओं में जीतना सत्य हो उसका स्वीकार कर लेना चाहिए। बहुत बार यह तो दुर्जनों का बकवास है। वे तो बोलते रहते है। हमें अपना काम करते रहना चाहिए। हाथी चलत बाजार, कुत्ता भौंकत हजार, ऐसा सोचकर और बोलकर आदमी, टीका में रही सच्चाई/सत्यता का भी स्वीकार करने को तैयार नहीं होता है। ये बिलकुल ही गलत है, जरा भी योग्य नहीं है। आप अच्छे कार्य करते हो। आप अपनी पुण्याई के कारण सफल भी हो रहे हो परन्तु उसका यह अर्थ नहीं कि आप के कार्य पूर्णतः त्रुटि/भूल बिना के है। आप अपने कार्यों को भूल बिना के मानने लग जाओ, यही तो आपकी सबसे बडी गलती है। अगर टीका में सत्यांस हो तो उसे मानकर कार्य को भूल रहित करना चाहिए और यदि टीका में कोई तथ्य नहीं है तो उद्विग्न भी मत होइए। दुर्जनों की टीका से अगर नाराजगी होती हो तो सज्जनों को समझ लेना चाहिए कि अभी भीतर मान की अपेक्षा है। मान-सम्मान की अपेक्षा का भंग होता दिखता है तभी गुस्सा आता है। यहाँ सम्मान की बात जाने दो, परन्तु उसकी जगह पर निंदा होती है इसलिए क्रोध आने की शतप्रतिशत संभावना है। याद रखो निंदा या नाराजगी सज्जनता की कमी है। इसे स्वीकारना चाहिए। भगवान महावीर स्वामी के सामने गोशालक जैसे कितने ही लोगों ने बकवास की थी। प्रभु ध्यानस्थ एक वृक्ष तले खडे है। कोई अनाड़ी आदमी वहाँ आकर कहता है। यहाँ क्यों खड़े हो? यह तो हमारे जाने का रास्ता/मार्ग है। हट जाओं यहाँ से। प्रभु शब्दों को सुनते है और जैसे वहाँ कुछ हुआ ही नहीं है, वहाँ से धीरे से चल देते है। उस वक्त प्रभु का चेहरा

For Private And Personal Use Only

देखो तो धीर–गम्भीर–प्रसन्न भाव है। हम उन्हें देखते रहें अपलक जुग–जुग तक देखते रहे। वही तेजस्विता वही चाल और वही ध्यान। "**मार्ग च्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परिषहाः**" प्रभु के मार्ग से पतित न हो जाए, च्यूत न हो जाए, प्रभु मार्ग से दूर न हो जाए तथा निर्जरा के लिए परिषह सहन करने चाहिए। परन्तु उस प्रभु ने कभी स्वस्थता गंवाइ हो ऐसा कभी सुना है? भगवान की बात जाने भी दिजिए। छद्मस्थ अवस्था में कायोत्सर्गस्थ खड़े रहे गजसुकुमार मुनि को कितना अपमानित किया गया था किस तरह भला–बुरा कहा गया था फिर भी वे अपने स्वभाव से च्युत न हुए थे। बुद्ध के साथ अंगूलीमाल ने यही सलूक किया था तो गाँधीजी को गोड्से मिल गया था। ऐसे प्रसंगों में कई शासन प्रभावक महान आचार्यों ने भी कभी स्वस्थता नहीं गँवाई थी। किसी की निंदा न करना यह भी साधना का एक अंग हैं, वैसे किसी की निंदा से हम विचलित न हो, या झूंझला न उठे यह भी साधना का एक अंग है। वे ध्येय को कभी पा नहीं सकते जो लोगों की थोड़ी सी भी निंदा/बकवास से विचलित हो जाते हैं। अगर इस तरह से सभी के बकवास को गम्भीरता से लिया जायेगा तो व्यवहार में भी आदमी शायद ही ध्येय/लक्ष्य को हासिल कर सकता है।

भर्तृहरि संन्यास स्वीकार के कई वर्षोबाद घूमते–घूमते एक बार उज्जैनी के बाहर आ पहुँचे। और वहां वे किसी वृक्ष के नीचे साफ सुथरी जगर पर विश्राम कर रहे थे। तब उस वक्त कुछ स्त्रियाँ पानी भरने जा रही थी। उन महिलाओं ने उन्हें देखा तो वे बोलने लगी। इन्हें देखो तो जरा! राजपाट तो छोड़ दिया। परन्तु इतना सब कुछ छोड़ने के बावजूद भी गजब हो गया इनसे अभी तक तकिया नहीं छुटा। अच्छा नर्म और मुलायम तकिया नहीं मिला तो पत्थर का सिरहाना बनाकर सो रहे हैं। वे स्त्रियाँ इस तरह उनका मजाक उड़ाने लगी। जब भर्तृहरि के कानों ने ये शब्द सुने तो उन्हें भी लगा कि ये स्त्रियाँ जो कह रही है ठीक और योग्य ही कह रही हैं। वास्तव में यह मेरी भूल है, मैंने सब कुछ छोड़ा परन्तु सिरहाना नहीं छोड़ा मुझे यह भी छोड़ देना

For Private And Personal Use Only

चाहिए यूं सोचकर पत्थर का सिरहाना निकाल दिया। और हाथ का सिरहाना बनाकर सो गये। मगर उन स्त्रियों को भला बुरा नहीं कहा अथवा उद्वेलित भी नहीं हुए। जब पानी भरकर महिलाएँ वापिस लौटने लगी, तब फिर भर्तृहरि को देखा तो कहने लगी कि वाह! राज्य घर परिवार छोड़कर संन्यासी बन गये परन्तु अभी तक गुस्सा तो गया ही नहीं। देखो तो अभी भी अन्दर कितना क्रोध भरा है। हमने तो जरा सा यूं कहा कि सिरहाना नहीं छुटा तो इन्होंने तो वो सिरहाना ही निकाल दिया।

कहने का मतलब कुल मिलाकर इतना ही है कि दुनिया तो दोनों तरफ बोलती है। अच्छा करो तब भी बोलती है और बुरा करो तब भी चूकती नहीं हैं। यह दुनिया का स्वभाव है इसको कोई नहीं पहुँच सकता, क्योंकि यह तो दोनों ही तरफ मजा लेती है। लोग चाहे कितना ही बोलते रहे, उन्हें बोलने दिजिये। केवलज्ञानी की दृष्टि से यदि हम सच्चे मार्ग पर है तो ड़रने की कोई वजह नहीं है। किसी के बकवास से हकिकत में कुछ फर्क नही पड़ने वाला है। दुनिया तो यूं भी कहेगी और यूं भी कहेगी। दुनिया कहेगी, ये दुनिया बगैर कहे नहीं रहेगी।

बाप-बेटे थे। वे दोनों एक टट्टू को लेकर उसे बेचने के लिए मेले में चल पड़े। टट्टू को साथ लिए पैदल चल रहे थे। थोड़ा ही मार्ग पार करने के बाद उन दोनों को लोगों की भीड़ नजर आई। उस भीड़ ने टट्टू को लेकर पैदल जाते देखा तो बोलने लगे। अरे! ये दोनों बड़े पागल और मूर्ख है, सवारी का साधन साथ में है और पैदल चल रहे है। इनकी मूर्खता की कोई सीमा नहीं है। बाप ने कहा बेटा सुना। ये लोग क्या कह रहे हैं। बेटा बोला हाँ पिताजी। बाप बोला तुम टट्टू पर बैठ जाओ बेटे। बेटा टट्टू पर बैठा और बाप पैदल चलने लगा। कुछ दूर ऐसे चलने के बाद पुनः उन्हें अन्य लोग मिले और उन्होंने कहा- देखो तो कैसा नालायक बेटा है, खुद तो टट्टू पर मजे से बैठा है और अपने बूढ़े दुबले-पतले बेचारे बाप को पैदल चला रहा हैं। खुद जवान पट्ठा होकर टट्टू पर सवार है। आज कल के जमाने में लड़कों में माँ बाप के प्रति जरा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी विनय विकेक रहा नहीं हैं। कहाँ खुद के माँ–बाप को कावड़ में बिठाकर उठाने वाला श्रवणकुमार और कहाँ बाप को पैदल चलाने वाले ऐसे बंदे। क्या जमाना आया है। बेटे को भी यह बात ठीक नहीं लगी। वह तुरन्त ही टट्टू से नीचे उतर गया और बाप को उपर बिठाया। बेटा पैदल चलने लगा। कुछ दूरी पर फिर लोग मिले फिर उन्होंने ताना कसा। देखो तो! कैसा निष्ठुर बाप है। खुद तो टट्टू पर चढ़ा है और नन्हीं सी जान को पैदल चला रहा है। कैसा कलियुग आया है। इतना बड़ा बाप होकर खुद टट्टू पर बैठ गया है और फूल जैसे कोमल बेटे को पैदल चला रहा है। कहाँ गया प्रेम और वात्सल्य? कहाँ गया वो दिल? जो खुद स्वयं के पुत्र के उपर भी दया न करे उसे बाप कहना कि पाप कहना? बाप को यह सुनकर बहुत ही बुरा लगा। परन्तु अब करें क्या? अकेला लड़का बैठे तब भी लोग बोलते हैं। अकेला बाप बैठता है तब भी लोग बोलते हैं। लोगों के मुँह तो बंद नहीं किये जा सकते। बाप बेटे दोनों परेशान थे। तभी बाप को हुआ कि बेटा! अब कि हम दोनों बैठ जाते हैं। जिससे किसी को भी बोलने का मौका ही नहीं रहेगा। वे दोनों बैठ जाते हैं। वे दोनों ही टट्टू पर बैठ गये। फिर कुछ लोग मिले वो कहने लगे। अरे रे! ये दोनों कितने निर्दयी है। एक जानवर पर दो–दो लाश लदी जा रही है। बेचारे निर्बल–कमजोर–मडियल टट्टू की आज जान ही निकल जाएगी। क्योंकि जो टट्टू खुद अकेला भी मुश्किल से चल रहा हो वहाँ दो दो उपर बैठ गये हैं, पता नहीं इस बेचारे का क्या होगा। लोगों के दिलों में आज जीवदया ही नहीं बची हैं। अब उनके पास कोई विकल्प शेष नहीं था। उन दोनों ने मिलकर टट्टू के पैर बांध कर उसे ही लकड़ी में बांधकर उठा लिया और आगे चलने लगे। आगे चलकर लोगों ने जब यह विचित्र दृश्य देखा तो वे उस पर हँसने लगे। देखो तो जिस पर सवारी करनी चाहिए उसी को उठाकर चल रहे है। दो दो गधे एक टट्टू को उठाकर 'लादकर' जा रहे है। वहाँ ही एक नदी के पुल से गुजर रहे थे कि पानी में प्रतिबिंब/परछाई देखकर टट्टू भडका रस्सी टूट गयी टट्टू सीधा नदी में जा गिरा। बाप बेटे एक दूसरे का मुँह ताकते रह गये। सबकी

For Private And Personal Use Only

सुनकर बार बार अभिप्राय बदलते रहेंगे तो ऐसी हालत होती है। दुनिया तो ऐसी ही है। समय–समय पर वह अपना रंग बदलती रहती है। वह आज जिसकी निंदा कर रही है, कल उसकी प्रशंसा भी कर सकती है। अभी जिसकी प्रशंसा कर रही है, कुछ समय बाद उसकी वह निंदा भी कर सकती है : समाज में कहीं कोई अच्छा कार्य करने के बाद यदि लोगों से प्रशंसा की अपेक्षा दिल में रहेगी तो शायद कभी मन उद्विग्न भी बन सकता है। यह कोई हार्ड एण्ड फास्ट नियम नहीं है कि दुनिया आपके हर अच्छे कार्य की प्रशंसा करेगी। यह दुनिया तो रंगीली है। यह दुनिया तो आपके अच्छे कार्य की भी उपेक्षा कर सकती है। इतना ही नहीं आपके अच्छे कार्य की कद्र करना तो दूर रहा, आपकी निंदा भी कर सकती है। अतः बेहतर यही है अच्छे कार्य करते जाओ। मन में किसी प्रकार की अपेक्षा मत रखो। दुनिया के किसी भी महापुरूष को उनके समकालीन लोगों ने उनकी बुराई करने में कुछ बाकी नहीं रखा है..... परन्तु बुराई करने वाले काल के गर्त में कहाँ खो गये उनका कुछ पता नहीं है जबकि महापुरूष काल–विजेता बनकर आज भी लोक हृदय में जीवित हैं। दुर्जनों का काम है बकवास करना, त्यों साधक का काम है दृढ़ता के साथ आगे कदम बढ़ाने का। हाथी चलत बाजार, कुत्ते भौंकत हजार, नगण्य बातों को ध्यान में लेकर समय बर्बाद नहीं करना और अपना संतुलन भी नहीं बिगाड़ना।

एक वृक्ष के नीचे बुद्ध बैठे थे, एक व्यक्ति को उन का उपदेश मंजुर नहीं था। शन्ध्या के समय वह बुद्ध के पास आया अनाप सनाप गालियाँ दी क्रोध किया। बुद्ध ने कुछ भी जवाब नहीं दिया। वह आदमी हैरान हो गया कि इनको तो कुछ असर ही नहीं हो रहा है। मैंने तो सोचा था कि ये क्रोध करेंगे–गालियाँ देंगे–समत्व खो बैठेंगे, मेरे साथ लड़ेंगे और मैं इनको पीट दूँगा, पर ऐसा नहीं हुआ। उसने कहा मैंने आपको इतनी गंदी गालियाँ दी पर आप तो कुछ बोले ही नहीं। बुद्ध ने कहा समझलो तुम बाजार से गुजर रहे हो, बाजार में व्यापारी लोग वस्तु–चीज खरीदने के लिए कहते है अगर खरीदोगे नहीं तो किसकी कही जाएगी? उसने कहा व्यापारी की, बुद्ध ने कहा बस तुमने

For Private And Personal Use Only

भी यही किया। तुम्हारी गालियों की मुझे जरूरत नहीं थी इसलिए मैंने नहीं ली, तो गालियाँ भी तुम्हारे पास ही रही। तब फिर मुझे गुस्सा करने की क्या आवश्यकता है? वह नतमस्तक हो गया।

आलापैर्दुर्जनस्य न द्वेष्यम् – का यही अर्थ है कि दुर्जन के बकवास से क्रोध नहीं करना। एक बार कितनेक दरबारियों ने अकबर से कहा महाराज आजकल बिरबल को ज्योतिष का रंग चढ़ा है। वो सबको कहते फिरते है कि मंत्रों के द्वारा/जरिए मैं कुछ भी कर सकता हूँ। दूसरे दरबारी ने महाराज को कहा, महाराज उनके इस शोख के कारण आजकल दरबार के काम में रस भी नहीं लेते। अकबर बोले, कोई बात नहीं। आज ही उनकी परीक्षा हो जाय। राजा ने हाथ की अंगूठी निकालकर दरबारी को देते हुए कहा कि इसे छिपा दो। बिरबल आया तब राजा अकबर ने उतरा हुआ चेहरा बना कर कहा कि, बिरबल मेरी अंगूठी कहीं खो गई है। सुना है कि तुम्हें ज्योतिष विद्या का अच्छा ज्ञान है। अपने ज्ञान से बताओ कि मेरी अंगूठी कहाँ है? बिरबल ने तिर्छी नजर से दरबारियों को देखा। उनकी समझ में आ गया कि इन लोगों ने ही महाराज के कान भरे है। थोड़ी देर सोचकर बिरबल ने कागज में सीधी और तिर्छी लाईन खींची। फिर अकबर से कहा महाराज अब इसके उपर हाथ रखिये। अंगूठी जहाँ भी होगी वहाँ से आपकी अंगूली में आ जाएगी। राजा ने यंत्र पर हाथ रख दिया। तब बिरबल हाथ में चावल के दाने लेकर दरबारियों की तरफ फैंकने लगा। कहीं सचमुच ही अंगूठी महाराज के हाथ में नहीं पहूँच जाय यूं सोचकर वह दरबारी अपनी जेब पर जोर से हाथ दबाने लगा। बिरबल ने तिरछी नजर से देख लिया। बोला, महाराज! अंगूठी तो मिल गई है परन्तु किसी दरबारी ने चूस्त रीती से पकड़ रखी है। अकबर बादशाह बिरबल का संकेत समझ गए और खिलखिलाकर हँसने लगे। उन्होंने बिरबल को अंगूठी भेंट स्वरूप दे दी। कान भरने वाले उन दरबारियों के चेहरे उतर गये।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

7

त्यक्त्वा च पराशा

"अन्य की आशा नहीं रखनी"

हम बड़भागी है कि हमें ये कीमति जन्म प्राप्त हुआ है। ऐसा कीमति जन्म पाने के बाद अपनी इच्छाओं और आशाओं पर नियंत्रण करना चाहिए। अगर ऐसा होगा तो यह जन्म उन लोगों के लिए सुखद और शानदार बन जाता है। और अगर नियंत्रण नहीं कर पाएंगे तो दुःखद और बोझ रूप बन जायेगा, आज अगर हम दुःखी है तो अनेक प्रकार की बड़ी–बड़ी आशाओं के कारण ही दुःखी है। बेटा मैं जैसा कहूं वेसा ही करे, मैं जो काम कहूं वही करे, मुझे सम्मान दे, परन्तु ये आशाएँ पूरी नहीं हो पाती है। इधर बेटे की भी इसी प्रकार की अपेक्षाएं रहती हैं। पत्नी से पति आशा करता है कि मैं जब घर लौटू, पत्नी मुझे प्रेम से बुलाएं खिलाएं और पिलाएं। इधर पत्नी ढेर सारी शिकायतें लेकर तैयार बैठती है। यूँ एक दूसरे की अपेक्षाएं पूरी नहीं होती इसलिए एक दूजे पर बिगड़ते रहते हैं। सास को बहू से और बहू को सास से ऐसी ही आशाएं बंधी रहती है परन्तु आशानुरूप नहीं होता इस कारण से वे दोनों ही एक दूसरे से उखड़ी–उखडी सी रहती है। ढब्बू अपनी पत्नी से कह रहा था एक दिन, गुलजान शादी के समय तुमने तो यह वचन दिया था कि तुम मेरा सम्मान करोगी, मुझे प्रेम करोगी, और सेवा भी। पर अब तुम्हे क्या हो गया है कि सदा चुड़ैल की तरह पेश आती हो? गुलजान ने कहा : नाशमुए, तुझमें इतनी भी अक्ल नहीं की कुछ समझ सको! उस वक्त क्या इतने लोगों के सामने तुमसे विवाद करती? वह दुष्ट ब्राह्मण पंड़ित कह रहा था कि प्रेम करोगी, सेवा करोगी, तो उस वक्त क्या नहीं कहती? कह देती कि नहीं? अब एकान्त में जो सत्य है, वही प्रगट होगा वहाँ भीड़–भाड़ में तो मैने सब बातों में हा भर दिया था। अपना जीवन अनेकों की सहायता से टीका हुआ है। हमारे लिए पृथ्वी, पानी, वनस्पति, वायु, अग्नि इत्यादि सतत जीवन का बलिदान देते रहते हैं। एक दिन भी अगर ये हड़ताल पर उतर आये तो हमारा जीवन समाप्त

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हो जाएगा। भाई–बहन, पोता–पोती, माता–पिता, दादा–दादी, चाचा–चाची, पुत्र–पुत्री, कुटुम्ब परिवार, समाज, स्कूल, घर वगैरह भी निरन्तर मदद करते रहते है। कइयों की मदद से जी रहे आदमी को यह कहना कि दूसरे की आशा रखनी नहीं। पर की आशा, सदा निराशा, बड़ा बेहुदा लगता है। अन्य की सहायता से जीवन टीका हुआ है। यह अलग बात है और किसी की आशा अपेक्षा रखकर बैठे रहना अलग बात है। पर की आशा जितनी कम उतना सुख अधिक और पर की आशा जितनी ज्यादा उतना दुःख अधिक। जो आशा का दास है, वह विश्व का गुलाम है। जिसने आशा पर विजय प्राप्त कर ली है, उसने समस्त विश्व पर विजय प्राप्त कर ली है। यदि मन आशाओं कामनाओं से भरा हो तो महान ऐश्वर्यशाली इन्द्र और ऋद्धि से सम्पन्न चक्रवर्ती भी सुखी नहीं है और तृष्णाओं से मुक्त बन गए हो तो पास में कुछ भी बाह्य सम्पत्ति न होने पर भी व्यक्ति परम सुख की अनुभूति कर सकता है। इन्द्र–चक्रवर्ती और राजा के चित्त में हमेशा अनेक कार्यो की चिंता बनी रहती है। वह शत्रु आदि के भय से व्याकुल होते है। धन कुबेर भी सुखी नहीं है, क्योंकि वह भी अपने इन्द्र के अधीन परतन्त्र होता है, देवों को वश में रखने वाला इन्द्र भी सुखी नहीं है, क्योंकि वह विषयातुर रहता है। विषयों में रागादि के कारण उसका सहज सुख नष्ट हो जाता है। इन कारणों से आशा रहित जीवन ही सुखी है, ऐसा सिद्ध होता है। लखनौ के नवाब वाजिद अलीशाह को सुख समृद्धि की कमी नहीं थी, धन दौलत सामग्रियों के ढ़ेर थे, और वे बड़े शौकीन थे। इत्तर का तो उन्हें गजब का शोख था। इतना अधिक शोख था कि अपने घोड़े की पूंछ में भी इत्तर लगाते थे। एक दिन समाचार मिले और खतरे की घंटी भी बजने लगी कि अंग्रेजों ने शहर को चारों तरफ से घेर लिया है। जल्द से जल्द गुप्त मार्ग से भाग जाओ। वाजिद अलीशाह भागने की जल्दि–जल्दि तैयारी करने लगा। उसे हर रोज महबूब नामक नौकर मोजड़ी पहनाया करता था। उसने मेहबूब को आवाज दी महेबूब....महेबूब........ महेबूब.........मुझे बाहर जाना है मोजडी पहना दे। परन्तु वहाँ मेहबूब तो था नहीं क्योंकि वह तो स्वबचाव के लिए कभी

For Private And Personal Use Only

का भाग गया था। इस तरफ वाजिदअली महेबूब ...... महेबूब ....महेबूब पुकारता रहा, चिल्लाता रहा और उतने में ही वहाँ अंग्रेज आ पहुँचे और उनके हाथ पेर में बेडियाँ डालकर बंदी बना दिया। दूसरे की अपेक्षा भारी पड़ गई। इसलिए शास्त्रकार कहते हैं। "**अविक्खा हु अणाणंदे**" अपेक्षा यानि आनंद का घटना। कोई मेरी प्रशंसा करे तो अच्छा! कोई मेरा काम कर दे तो अच्छा! काई मेरे सानुकूल हो जाए तो अच्छा! कोई मेरी बात मान ले तो अच्छा! कोई मेरा हाथ पकड़कर आगे बढ़ा दे तो अच्छा! ऐसी कई प्रकार की इच्छाएँ/अपेक्षाएँ अपने मन के आंगन में हमेशा उछल-कुद किया करती है। जब ये अपेक्षाएँ पूरी नहीं हो पाती तब दुःखी कर जाती है। ऐसा तो होना ही होना है। सारी की सारी अपेक्षाएँ किसकी पूरी हुई है? अगर आप स्वाधीन शांति को चाहते है तो दूसरों से किसी प्रकार की अपेक्षा मत रखिये। जो आदमी आत्मनिर्भर है, अपने कर्तव्यों के प्रति पूर्ण सजग है। दूसरे के मान-सम्मान की मीठे मधुर शब्दों की आशा नहीं रखता है वहीं व्यक्ति मस्ती से जी सकता है। जीवन में जब अहंकार आता है तब व्यक्ति के जीवन में अनेक अपेक्षाएँ जन्म ले लेती है। अपेक्षाएं और आशाएं व्यक्ति को कमजोर बनाती है। अपने आत्मबल पर कुठाराघात करती है। अतः सदैव निर्पेक्ष आशारहित जीवन जीए।' गीता में ठीक ही कहा है- "**कर्मण्येवाधिकारस्ते**" कर्म करने में ही तुम्हारा अधिकार हैं, फल की अपेक्षा मत रखो। महामहोपाध्याय श्री यशोविजयजी म. कहते है। "**परस्पृहा महादुःखं निःस्पृहत्वं महासुखम्**"दूसरे की आशा महादुःख का कारण बनती है और निस्पृहा महासुख का कारण बनती है। हमारी कामनाएँ बहुत अधिक है। कामनाएँ हमको नचा रही है। अधिकतर हम इसी कारण से चिंतित रहते है। एक कामना पूरी होते ही दूसरी पैदा हो जाती है, उन कामनाओं के गुलाम बनकर हम जिदंगी पूरी कर देते हैं। क्योंकि कामनाओं के चक्रजाल में हम फँसते ही जाते है फँसते ही जाते है उससे निकल नहीं पाते है। मन में अनेक कामनाएं लिए ही हम दफन हो जाते हैं, व्यक्ति जर्जरित होता है कामनाएं नही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यक्ति मरता है कामनाएँ नहीं मरती। हर आदमी आशाओं की गठरी अपने शिर पर उठाकर फिर रहा है। हम सब ऐसा मानते है कि जैस जैसे सुख की सामग्री बढ़ती है वैसे वैसे सुख भी बढ़ता है। इस भ्रम में समग्र संसार फंसा हुआ है। परन्तु सच तो ये है कि जैसे जैसे सामग्री बढ़ती है वैसे–वैसे व्यक्ति की अपेक्षाएँ भी बढ़ती जाती है और ये अपेक्षाएँ ही दुःख लाती है। टी.वी., फ्रीज, फोन, फेक्स, फ़ियाट, फ्लाइट आपको सुख के साधन लगते है। सचमुच/वास्तव में तो ये दुःख के कारण है। फियाट या फ्लाईट में बैठने को मिल जाय तो आप आनंदित हो जाते हो, फ्रीज मिल जाय तो ठंठा–ठंठा और कूल–कूल पानी गटा गट पी जाते हो। टी.वी. देखने को मिल जाय तो कुर्सी से चीपक कर बैठ जाते हो। परन्तु अगर टी.वी. या फियाट बिगड जाय तो उसी समय अपना सुख भाप बन कर उड़ जाता है। ये कैसा सुख? टी.वी., फोन, फियाट के हाथ में अपना सुख? हम इन्सान है या कथपुतली? फेन, फोन जैसे जड़ भी हम को नचा दे? सुखी दुःखी बना दे? तो फिर अपने हाथ में बचा ही क्या? सामग्रियों से सुख बढ़ता है, ये बिलकुल ही गलत मान्यता है। भौतिक आनंद भी कैसे बढ़ता है? सामग्री बढ़ाने से या घटाने से? देवलोक में रहे देव उच्च–उच्चतम कक्षा के देव अधिक सुखी किस प्रकार से? उपर, उपर वाले देवों के पास अधिक से अधिक सामग्री है, ऐसा नहीं है। परन्तु ज्युं–ज्युं उपर जाओगे त्युं–त्युं सामग्री कम होती जाती है। सर्वमान्य तत्त्वार्थ सूत्र के चौथे अध्याय में उमास्वातिजी महाराज कह रहे हैं। **''गति शरीर-परिग्रहाऽभिमानतो हीनाः''** गति, शरीर, परिग्रह और अभिमान ये चारों ही एक से बारह देवलोक में क्रमशः घटते जाते हैं। नीचे के देवलोक के देवों की गति तीव्र होती है आगे उपर बढ़ते बढ़ते अनुत्तर विमान में तो गति लगभग शून्य हो जाती है। 33. सागरोपम के आयुष्य में वे देव मात्र एक ही बार करवट बदलते है। यही उनकी गति और यही उनका हलन .चलन! तिर्च्छालोक/मनुष्य लोक में आना तो दूर रहा....... विमान की शय्या से नीचे उतरने का भी काम नहीं! फिर भी सुख की मात्रा सबसे ज्यादा! प्रथम देवलोक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में शरीर 7 हाथ का होता है। कम होते होते अनुत्तर विमान में मात्र एक हाथ का होता है। नीचे के देवलोक के देवों के पास परिग्रह ज्यादा होता है, उस सामग्री के उपर मूर्च्छा भी बहुत होती है। जबकि उपर क्रमशः कम होते होते अनुत्तर में परिग्रह एकदम कम हो जाता है। फिर भी सुख की मात्रा बढ़ती जाती है। नीचे के देवों में अहंकार बहुत ही होता है, इस कारण से झगड़े इर्ष्यादि का प्रमाण भी ज्यादा ही होता है। जब कि उपर के देवों में अहंकार घटता जाता है। अंहकार घटने से इर्ष्या–कलह इत्यादि दोष भी कम होते जाते हैं। क्योंकि इर्ष्या, कलह, झगड़े का जन्मस्थल अहंकार ही है। अहंकार नामशेष हो जाय तो इर्ष्या काहेकी? और झगड़ा काहेका? अहंकार ही सभी पापों का बाप है। **''पाप मूल अभिमान''** आनंदघनजी महाराज के मन में एक दिन लग गया। वे जब गोचरी निकले तब उनके मुँह से ये शब्द फुट पडे कि **भटकत द्वार-द्वार औरन के कूकर आशाधारी।** प्रभु! ये तेरा दास, साधु रोटी के टुक्कड़ के लिए कुत्ते की तरह कब तक किसी और की आशा लिए दिन के बारह बजते ही घर–घर धर्मलाभ धर्मलाभ कहता हुआ घूमता फिरेगा। प्रभु! तुम ही मुझे इस दसा से विमुक्त करो। निःस्पृहत्त्वं, महा–सुखं, भीख वही मांगता है जो भिखारी है। पेट की भूख तो सीमित है परन्तु मन की भूख की कोई सीमा नहीं हैं।

एक फकीर का किसी सम्राट के साथ घनिष्ट संबंध था। फकीर हकिकत में मस्त मौला फकीर था। छोटी सी कुटिया में भी वह मस्ती से निजानंद में रहता था। एक दिन किसी यार दोस्त ने फकीर को आग्रह करते हुए कहा, साहब! आपकी सम्राट तक पहुँच है तो कम से कम अपने रहने के लिए एक पक्का मकान तो बनवा दो। फकीर ने कहा, आज तक मैंने सम्राट से कभी कुछ मांगा नहीं हैं। मुझे तो खुदा ने जो दिया है काफी है, उसी में संतोष है। मित्र ने कहा, यार! तेरी बात तो ठीक है, परंतु जब सम्राट से तुम्हारा इतना अधिक घनिष्ट संबंध है तो कम से कम इतना कार्य तो तुम्हें करवाना ही चाहिए। फकीर बोला अच्छा तुम्हारा जब इतना अग्रह है तो मैं कल सम्राट के पास जाऊंगा। दूसरे ही दिन फकीर मध्यान्ह के समय सम्राट के महल की

For Private And Personal Use Only

तरफ चला। उस वक्त सम्राट नमाज पढ़ रहा था। नमाज की समाप्ति के साथ ही खुदा से बंदगी करते हुए कुछ याचना कर रहा था। वह बोल रहा था, हे खुदा! तेरी मेहरबानी से मुझे दिल्ली का तख्ता मिला अब आप मुझ पर जरा और कृपा किजिये ताकि पंजाब का साम्राज्य भी मुझे मिल जाय। फकिर ने ज्योंही सम्राट की वह प्रार्थना सुनी, उसी समय वह दौड़कर अपनी कुटिया में लौट आया। सम्राट को जब इस बात का पता चला कि फकीर यहाँ आया था और मुझे मिले बिना ही चला गया..... यह मालुम होते ही सम्राट ने फकीर को अपने महल में बुलवाया। फकीर के आने पर सम्राट ने पूछा, आप मेरे महल में आये थे, फिर भागे क्यों? फकीर ने कहा मैं रास्ता भूल गया था। कैसे? मैं आपके पास कुछ याचना करने के लिए आया था, परंतु आपकी खुदा की बंदगी सुनने पर मुझे पता चला कि आप भी भिखारी ही हो.... इसीलिए मैं यहां से वापस चला गया था। फकीर ने बात को ओर स्पष्ट करते हुए कहा, अपार संपत्ति और विशाल साम्राज्य मिलने के बाद भी जिसकी भूख शांत नही होती है, वह भिखारी नही तो और क्या है? फकीर की इस बात को सुनकर सम्राट स्तब्ध हो गया। सचमुच जिसकी स्पृहा आकाश के समान विराट है, ऐसा व्यक्ति चक्रवर्ती के साम्राज्य के बीच रहकर भी दुःखी है, जबकि जिसके हृदय में निस्पृहता रही हुई है, वह अल्प साधनों के बीच भी अत्यन्त सुखी है। सारांश यही है कि जिसकी स्पृहा अधिक है, वह दुःखी है और जिसने अपनी स्पृहाओं पर नियंत्रण पा लिया है, वह संयोग के बीच भी अत्यन्त सुखी है। दूसरों की आशा अपेक्षाओं को जैसे-जैसे छोड़ते जाएँगे वैसे-वैसे अपने पास सुख बढ़ता जाएगा। हमारा कोई मालिक न रहे! हम खुद ही खुद के मालिक! बाहरी सामग्रियों की अपेक्षाओं आशाओं को घटाने के लिए आंतरिक वृत्तियों पर नियंत्रण लाना जरूरी है। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि ऐसी वृत्तियाँ है जो मनुष्य को वस्तुओं या व्यक्तियों का गुलाम बनाये रखती है। पर की आशाओं को हटाने के लिए आंतरिक वृत्तियों पर काबू जरूरी है। जो मनुष्य आंतरिक वृत्तियों का गुलाम है वह बाह्य सामग्रियों का भी गुलाम रहेगा और गुलामी के

For Private And Personal Use Only

साथ दुःख जुड़ा हुआ हैं जहाँ–जहाँ गुलामी वहाँ–वहाँ दुःख! जहां–जहां स्वतंत्रता वहाँ सुख। संसार में सबसे ज्यादा सुखी साधु कहे गये है। भगवती सूत्र में कहा है। एक वर्ष का संयम पर्यायवाला साधु अनुत्तर विमान के देव से भी ज्यादा सुखानुभूति कर सकता है क्योंकि साधु की अपेक्षाएँ सबसे कम होती है। संसारी जीव दुःखी है, क्योंकि उन्हें स्त्री, मकान, दुकान वगैरह सैकड़ों प्रकार की अपेक्षाएँ होती है, जबकि साधु को इनमें से किसी प्रकार की अपेक्षा होती नहीं है (साधु जीवन में अगर अपेक्षाएँ बढ़ेगी तो दुःख बढ़ेगा ही) साधु और श्रावक को धीरे–धीरे मन की वृत्तियों का निरीक्षण करके सभी प्रकार की आशाओं का त्याग करना होता हैं।

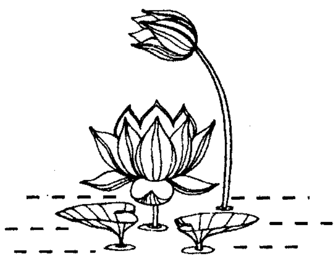

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

8

पाशा इव संगमा ज्ञेयाः

"संग मात्र बंधन जानना (समजना)"

सुख शब्द में मात्र दो अक्षर हैं, किन्तु उस छोटे से शब्द ने कीट–पतंगे से लेकर विशालकाय प्राणी हाथी तक को अपनी ओर आकर्षित कर लिया हैं। सुख के आस्वादन की बात तो दूर रही, उसकी प्राप्ति की आशा भी प्रत्येक प्राणी को उत्साहित कर जाती है। भले ही चाहे वह सुख, मृग–जल रूप हो, अथवा सुखाभास रूप क्यों न हो! छोटे जन्तु से लेकर बड़े–बड़े जीव मात्र की इच्छा सुख प्राप्त करने की और दुःख से छुटने की हैं। परन्तु ध्यान रखना केवल इच्छा मात्र से कार्य सिद्धि नहीं हो जाती है। कार्य सिद्धि के लिए / वास्ते तद् योग्य कारण सामग्री की आवश्यकता / जरूरत भी रहती ही है। एक भी कारण के अभाव में कार्य की समाप्ति संभव नहीं है। बेचारी चींटी! थी कि मधुर खुश्बु से आकर्षित होकर उस ओर भागती है दिल में एक ही तमन्ना है, घी रूप सुख को पाने की और उसकी यह तमन्ना आकाश में बिजली की भाँती पल भर में ही लुप्त हो जाती है। वाह रे! जिस से सुख प्राप्त करने की आशा थी वो ही घी जीवघातक सिद्ध हो गया। चींटी को घी से सुख मिलना तो दूर रहा बल्कि इस घी ने ही उसके प्राण ले लिये। सत्य दृष्टि से सोचेंगे तो मालुम होगा कि चींटी के लिए घी का संग सुख रूप नहीं, बल्कि दुःख रूप ही था। उस भँवरे की ओर तो जरा नजर करो। कमल की सुवास में आसक्त होकर उसी में लगा रहा । ज्यूं ही सूरज डूबा कमल की पंखुडियाँ भी बंद हो गयी। सख्त लकडी में छेद करने वाला भँवरा सुकोमल पंखुडियों को छेद न सका, भेद न सका और अंत में उसे मृत्यु को भेटना पडा। बेचारे उस भोले भाले हिरण को कहां पता होता है कि उसे जो सुरीला मधुर कर्णप्रिय संगीत सुनाई पड़ रहा है वह सुखद नहीं अपितु दुःखद ही है। वह संगीत नहीं अपितु मौत की घंटियाँ ही है। हकिकत में संग के सुख की लालिमा, दुःख की कालिमा लाने वाली होती है। वे अज्ञानि पशु भूल कर बैठते हैं इसमें आश्चर्य नहीं है परन्तु आश्चर्य तो यह है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कि अपने आपको बुद्धिमान समझने वाला मनुष्य भी संग के सुखाभास रूप चंगुल में फँस जाता है। सुख का चोला पहनकर जड़ और चेतन का संग मानव को भ्रम में ड़ाल देता है, तो कभी लिप्सा की ओढ़नी ओढ़कर उस मनुष्य को अपने चंगुल में फँसा लेता है। स्पष्ट शब्दों में सुख की व्याख्या करते हुए सुत्रकार महर्षि शब्दों में संक्षिप्त परन्तु अर्थ से अतीगम्भीर और सचोट सूत्र बता रहे हैं–**'सर्वसंग परित्यागः सुखम्'** । जहाँ संग वहां रंग और जहाँ रंग वहाँ आत्मा तंग बनती है। अगर आप सुख चाहते हैं तो एक उपाय है सुख के अन्य सभी माध्यमों को हटा दो और खुद ही माध्यम बन जाओ। याद रखो! जब तक सुख पाने के लिए एक अथवा अनेक वस्तुओं को माध्यम बनाते जाएंगे, तब तक वास्तविक सुख हमसे मीलों दूर रहेगा। और जब अन्य समस्त माध्यमों को हटाकर स्वयं (आत्मा) को माध्यम बना देंगे उसी दिन आत्मा को सुख का सागर मिल जाएगा। मुझे याद आती है, वह छोटी सी किंतु बडी ही मार्मिक कहानी।

उस राजा के पास अपार समृद्धि थी। भोग वैभव मिलासिता के साधनों की कोई कमी नहीं थी। सत्ता, सुंदरी और सन्मित्रों क़ा त्रिवेणी संगम ही उसका जीवन था। सुख की कोई कमी नहीं थी और दुःख तो जरा भी नहीं था। राजा अपने शयन खंड में शय्या पर लेटे सोये थे, अचानक मध्यरात्रि में उनकी नींद उड़ गयी। रत्नों के प्रकाश से उनका शयन खंड जगमगा रहा था। सर्वत्र सन्नाटा था बिलकुल शान्ति छायी थी। अचानक राजा को अपनी समृद्धि का स्मरण हो आया और उस समृद्धि को उसने काव्य रूप देने का निर्णय कर लिया। एक और दिवाल पर एक ब्लेक बोर्ड था उसने हाथ में चौक ली और पंक्तियाँ लिखने लगा–

चेतोहरा युवतयः स्वजनानुकूलाः
सद्बान्धवाः प्रणयनम्रगिरश्च भृत्याः।
गर्जन्ति दन्तिनिवहस्तरलास्तुरङ्गाः,

काव्य के चौथे पद को पूरा करने लिए राजा प्रयास कर रहे थे परन्तु

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वह चौथा पद बन नहीं पा रहा था। राजा सोचने लगा। अहो! मेरे पास पारावर संपत्ति हैं, कितनी मनोहर, खुबसुरत, रूपवती और कलाकुशल मेरी स्त्रियाँ हैं? रूपवान स्त्रियाँ तो मुझे ही मिली है। और मेरा बन्धु वर्ग भी कितना सज्जन है, सदैव मेरा हित ही चाहते हैं। सेवकों/परिचायकों की तो क्या बात कहूं? वे तो मेरे इशारे के साथ दौड़कर सेवा में तत्पर रहते हैं। और साथ ही मेरे पास रण संग्राम में जोरदार गर्जना करने वाले हाथी भी है और दूर सुदूर तीव्रगति से गमनागमन के लिए सुयोग्य घोड़े भी हैं। आह! इन्द्र और चक्रवर्ती को भी मेरी समृद्धि देखकर इर्ष्या होती होगी? वह राजा अपनी समद्धि को काव्य रूप दे रहे थे, परन्तु राजा को उस काव्य का चौथा पद सूझ नहीं रहा था। वे सोचते हुए हि पलंग पर लेट गए। उसी वक्त एक चोर राजा के शयन खंड में चोरी करने के लिए आ पहुँचा था। वह आदमी था तो विद्वान और सज्जन किन्तु परिस्थिति वश वह चोरी करने के लिए बाध्य हो गया था। उसने भी ब्लेक–बोर्ड पर काव्य के तीन पद देखे तीन पदों को पढ़ते ही उसे काव्य के चौथे पद की स्कुरणा हो आई और राजा की नजर चुराकर उसने चौथा और अंतिम पद लिख दिया **संमिलने नयनयोर्नही किञ्चिदस्ति**। और वह वहाँ से चला गया। राजा तो निद्राधीन हो गये। प्रातः काल होते ही वे निद्रा से जागे और उन्होंने दिवार पर नजर डाली। अरे! यह क्या? काव्य के चौथे पद की पूर्ति किसने की? चौथा पद पढ़कर राजा को एक झटका सा लगा। चौथे पद में लिखा था दोनों आंखें बंद हो जाने पर कुछ भी नहीं है। इस पद ने तो मुझे सम्यग् बोध करा दिया, मैं तो मान रहा था यह मेरा.... यह मेरा। किन्तु हकिकत में तो मेरा नही हैं। आंख खुली है वहां तक मेरा है और आंख बंद होते ही मेरा कुछ नहीं है। राजा को सत्य की प्रतीति हो गई। दूसरे दिन राजा ने ढिंढ़ोरा पिटाया। बीती रात में मेरे राज महल में कौन आया था? और अधूरे काव्य की पदपूर्ति किस ने की? ढ़िंढ़ोरा सुनकर वह सज्जन चोर राजा के सामने उपस्थित हुआ और उसने सच्ची बात बता दी। राजा को दुनिया का सत्य बोध हो गया, उसने सोचा यह क्या? मैं इन साधनों के संग सुख के सपने संजोए था, परन्तु अफसोस है कि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेरा और उनका नाता सदैव स्थायी नहीं रह सकता । या तो मुझे इन्हें छोड़कर जाना पड़ेगा या वे मुझे छोड़ देंगे। दुनिया में संग के जीतने भी साधन सामग्रियाँ है वे सब धोखेबाज हैं। राजा ने संसार के संग का त्यागकर दिया ओर वह निःसंग बन गया, उन्होने खुद को ही सुख का माध्यम बना लिया और फलस्वरूप आत्मा के अक्षय सुख के स्वामी बन गये। अपूर्ण ज्ञान अथवा अज्ञान से मानव यह कल्पना कर लेता है कि मुझे धन का संग हो जाय तो मैं सुखी होऊं, मुझे पुत्र का संयोग हो जाय तो मैं सुखी हो जाऊँ, मुझे रूपवती पत्नी का संग मिल जाय तो मैं सुखी हो जाऊँ। यशोविजयजी कहते हैं कि मानव की ये सब बातें मात्र कल्पना ही है। वास्तव में ज्यों ज्यों भौतिक वस्तु समृद्धि का संग बढ़ता है त्यों त्यों मानव दुःख के गर्त मैं अधिक से अधिक डूबता जाता हैं। वह संग ही उसे तंग कर देता है। मकड़ी का जाला उसके लिए ही बंधन रूप बन जाता है दुनिया में सुख के जो साधन हैं। इस सत्य को पहचान लो। संग में दुःख है– निःसंग मे सुख है। हमें संग–संबंध बहुत अच्छे लगते हैं। ये अच्छा लगना ही आशक्ति है बंधन हे। श्लेष्म में फंसी मक्खी की तरह आसक्त इन्सान स्वतंत्रता गँवा देता है। परतंत्रता के साथ ही सुख भी भाग छुटता है। कोई मुसाफिर गाडी में घर नहीं बनाता। अच्छी जगह मिलने पर भी वहाँ आसक्त नहीं होता। परन्तु यहाँ हम यह भूल जाते है। पचीस–पचास वर्ष की जिदंगी में कितनी ही जगह पर आसक्त हो जाय करते हैं। यात्रा के स्थलों को ही मंजिल समझ लिया करते हैं। जन्मे तब हम अकेले थे, मरेंगे तब अकेल रहेंगे। स्वर्ग नरक में पाप पुण्य के फल अकेले भोगेंगे। जन्में अकेले, मरेंगे तब भी अकेले! बीच के जीवन में अनेकों से संपर्क! अनेकों से संग! बस में चड़े तब अकेले, बस स्टेण्ड़ पर उतरेंगे तब भी अकेले परन्तु बीच यात्रा में साथ रहना। संयोग यह जीवन भी यात्रा से कम नहीं है। मृत्यु का स्टेशन आते ही हमें जीवन गाड़ी से उतर जाना पडेगा। बाह्रय भौतिक पदार्थों का ममत्व बंधन जितना अधिक होता है। मृत्यु के समय उतनी ही अधिक वेदना और पीडा की अनुभूति होती है। बाह्रय पदार्थों से ज्यों–ज्यों मन का अलगाव बढ़ता जाता है। त्यों–त्यों आत्म

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रसन्नता और आत्मानंद की मस्ती दृढ़ होती जाती है। वास्तव में ममत्व ही गाढ़ बंधन है और उसके कारण ही दुन्यवी पदार्थों में हर्ष शोक का अनुभव होता है। ममत्व के कारण ही उस वस्तु के विनाश अथवा वियोग में मनः संताप का अनुभव करती है। स्मरण रहें संसार के सभी पारिवारिक/कौटुम्बिक संबंध अस्थायी है। उन संबंधों को नित्य मानकर चलना, यह हमारी गंभीर भूल है। पंचसूत्र में कहा है **संजोगो वियोगो कारणं** संयोग वियोग का कारण हैं। जहाँ–जहाँ संयोग है वहाँ–वहाँ वियोग है। संसार के सभी संयोग संयोगिक है परन्तु अनेकों के साथ रहते–रहते हम भूल ही गये हैं कि मैं अकेला हूँ। नमिरार्षि को भूली हुई इस याद को एक प्रसंग ने याद दिलाया। बात प्रसंग यूं हुआ था कि छह छह मास बीतने पर भी अनेक–अनेक उपचार करने पर भी दाह ज्वर कम नहीं हो रहा था। उनके लेप के लिए रानियाँ चंदन घीस रही थी। इससे कंगन की आवाज आ रही थी। परन्तु नमिराजर्षि वेदना से इतने संतप्त थे कि उन्हें मधुर आवाज भी भयंकर और कर्कश लगती थी। अप्रिय लगती थी वे चिल्ला उठे यह कर्कश आवाज अभी ही बंद हो जानी चाहिए। उनकी आज्ञा मतलब आज्ञा। आवाज को बन्द होना ही पडेगा। सन्नाटा छा गया तब राजा ने पूछा अब आवाज क्यों नहीं आ रही हैं? क्या तुमने चंदन घिसना ही बंद कर दिया? राजन! चंदन घिस रही रानियों ने अब सौभाग्य सूचक एक–एक कंगन पहने है, दो–दो या इससे अधिक कंगन हो तो आवाज आती है। एक से आवाज कैसे आये? इस उत्तर से नमिराजर्षि का मन दूसरे ही पथ पर चला गया। अंदर विचार क्रांति का आन्दोलन पैदा हुआ। एक में शान्ति होती है, अद्वैत में आनंद होता है। दो होते ही, द्वैत होते ही, संग होते ही सब बिगड़ता है तो मुझे भी असंग की राह पर ही जाना चाहिए। दाह चला जाय तो प्रभु! मुझे तेरी राह पर चलना है। दाह ज्वर मिट गया और नमिराजर्षि ने असंग की राह पकड़ ली । अकेले ही जन्में हैं और अकेले ही मर जाना है फिर क्युं दूसरे की मगजमारी में जाना? हम भले! हमारा काम भला। ऐसा सोचकर यहाँ एकल हो जाने की बात नहीं हैं यहाँ हमें सबके साथ रहना है। इच्छा हो या

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इच्छा न हो, परन्तु सब को साथ ही जीना पड़ेगा। एकत्व भावना से हमें यही सिखना है कि हम ही एकदम चीपक न जाय....कहीं आशक्त न बन जाय, रागी न बन जाय, रागी बनेंगे तो द्वेषी बनना ही पड़ेगा क्योंकि राग के पीछे ही द्वेष छीपा है। राग टूटता है तो द्वेष होता है। पसंद–नापसंद बिना की असंग की साधना एक बहुत बड़ी कला है। जो प्रभु कृपा के बिना मिलती नही हैं। प्रभु के प्रेम में अगर रस आने लगे, आनंद का अनुभव होने लगे तो दूसरी जगह संग करने का मन नहीं होगा। असंग में सुख ऐसा सोचकर या सुनकर आप देव–गुरू शासन आदि को बंधन/संग समझकर उसका त्याग मत कर देना। कर्म के बंधन से छुटने के लिए धर्मशासन का बंधन अत्यन्त जरूरी है। वर्ना शासनबंधन से छुटकर मोह बंधन स्वीकारना पड़ेगा। हकिकत में तो देवगरू या शास्त्र को बंधन रूप मानना ही मोह का बंधन है। हीरे को काटने के लिए हीरा ही चाहिए। लोहे को काटने के लिए लोहा ही चाहिए, वैसे संसार बंधन कांटने के लिए देवगुरू शास्त्र का बंधन स्वीकारना चाहिए। देवगुरू शास्त्र हमारी आंखों में ऐसा अंजन करते हैं कि हमे असंग में ही रस आने लगता है।

सङ्गः सर्वात्मना त्याज्यः स चेत् त्युक्तं न शक्यते।
सद्भिः सह कर्तव्यः सन्तः सङ्गस्य भेषजम्।

संग सर्वथा त्याज्य है, अगर छोड़ सके वैसा न हो तो संतो के साथ संग करना चाहिए। संत ही संग की औषधि है।

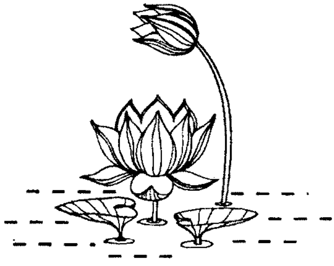

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

9 स्तुत्या स्मयो न कार्यः

"स्वप्रशंसा से अहंकार न करना"

लोग घर मकान बनाते हैं। आठ–दस नक्शों में से एक का चुनाव करते हैं। फिर मकान बनवाना प्रारम्भ करवाते हैं। मकान बन रहा है, पाँच मंजिला मकान बन रहा है। पचीस कमरे बनवाये मकान में। मकान को बढ़ते देखते है और मुस्कुराते हैं। रहने के लिए दो चार कमरे काफी हैं, पर हम पांच मंजिला मकान चाहते है। मन जोड़–तोड़ करवाता है। यहाँ पर यह चीज पसन्द न आयी तो तुड़वा दी। नई जुड़वा दी। हमारे मनोनुकूल मकान बन गया। मकान तो बन चूका, मगर अभी तक इस मकान की कीर्ति चारों तरफ नहीं फैली। मकान तो बन गया, परन्तु मन सन्तुष्ट नहीं हुआ। आदमी सोचता हैं मैंने अपनी जिन्दगी की सारी सम्पत्ति इस मकान के निर्माण में लगा दी, तो इसका फल भी तो मुझे मिलना चाहिए। वह अज्ञानी जीव यह नहीं जानता कि मकान में है क्या? केवल ईंट–चूने, पत्थर का संयोग है। ईंट से ईंट को सजाया, पत्थर से पत्थर को सजाया, बीच में रेत–चूने–सीमेंट का संयोग दिया और मकान बना। इसमें सारी सम्पत्ति खर्च कर डाली और अपनी सम्पत्ति को नष्ट करके इतनी हिंसा करके भी वह बड़े आनन्द में है कि अरे वाह! क्या बंगला बना है। कितना भव्य और शानदार बंगला बना है मेरा। परन्तु जब तक शहर के सभी लोग नही आएंगे तब तक (मकान) बंगले की प्रशंसा कैसे होगी? उस आदमी ने एक तरीका अपनाया। सोचा गृह प्रवेश के दिन एक भोजन समारंभ का आयोजन किया जाए। भोज में शहर के सभी लोग आएँगे। जितने अधिक लोग आएँगे उतने ही लोग मकान की प्रशंसा करेंगे तो इस मकान के माध्यम से मेरी प्रशंसा हो जाएगी। उसने गृह प्रवेश के दिन भोज आयोजन किया। लोग आ गये। प्रशंसा का भूखा वह आदमी आये हुए लोगों को बंगला दिखाने के लिए उपर से नीचे और नीचे से उपर जा रहा है। लोगों से कहता भी जाता है कि क्या तुम लोगों ने ऐसा मकान देखा है? लोग भी कहते हैं कि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सचमुच ऐसा बंगला हमने नहीं देखा। आपने बढ़िया महल जैसा बंगला बनाया है। लोग प्रशंसा करने लगे, भला वे क्यों न करें। यदि प्रशंसा के दो शब्द कहने से भोज का आयोजन होता हो तो लोग प्रतिदिन सबकी प्रशंसा करेंगें। मकान मालिक की काफी प्रशंसा हुई। सब लोग भोजन कर चले गये। रात को थका हारा वह आदमी गद्दी/बिस्तर पर तो लेट गया पर नींद न आयी। प्रशंसा की भूख अभी तक शांत न हुई थी। दूसरे नगरों/शहरों में अभी तक उसकी प्रशंसा की हवा नहीं पहुँच पायी थी। शायद आधी रात तक वह यही सोचता रहा सुबह उठा विचार आया कि किसी ऐसे घुमक्कड़ आदमी को पकड़ लिया जाय, जो पद यात्रा करता हो, गाँव-गाँव जाता हो, क्योकि घुमक्कड़ आदमी जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ-वहाँ अपने अनुभव कहता है। जब वह अपना अनुभव कहेगा तो मेरा नाम अवश्य आएगा। वह आदमी घुमक्कड़ की तलाश में निकल पड़ा। कहीं किसी जगह उसे एक साधु मिल गए। सोचा कि यह बिल्कुल ठीक घुमक्कड़ आदमी है। इस से सस्ता प्रचारक नहीं मिलेगा। दो रोटी से ही काम हो जाएगा। वह साधु के पास गया, कहा-भगवन्! बड़ी कृपा होगी आप यदि मेरे घर आहार के लिए पधारेंगे। साधु तो आहार चर्या के लिए ही निकले थे। उन्होंने सोचा जब निवेदन किया जा रहा है- भक्त आ गया है तो मुझे इनके वहाँ जाना चाहिए। घर पहुँच कर मकान मालिक ने कहा- भगवन्! मेरी एक विनती है। विनती यह है, मैं चाहता हूँ कि आपकी चरणरज इस बंगले (मकान) के हर कमरे में पड़े, तो मेरा बंगला बनाया हुआ सार्थक हो जाएगा, यह बंगला पवित्र हो जाएगा। साधु ने कहा मैं आहार के लिए आया हूँ, तुम्हारे भवन घूमने के लिए नहीं अगर आहार उपलब्ध हो तो मैं ले लूँ, अन्यथा आगे प्रस्थान करूं, परन्तु शेठ ने अत्यधिक आग्रह किया तो साधु ने शेठ की बात मानली और उसका अनुशरण किया। मकान मालिक एक-एक कमरे की प्रशंसा करने लगा। इस कमरे में मैंने कोटा स्टोन लगाया हैं। इस कमरे का संगेमरमर बड़ा चमकीला है। क्या आपने कभी ऐसा मकान देखा है। आखिर दिखाते दिखाते जब बाथरूम में पहुँचे तो उसने बाथरूम की भी प्रशंसा के पुल

For Private And Personal Use Only

खड़े कर दिये। मकान/बंगला मालिक की बातें साधु को बचकानी लगी। उनके चेहरे पर रहस्यभरी मुस्कान उभर आयी। जब मकान मालिक ने उस रहस्यभरी मुस्कान का कारण पूछा तो साधु ने कहा– तुम्हारी आत्म–प्रशंसा कितनी निर्जीव है। तुमने बंगला बनाया, बंगला रहने के लिए आवश्यक है, किन्तु उसके प्रति उन्नत होना भी आवश्यक है? यह सब कुछ हास्यास्पद ही है। आदमी प्रशंसा पाने के लिए कैसे कैसे उपाय करता है। ओर तो ओर साधुओं से प्रशंसा करवाना चाहता था। राज दरबाज में पहुँचें हुए दूसरे राजा ने प्रश्न किया, तुम्हारा राजा कैसा और मैं कैसा? दूत के लिए यह धर्म संकट था। दुविधा पूर्ण प्रश्न था। अपने राजा/स्वामी को बढ़ा–चढ़ाकर बताए तो यह राजा नाराज हो जाएंगे, और जिस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए आया हूँ, वह होगा नहीं। यदि इस राजा की प्रशंसा करूंगा तो मेरे अपने राजा नौकरी से बर्खास्त कर देंगे, लेकिन दूत बुद्धिमान और चतुर था। उसने कहा राजन! क्या ऐसे प्रश्न के लिए कोई स्थान भी है। पूनम के चाँद की तरह सोलह कलाओं से खिले हुए आप कहाँ और दूज के चाँद की तरह क्षीण होने वाले मेरे राजा कहाँ? दूत के उत्तर से राजा फुला न समाया और दूत को पुरस्कार देकर उसका जो कार्य था वह भी पूरा किया। परन्तु यह खबर अपने स्वामी राजा के पास पहुँच गयी। दूत जब स्वामी राजा के पास पहुँचा तो उनके क्रोध का कोई ठीकाना नहीं रहा। नालायक! मेरा नमक खाता है और दूसरों के सामने मुझे हल्का दिखाता है? दूत ने राजा को शांत कर कहा– राजन! मैने तो आपका गौरव ही बढ़ाया हैं। मैंने कहा वह राजा पूनम के चाँद की तरह है, इसका मतलब यह है कि वह अब दिन–ब–दिन घटता/क्षीण होता जाएगा। दूसरी ओर आपको दी दूज के चाँद की उपमा आपकी वृद्धि को सूचित करती है। दूज का चाँद कहकर मैंने आपका नाम बढ़ाया है, प्रशंसा ही की है। कहने की आवश्यकता नहीं कि स्वामी राजा ने भी उसे पुरस्कृत कर शाबाशी दी। आत्म प्रशंसा से खुश होने वाले लोग स्वयं को पूनम के चाँद जैसा समझते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि इन्सान दुनिया की नजरों से चाहे जैसा ही क्यों न हो, अपनी नजरों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में तो वह स्वयं को ही बडा और महान् समझता है। जीव को जैसे खाना सिखाना नहीं पड़ता वैसे स्वप्रशंसा कैसे करनी यह भी सिखाना नहीं पड़ता। छोटे बच्चे को अंक – अक्षर लिखना सिखना पडता है, लेकिन मुझे अंक लिखना आ गया। यह गर्व से कहना सिखना नहीं पड़ता। एक सेनापति ने शहर जीत लेने के बाद अपने सैनिकों से कहा– हमें इस शहर को जीतने के लिए फिर से युद्ध करना होगा, फिर से हमला करना पड़ेगा। सैनिकों ने पूछा क्यों सर? तब सैनापति ने कहा हम युद्ध में शहर जीत रहे हैं। उस दृश्य का फोटु लेना रह गया है। अतः फोटु खिंचने के लिए फिर से युद्ध लडना पड़ेगा। अगर फोटु नहीं लेंगे या फोटु नहीं होंगे तो लोगों को पता कैसे चलेगा कि हमने कितनी मुश्किल और पराक्रम से युद्ध जीता है। सेनापति लोगों को बताने और प्रशंसा पाने के लिए फिर युद्ध करने के लिए तैयार है। कई समारोहों को देखकर ऐसा लगता है कि यह समारोह नहीं अपितु फोटो स्टुडियो है। उपहार देने का कार्य भी खुशी व्यक्त करने के लिए नहीं बल्कि उपहार देते समय का फोटो खिंचवाने के लिए और पोझ ठीक आये इसलिए होता है। तभी तो दो पाँच सैकेंड में दे सकते है उस उपहार को दो–दो मिनट तक हाथ में लेकर खड़े रहते है। उपहार लेने देने के लिए एक तरफ हाथ बढ़ाया जाता है और फोटु में चेहरा ठीक आये इसलिए उस तरफ भी देखते हैं। फिर लोगों को फोटु दिखायेंगे कि मैने ऐसे लोगों को ऐसे उपहार भेंट किये है। मैं कोई छोटा–मोटा साधारण आदमी नहीं हूँ।

एक चित्रकार का किस्सा आता है। सब लोग चित्र की प्रशंसा कर रहे थे। लेकिन पिताजी नहीं कर रहे थे। इससे चित्रकार को गुस्सा आ गया। अगर मेरे उत्कृष्ट चित्र की भी पिताजी प्रशंसा नहीं करते हैं, तो शत्रुतुल्य बाप को मार ही डालना चाहिए। ऐसा सोचकर वह बाप को मारने आया। तभी उसने दरवाजे के पीछे खड़े रहकर पिताजी की प्रशंसा भरी बातें सुनी जिससे क्रोध शांत हुआ और उसने क्षमा मांगी। प्रशंसा के दो शब्द नहीं बोलने मात्र से पिता को भी शत्रु के समान कौन दिखाता हैं? आत्म प्रशंसा की इच्छा ही न।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हमारे शरीर के दो महत्त्वपूर्ण अंग है। एक है पेट और दूसरा है नाक। मनुष्य पेट के लिए पाप करने को तैयार हो जाता है। वहीं नाक के लिए दंभी बनता है। जहाँ पेट आहार संज्ञा का प्रतीक है वहीं नाक आत्मश्लाघा का प्रतीक है। नाम किर्तिप्रतिष्ठा के लिए विवाहादि समारोहों में सेकडों रूपये खर्च कर डालता है। तब मानना पड़ता है कि नाक कितनी किमती है। दिल तो महत्त्वपूर्ण होने पर भी अंदर छिपा है, जबकि नाक सबसे उपर है और बाहर भी है। पापी पेट के लिए कई पाप भी होते है। वैसे (स्वोत्कर्ष) नाक के लिए दंभ बनावट नाटक होते है। जबकि नाक में सेडे के शिवा कुछ भी नहीं है।

एक युवक की सगाई तय करनी थी। युवक ने अपने बहनोई/जीजाजी से कहा : जीजाजी। चलिये मेरे संग। लड़की देखने और भावि ससुर को मुलाकात देने जाना है। पहले से फोन पर बात हो चुकी है। जीजाजी ने युवक/साले को रास्ते में ही समझा दिया था कि वहाँ लड़की के चाचा होंगे– मामा होंगे। कुटुम्ब के लोग होंगे वो लोग प्रश्न पूछेंगे उन प्रश्नों के उत्तर देने में कोई कमी मत रखना खुब मिर्च मसाला डालकर बताना जो कुछ पुछे उससे तीन गुना बढा चढ़ाकर बताकर उत्तर देना। इससे उनके दिमाग में तेरी इमेज बनेगी। पहले से फोन कर दिया गया था इसलिए कन्या के चाचा–मामादि मेहमान भी पहले ही पहुँच चूके थे। यहाँ से साला बहनोई भी लड़की देखने के लिए पहुँचे, चाय नाश्ता हुआ। लड़की के चाचाजी ने पूछा। आप ग्रेजुएट हो गये है न? युवक ने कहा ग्रेजुएट एम. ए. हूँ... बहुत अच्छा। अपनी ज्ञाति में कोई एम.ए. नहीं है चाचा ने कहा। व्यवसाय काहे का है कपड़े का? केवल कपड़े का बीजनेस नहीं है। बर्तन की दुकान, फैक्ट्री, डायमण्ड का कामकाज भी है। बडा कारोबार है, वर्ष में दस–बीस लाख का टर्न–ओवर होता होगा? दस–बीस लाख? पन्द्रह–बीस करोड़ की बात करो, ज्यादा होंगे कम नहीं। निवास स्थल तो बंगला ही होगा। एक बंगला थोडी न है एक हील स्टेशन पे है, एक फॉर्म हाऊस में हैं और एक गाँव में है। तीन बंगले अहमदाबाद में है भाड़े पे दे रखे है। अरे! हमें तो प्रभु कृपा से लीला लहर है।

For Private And Personal Use Only

दुकान? सात दुकान है। फैक्ट्रियाँ है, ऑफिस है। कुटुम्बियों को लगा कि लड़का धनवान है। बेटी देने के लिए अच्छा ही नहीं बहुत अच्छा है। चाचाजी ने पूछा आपकी उम्र पच्चीस, छब्बीस की होगी? पच्चीस काहेकी? पच्चास की है... युवक के मन में यूं था कि सब में ज्यादा किया तो इसमें भी ज्यादा करो.... फट से कह दिया पच्चास। बहनोई समझ गये कि साले ने गलती कर ली है, तुरन्त साले का पेर दबाया और कहा– इसने अपनी नहीं पिताजी की उम्र पूछी है...यूं समझ कर बताया है उम्र तो पच्चीस–छब्बीस वर्ष की ही है। हां ठीक है इतनी ही लगती है मामाजी ने कहा यूं प्रश्नों का दौर चल रहा था तभी युवक को खांसी आने लगी। तब चाचा ससुर ने पूछा क्या सर्दी–जुकाम हो गया है? ना टी. बी.हो गया है। फिर चाचा ससुर बोले टी.बी? अरे टी.बी. ही नहीं थर्ड स्टेज में पहुँच गया है। कहने की जरूरत नहीं की चाचा ससुर ने उसे पसन्द किया होगा..... कोई भी होता तो ऐसे युवक को पसन्द नहीं करता। बहनोई ने माथा ठोका लेकिन युवक/साला समझ नहीं पाया कि क्या हुआ? जहां ये प्रशंसा उपर चढ़ने के लिए रस्सी का काम करती है, वहीं अन्धेरे कुए में गिरने का कारण बन जाती है। शिखर पे पहुँचाने की जगह खाई में गिरा देती है।

इस आत्म प्रशंसा की जड़ बहुत गहरी है। कभी–कभी ऐसा भी देखने में आता है कि कुछ लोग ऐसी खूबी से बात करते हैं कि जिससे हमें लगता है कि स्वयं किसी दूसरे की प्रशंसा कर रहें है। लेकिन इसके पीछे खुद को ही महान दिखाने की कोशिश रहती है। देखिये न पिन्टू बडा गजब निकला। मेरी दुकान में नौकरी करने आया, तब सीधा–साधा और निर्धन था। मेरी दुकान में ट्रेनींग लेकर ऐसा तैयार और हुशियार बना कि आज करोडपति बन गया। कहिये यहाँ पिन्टू गजब है या कहने वाला शेठ। मेरी दुकान में ट्रेनींग लेने वाला हुशियार हुए बिना नहीं रहता स्वप्रशंसा इन शब्दों में नहीं गुंज रही है? यह तीर्थ क्षेत्र बहुत अच्छा है। मुझे यहाँ पूजा करने में बहुत मजा आता है। इसलिए मैं एकाध घण्टे की जगह दो घण्टे पूजा करता हूँ। यहाँ भी तीर्थ की तुलना में दो घण्टे पूजा करता हूँ यह बात अधिक महत्त्व रखती है। विकाश में

For Private And Personal Use Only

कोमल पौधे के लिए प्रशंसा तेजाब के समान होती है। एक बार प्रशंसा मिली कि विकाश का पौधा कुम्हलाता है। सचमुच मनुष्य को प्रशंसा कितनी अधिक प्रिय होती है? फिर भी वह कितनी बडी दुश्मन है? बोल ढब्बू इस गली में सबसे बुद्धिमान कौन है? देख चिन्टू। मैं अपनी प्रशंसा करना उचित नहीं समझता हूँ। अच्छा फिर ये तो बता दे कि इस गली में मुर्ख कौन, बुद्धु कौन? अरे पिन्टू तेरी निंदा करनी मैं पसन्द नहीं करता। कैसी लगी पिन्टू की बात। यह अपनी प्रशंसा करनी और दूसरे की निंदा करने की मना कर रहा है और ऐसा कहते कहते परनिंदा भी कर लेता है।

एक बार कौवे को कहीं से पुरी मिल गई, धी से लबालब और मीठी–मीठी थी। कौवे की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। वह पुरी को लेकर जंगल के किसी एक पेड़ की ड़ाली पर बैठ गया। कौवे की चौंच (मुँह) में स्थित पुरी को देखकर जमीन पर स्थित शियार के मुँह में पानी आ गया। किसी भी हालत में इस पुरी को पाना है। यह शियार का निश्चय था किन्तु शियार के मुँह से पुरी को पाना कैसे? यह तो भोला कबूतर नहीं हैं कौवा हैं, पर मैं भी कम नहीं हूँ, मैं भी कौवें की कमजोरी जानता हूँ। उस कौवे के मुँह से प्रेमपूर्वक पुरी छीन लेना मुझे आता है। शियार ने नीचे से कहा : कौवा भैय्या! आज तक मैने आपकी प्रशंसा बहुत सुनी है, परन्तु कभी देखने का मौका नहीं मिला था। आज पहली ही बार आपको रू–ब–रू में देखने का मौका मिला है, सौभाग्य मिला है। वाह! क्या अद्भूत रूप! सुना था उससे भी अधिक है! सचमुच विधाता ने फुरसत के पलों में तुम्हें बनाया होगा। जब आपका रूप इतना सुन्दर है तो फिर आवाज कितनी मीठी होगी? कोई गीत सुनाइए, मुझे आपकी मधुर आवाज सुननी है। किसी दिन कभी प्रशंसा नहीं सुनी थी इस कारण से कौवा तो फुल गया। सचमुच स्वप्रशंसा से मीठा ओर कुछ नहीं है। कौवा गीत सुनाने लगा का......का.............का............... बोलते ही पुरी नीचे गिर गई और शियार उसे उठा कर चला गया। अब कौवे को अकल आई कि शियार मेरी प्रशंसा क्यों कर रहा था? कहा है स्वप्रशंसा सुनकर आदमी पगला

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सा बन जाता है। आदमी चार स्थानों में पगला बनता है। (1) दर्पण : बुद्धिमान से बुद्धिमान आदमी भी जब दर्पण के सामने होता है तब पागल बनता है। (2) स्त्री : अच्छे-अच्छे मर्द भी स्त्री के सामने पागल बन जाया करते है। वह अगर जुतियाँ उठाने को कहती है तो वह भी उठा लेते है। (3) बालक : बड़ी उम्र के लोग (दादा-दादी) भी बालक के सामने पागल जैसा व्यवहार करते है। बालक रोये तो वे भी साथ-साथ आ.........आ.............. आ करते रोते है। अगर वह हँसे तो वे भी हाँ.. हाँ.. हाँ करके हँसते है। (4) प्रशंसा : खुद की प्रशंसा सुनकर तो अच्छे-अच्छे लोग पगले हो जाते है। वरना कौवा जैसा चालाक पक्षी शियार की बातों में कैसे आ जाता? अपनी प्रशंसा करने वाले आदमी से सावधान रहना क्योंकि वह आपसे अपना उल्लू सीधा करवाना चाहता है अतः प्रशंसा से फुलकर गुब्बारा मत बन जाना अन्यथा चापलूस अपना काम निकलाकर रफू-चक्कर हो जायेगा।

भगवान कहते हैं, यशोविजयजी म. कहते है स्वप्रशंसा दोष हैं। इसीलिए इस दोष को दूर करने का प्रयत्न किजिये।

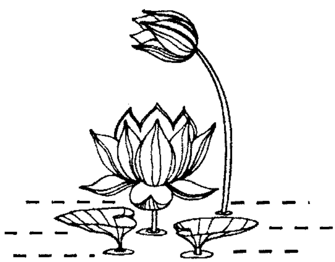

For Private And Personal Use Only

10 कोपोऽपि च निन्दया जनैः कृतया

"लोगों की निंदा से क्रोधित नहीं होना"

गुर्जिएफ को किसी ने कहा– मिस्टर एक्स तुम्हारी निंदा कर रहा था। गुर्जिएफ ने कहा वो करता होगा। वह बोलता है तो उसे बोलने दो, निंदा करने से ही उसे खुशी होती हो तो करने दो निंदा करने से उसे पैसे मिलते होंगे तो करने दो, निंदा करने से उसका पेट भरता हो तो करने दो, निंदा करना ही उसका धंधा हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं हैं। वह उसका धंधा जरूर करे उसे धंधा करने का पूरा अधिकार हैं। परन्तु मेरी निंदा एकदम रसभरपूर तरीके से सुननी हो तो मिस्टर वाय को मिलना इतनी जबरदस्त उनकी अभिव्यक्ति है कि पूछो ही मत! एक बार मैं कोफी हाऊस में बैठा था । मैं अंधेरे में वहाँ बैठा था और पीछे से मिस्टर वाय वहाँ आये। मिस्टर वाय को मेरी मौजुदगी की खबर नहीं थी कि मैं (गुर्जिएफ) भी यहाँ हूँ। किसी मित्र के सामने उसने बोलना शुरू किया। एक घण्टे भर वे बोले होंगे। परन्तु मजा आ गया! क्या छटा.. क्या लाक्षणिकता........ क्या मुद्रा.... शब्दों में रंग भरने की क्या कला। क्या वाक्य संयोजना... क्या........ उत्साह......और क्या मजा/आनंद........। निंदा को तटस्थता से सुनना साधना का एक आयाम है। निंदक को दर्पण जैसा समझना चाहिए। आदमी नहा धोकर तैयार होता है और दर्पण में अपना चेहरा देखता है। दर्पन कहीं दाग–धब्बा दिखायें तो वह तुरन्त साफ कर लेता है, पौंछ लेता है। दर्पण जैसे आदमी भी चाहिए कि नहीं?

निंदक नियरे राखिए अंगन कुटिया बिछाय
बिन साबुन पानी बिना निर्मल करे सुभाई

निंदा के शब्द हो या स्तुति के शब्द। शब्द आखिर शब्द है। प्रभु या गुरू के शब्द हमारी चेतना को झंकृत कर सकते है। दूसरे के शब्दों से क्या हो सकता है? हाँ उन्हे सुनने के बाद सार ग्रहण अवश्य करना। आपको लगे कि केवल द्वेषबुद्धि से बोला गया है तो उन्हें छोड़ा जा सकता है। कोई बड़े प्रेम से

For Private And Personal Use Only

खजूर दे तो लेने वाला देने वाले पर गुस्सा नहीं करता कि ये बीज क्यों दियें। वह खजूर खा लेता है बीज छोड देता है। कोई सीताफल प्रेम से देता है तो लेने वाला देने वाले पर गुस्सा नहीं करता कि ये छाल और बीज क्यो दिये। वह सीताफल खा लेता है, बीज छोड़ देता है। कोई गन्ना दे तो प्रेम से ले लेता है। देने वाले पर गुस्सा नहीं करता कि ये कचरा क्यों दिया। वह गन्ने को चूसकर कचरा फेंक देता है। आजकल मिट्टी के ग्लास में चाय देते है तो चाय देने वाले पर गुस्सा नहीं करते कि ये मिट्टी का बर्तन चाय के साथ क्यो दिया। वह चाय को पीकर ग्लास को फेंक देता हैं। क्या हम ऐसा नहीं कर सकते हैं? एक आदमी मुझसे कह रहा था। यूं तो मुझे गुस्सा आता नहीं है परन्तु कोई कड़वे वचन कहता है तो आ ही जाता है। मैंने उन्हें प्रेम से कहा। तुम्हें कोई कहता है तब दो घटनाएँ घटती है उसका तुम्हे ख्याल है? किसी ने कुछ कहा तो गुस्सा आऊं आऊं हो रहा है। उस समय तुम्हें प्रभु के शब्द याद नहीं आ सकते मेरे प्रभु ने तो क्रोध करने के लिए मना किया है। अब दो निमित्त हुए। एक है सामान्य मनुष्य का वचन। दूसरा है प्रभु का वचन। क्या हम यहाँ श्रेष्ठ निमित्त को नहीं स्वीकार सकते? यह तो हुई निंदा की बात। प्रशंसा की ओर एक नया आयाम है। किसी ने साधक के किसी गुण की प्रशंसा की, साधक समझता है कि वह गुण प्रभु ने साधक को दिया है। प्रशंसा के शब्द सुनते समय उसकी आँखों से अहोभाव के अश्रू निकलते होंगे। हिन्दी के शब्दकोश में दो शब्द लगभग एक जैसे ही है। एक है ममता और दूसरा है समता, परन्तु इन दोनों में अर्थ व फल की दृष्टि से उतना ही अन्तर है जितना कि प्रकाश और अन्धकार में होता है, समुद्र और क्षुद्र तालाब में होता है। ममता का परिणाम अनन्त दुःख है तो समता का परिणाम अनन्त सुख। ममता में किसी एक के प्रति राग का भाव होता है तो दूसरे के प्रति द्वेष का। जबकि समता में तो न किसी के प्रति राग का भाव न किसी के प्रति द्वेष का भाव। ऐसी सभी भावात्मक विषमताओं से मुक्त स्वरूप वाली समता की साधना, मुक्ति की साधना है, साधुता की साधना है। अरे! मुक्ति की प्राप्ति में समता की ही प्राथमिक आवश्यकता है अन्य किसी

For Private And Personal Use Only

तत्त्व की नहीं। तो आओ, अगर मुक्ति को पाना चाहते हो तो समता से अपनी आत्मा को भावित करो।

मिश्र में प्रख्यात संत मकारिया के पास एक आदमी आया उसने संत के चरणों में प्रणाम करके जिज्ञासावश प्रश्न किया। गुरूदेव! मैं संत बनना चाहता हूँ परन्तु संत बनने के लिए किस गुण की आवश्यकता है? संत मकारिया बोले कि तुम एक काम करो। इस नगर के बाहर जो कब्रिस्तान है। वहाँ जाओ और वहाँ दफनाए गये मुर्दों को तुम खूब गालियाँ दो जो कुछ भी कहना हो कहो, बेफिक्र होकर जिस तरह बोलना हो बोलो। उनका जिस तरह से भी तुम अपमान, तिरस्कार कर सकते हो करके आओ। तब मैं तुम्हे प्रथम आवश्यक गुण के विषय में बताऊँगा। संत की इस आज्ञा को सुनकर आगन्तुक आश्चर्य में पड़ा परन्तु फिर भी संत के चरणों में प्रणाम कर कब्रिस्तान की ओर गया। वहाँ उसने दफनाए हुए मुर्दो को गंदी-गंदी गालियाँ दी, भद्दे-भद्दे वचन बोले। एक एक कब्र पर जाकर उसने थूंका व लातों से मारा, लकड़ी से प्रहार भी किया और अन्त में तो आते समय कब्रों पर पत्थर भी मारे। जब वह थक गया तो शाम के समय संत के पास पहुँचा और उसने आज्ञानुसार काम पूरा करने की सूचना दे दी। संत बोले एक काम ओर करो फिर मैं तुम्हें तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूँगा। आगन्तुक हाथ जोड़कर सामने खड़ा हो गया। संत बोले अब पुनः कब्रिस्तान में जाओ और जैसे तुमने सभी प्रकार से मुर्दो का अपमान किया उन्हें गालियाँ दी वैसे ही इस बार उनकी प्रशंसा करना, उनके गुणों के गीत गाना, कब्रों पर फूल मालाएँ चढ़ाना। इस आज्ञा को पाकर वह आगन्तुक वापस कब्रिस्तान आया। उसने मुर्दों की खूब प्रशंसा की फूल मालाएँ कब्रों पर चढ़ाई, उनके सामने गीत गाते हुए मुक्त मन से खूब नाचा और भक्ति पूर्वक प्रत्येक कब्र पर मस्तक झुकाया। प्रातःकाल संत मकारिया के चरणों में आकर उसने मस्तक झुकाया व कार्य पूर्ण करने की सूचना दी और कहा : गुरूदेव! अब तो मेरी गुणविषयक जिज्ञासा शान्त किजिये। संत मकारिया ने उससे पूछा- जिस समय तुमने कब्रों का अपमान किया उस समय उन कब्रों ने कुछ कहा? नहीं।

For Private And Personal Use Only

तुमने जब उनकी प्रशंसा की तो क्या तुम्हें कोई प्रतिक्रिया सुनने को मिली? आगन्तुक ने कहा : नहीं। बस अगर तुम संत बनना चाहते हो तो मैं केवल तुम्हें इतना ही बताना चाहता हूँ कि तुम्हारा कोई अपमान करे या सम्मान, दोनों ही परिस्थितियों में तुम वैसे ही समान भाव रखों जैसे कि उन कब्रों नें रखा था। भाग्यशालियों। साधुता के लिए एक मात्र प्राथमिक गुण समभाव ही है। इस गुण के बिना साधुता हो ही नहीं सकती। साधुता और समता इतने एकमेक हैं जितना फूल और पराग। जितना मिश्री और मिठास, पानी और दुध। समता यानी प्रत्येक के प्रति समान भाव, जैसे पारस के लिए पूजा की कटोरी का लोहा वैसे ही वधिक की तलवार का लोहा। साधु के लिए जैसा प्रशंसक वैसा ही निंदक। जैसा तृण वैसा ही कंचन। हमारी कोई निंदा करे और हमें गुस्सा आ जाय तो समझना हमें स्तुति की अपेक्षा थी। उस अपेक्षा का भंग हुआ इसलिए गुस्सा आया है। हम सन्मार्ग पर हो। दिल से इमानदारी से कार्य करते रहे हो फिर भी कोई निंदा करता हो तो इसमें डरना क्या? अपना काम करते जाना। उन्हें उनका कार्य करने दो। हाथी के स्थान पर साधक है और कुत्तों के स्थान पर निंदक है। सवाल होगा अगर हम गलत हो झूठे हो तब कोई निंदा करे तो सहनीय है। परन्तु हम सच्चे हो तो फालतू निंदा सहन क्यों करें? भैय्या! हम झूठ को क्यों सहे? इसमें कौनसी बडी बात है? भूल होने पर तो सभी सहन करते हैं, परन्तु बिना भूल के भी सहे उसीमें महानता है। हम पसन्द नापसन्द के बीच जीते है। पसन्द में राग होता है और नापसन्द में द्वेष आना संभव है। पसन्द और नापसन्द पर विजय पाना यही सच्ची साधना है। दमदंत मुनि को कौरवों ने गालियाँ दी अपमानित किया, पाँड़वों ने स्तुति की सम्मान किया, परन्तु दमदंत मुनि न कौरवों पर नाराज हुए न पांडवों पर खुश हुए।

प्रसन्नचन्द्र एक राजा थे। उन्होंने अपने नाबालिग लड़के को अपना राज्य सौंप दिया और वैराग्यवासित होने के कारण साधु जीवन आपना लिया। एक दिन वे एक जगह पर साधना में लीन थे। दोनों बाहु उपर उठाए दांया पैर बायें पैर पर चढ़ाकर और सूरज के सामने दृष्टि लगाकर ध्यान कर रहे थे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा श्रेणिक ससैन्य भगवान महावीर के पास जाने के लिए उसी रास्ते से गुजरे। श्रेणिक राजा ने राजर्षि के दर्शन किये और उनकी साधना की प्रशंसा की। वहाँ से आगे बढ़ते हुए श्रेणिक भगवान महावीर के पास पहुँचें । दर्शन वंदनादि करके श्रेणिक ने भगवान से पूछा–प्रभो! इस समय यदि प्रसन्नचन्द्र राजर्षि की मृत्यु हो जाए तो उन्हें कौन सी गति मिलेगी? मालुम है आपको, भगवान ने क्या कहा– सातवीं नरक। यदि अभी मृत्यु को प्राप्त करे तो प्रसन्नचन्द्र राजर्षि सातवीं नरक में जा सकते हैं। भगवान के उत्तर ने श्रेणिक को बड़े अचम्भे में डाल दिया। जब कुछ ही क्षण बाद श्रेणिक ने अपने प्रश्न को दोहराया तो भगवान ने कहा सवार्थ सिद्ध विमान में जा सकते हैं। कुछ ही पल बाद देवदुंदुभि बजी तो श्रेणिक ने पूछा प्रभु! ये क्या हुआ? प्रभु ने कहा प्रसन्नचन्द्रराजर्षि को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। श्रेणिक के आश्चर्य की सीमा न रही। श्रेणिक की भावभंगिमाओं को निरख कर भगवान महावीर ने अपनी बात का रहस्योद्‌घाटन करते हुए कहा–श्रेणिक! जब तुम्हारी सवारी राजर्षि के निकट से गुजर रही थी, तब सवारी के आगे चल रहे दो सैनिकों की बातचीत राजर्षि प्रसन्नचन्द्र के कानों में पड़ी। वे सिपाही कह रहे थे। कि यह साधु वही राजाप्रसन्नचन्द्र है, जिसने अपने छोटे बेटे को राज्य–भार सौंपकर साधु जीवन स्वीकार कर लिया। उसने ऐसा करके बहुत बडी भूल की है। उस ने कायरता भरा काम कर लिया। इसके मंत्रियों ने इसके बेटे और परिवार की हत्या का षड़्यन्त्र रचा है और राजकुमार अपनी जान बचाने के लिए महल छोड़कर कही भाग गया है। यह बात सुनकर राजर्षि के मन में भावों के अनेक गिरते चढ़ते आयाम उभरते हैं। वे खड़े है ध्यान में, है मुनि वेष में, शरीर की मुद्रा महायोगी जैसी बना रखी है, मगर श्रेणिक! उस महायोगी के मन में महायुद्ध छिड़ जाता है। वे मन में ही मंत्री एवं शत्रुओं से भयंकर लड़ाई शुरू कर देते है। जब राजर्षि के पास शत्रुओं से लड़ने के लिए एक भी शस्त्र–अस्त्र नहीं बचा तो वे अपने माथे के तीखे मुकुट को उतारकर उससे लड़ने की सोचते है, पर ज्यों ही मुकुट उतारने के लिए वे अपना हाथ अपने सिर पर रखते है उसी क्षण उन्हें बोध हो

For Private And Personal Use Only

जाता है कि अरे! मैं तो साधु हूँ। महर्षि अपने मन में उठने वाले क्रोध वैरभाव के लिए पछतावा करते है और जिस राजर्षि के लिए मैंने सातवीं नरक कहा था। उन्होंने ही अब केवल ज्ञान प्राप्त कर लिया है। प्रसन्नचन्द्र राजर्षि के पास न शस्त्र था, नहीं वे रणागण में गये थे और न उन्होंने अपने हाथों से किसी शत्रु पर तलवार चलायी, पर मन ही मन उन्होंने युद्ध कर लिया, शत्रुओं को भी मार गिराया और सत्य बोध होने पर जीवन का परमसाध्य भी साध लिया।

पसन्द और नापसन्द पर विजय पाना महर्षियों के लिए भी कठीन है। अतः उपाध्याय यशोविजयजी कहते हैं लोक स्तुति या लोकनिंदा से साधकों को बचना होगा। सामान्यतया लोग, लोग अभिप्राय से चलने वाले होते हैं। दूसरों की ओर से अच्छा अभिप्राय मिलने से खुद को सुखी मान लेते हैं और दूसरों की ओर से गलत अभिप्राय मिलने से खुद को दुःखी मान लेते हैं। खुद के हर कार्य में सोचते हैं कि लोग नाराज तो नहीं होंगे? लोग मेरी टीका-निंदा तो नहीं करेंगे न। यही लोक संज्ञा है। साधक के लिए यह बहुत बडा विघ्न हैं संसारी जीवों को तीन प्रकार की संज्ञाएँ होती हैं। (1) वित्तसंज्ञा (2) पुत्रसंज्ञा (3) लोकसंज्ञा। लोकसंग्रह की इच्छा, लोगों में प्रिय बनने की इच्छा। वित्तसंज्ञा जिदंगी भर मन में समाये रहती है। बेचैन बनाये रखती है। सतत धन की चिंता लगी रहती है। कहाँ से धन आये कैसे धन आये, कैसे धन को बढ़ाये, कहाँ रखे, कहाँ इन्वेस्ट करे, क्या धंधा करे, न जाने धन की कितनी प्रकार की चिंताएँ होती रहती है। धन की इच्छा कभी पूरी नहीं होती। एंड्रू कारनेगी एक चपरासी की तरह जीया और चपरासी की तरह मरा। सच तो ये है चपरासी भी दफ्तर में बाद में पहुँचते थे, और वह उनसे एक घंटा पहले पहुँच जाता था। उसका हिसाब यह था कि दफ्तर खुले दस बजे तो, कारनेगी नौ बजे, दस बजे चपरासी पहुँचे, ग्यारह बजे क्लर्क, बारह बजे मेनेजर, एक बजे डायरेक्ट पहुँचे। तीन बजे डायरेक्टर नदारद चार बजे मेनेजर पाँच बजे क्लर्क फिर चपराची और वह सात बजे तक बैठा हैं यह तो चपचासी से भी बदतर हालत हो गई। जब दस अरब में यह हालत हो गई तो सौ अरब में क्या हालत होती,

For Private And Personal Use Only

जरा सोचो क्योंकि वह सौ अरब संग्रह करना चाहता था। फुर्सत नहीं थी, मरते वक्त दुःखी था जितना कमाना चाहता था। नहीं कमा पाया। कहाँ दस अरब और कहाँ नब्बे अरब। पुत्रसंज्ञा। सभी दम्पति को पुत्र की इच्छा तो रहती ही है। जिनके पुत्र नहीं होता उन्हें ही पता होता है कि पुत्र की इच्छा क्या होती है और पुत्र का न होना कितना दुःख पूर्ण है। लोग पुत्र पाने के लिए तो कहाँ कहाँ जाया करते हैं और कैसी कैसी मिन्नते रखा करते हैं।

एक घर में ऐसा ही हुआ। शादी किए सात वर्ष हो गये थे, पर उनके कोई संतान नहीं थी। एक दिन एक ज्योतिषी ने उनकी जन्म कुंडली देखकर बताया कि दो वर्ष बाद तुम लोगों को पुत्र प्राप्त होगा। दोनों खुशी में फूले न समाये। वे अपने पुत्र के लिए अनेक तरह की पूर्व योजनाएँ बनाने लगे। पति ने कहा पुत्र प्राप्ति के उपलक्ष में हम एक भोज का आयोजन करेंगे। पत्नी ने कहा कई वर्षो बाद इस कुल में पहला पुत्र होगा। हम आगन्तुकों को जाते समय थाल भी भेंट करेंगे। ताकि सब लोग याद रखेंगे। उन नामों की सूची बना ली गई, जिन को भोज में आमन्त्रित करना था। जिस दिन पुत्र जन्म हुआ उस दिन उस दंपति की खुशी का ठिकाना नहीं थाा। लड़का पढ़ा लिखा बड़ा हुआ, जवान हुआ। लड़के के लिए लड़की देखना शुरू किया।

एक बडे नगर में एक दुकान खुली। उसमें कुछ माल नहीं था। उपर एक बडा सा बोर्ड लगाया जिस पर लिखा था–यहाँ वधुओं की छँटनी होती है। वह लड़का वहाँ पहुँचा तो दरवाजा बंद पाया। दरवाजा खोलकर वह अन्दर गया वहाँ उसे दो दरवाजे मिले। एक पर लिखा था "काली लड़की" और दूसरे पर लिखा था "गोरी लड़की"। लडके ने गोरी लडकी वाला दरवाजा खोला। आगे उसे दो और दरवाजे नजर आए। एक पर लिखा था– "दिन भर काम करने वाली" तथा "दूसरे पर आराम करने वाली"। युवक ने दिन भर काम करने वाली का दरवाजा खोला। वहाँ दो दरवाजे और नजर आए। एक पर लिखा था–"एम.ए.पास" और दूसरे पर लिखा था–"अनपढ़"। लड़के ने एम.ए. पास वाला दरवाजा खोला। वहाँ फिर उसे दो दरवाजे नजर आए। एक पर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिखा था– "नहीं कमाने वाली" और दूसरे पर लिखा था "दो हजार मासिक कमाने वाली"। युवक ने कमाने वाली लड़की का दरवाजा खोला तो सामने एक बड़ा सा शीशा लगा था पास में एक बाल्टी में पानी भरा था। जिसके नीचे लिखा था। अनेक गुणों वाली बीबी चाहिए, परन्तु पहले अपनी शक्ल तो पानी से धो लो। फिर आईने में देखिए क्या आप इस लायक है? तो पुत्रसंज्ञा भी बड़ी भारी संज्ञा है। वित्तसंज्ञा और पुत्रसंज्ञा के त्याग के बाद भी लोकसंज्ञा का त्याग करना मुश्किल होता है।

अखबारों में कई व्यक्तियों की प्रसिद्धि देखकर एक युवक के दिल में भी, अखबार में नाम की भूख जगी। उसे सिनेमा की लत थी। फिल्म में युवती का दृश्य देखा, दृश्यहृदय पट पर अंकित हो गया। सिनेमा हॉल से बाहर बाजार में जाकर छूरी खरीदी सामने आ रहे चौदह वर्षीय बालक की छाती में छूरी भौंक कर भाग गया। पुलिस ने बड़ी मुश्किल से छान बीन करके उसे पकड़ा। दुसरे दिन समाचार पत्रों में हत्या के समाचार फोटो सहित छपे। वह लड़का अपना अखबार में फोटो देखकर मन ही मन खुश हो रहा था। अब कुछ भी करो। जैल की हवा खानी पड़े, मेरा नाम तो प्रसिद्ध हो गया।

आप हकिकत में ही आत्मसाक्षात्कार करना चाहते है तो लोगों की बहुत अधिक परवाह (निर्लज्ज होकर गलत काम करने, लोगों की परवाह नही करनी, ऐसा आशय नहीं है।) करने जैसा नहीं है। लोग भौतिकता को चाहते है उसी के प्रेमी है इसलिए आध्यात्मिकता की जीवन शैली उन्हे न रूचे स्वाभाविक हैं, परन्तु उनकी नाराजगी से आप नाराज मत होओ करीब–करीब सारा नगर निंदा कर रहा था तब मयणा नाराज नहीं हुई थी और द्वेष भी नहीं किया था। सचमुच मयणा सुन्दरी ने लोकसंज्ञा पर विजय प्राप्त की थी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

11

सेव्या धर्माचार्याः

"धर्मगुरू की सेवा करनी"

वर्तमान काल में भरतक्षेत्र में साक्षात् तीर्थंकर परमात्मा केवली भगवंत और श्रुत केवली (चौदह पूर्वी) का योग नहीं है.......... फिर भगवान महावीर प्रभु के द्वारा स्थापित शासन विद्यमान है। इस काल में भी जिन वचन के प्रति पूर्णसमर्पित सद्गुरू के चरण कमल की सेवा द्वारा आत्मा मुक्ति मार्ग में आगे बढ़ सकती है। इस भवसागर से पार उतारने के लिए सद्गुरू ही सुदृढ़ नौका के समान है। यह भावना शिष्य के हृदय में दृढ़ीभूत हो जानी चाहिये। शिष्य का जीवन गुरूचरणों में पूर्णतया समर्पित होना चाहिए। गुरू आदेशानुसार ही उनके जीवन की प्रत्येक क्रियाएँ होनी चाहिये। तीर्थंकर रूपी सूर्य तथा गणधर व केवली भगवंतरूपी चंद्र के अस्त हो जाने पर अमावस्या के समान घनघोर अंधेरी रात में आचार्यादि गुरूभगवंत ही दीपक बनकर भव्य जीवों को तीर्थंकर परमात्मा के द्वारा निर्दिष्ट मोक्ष मार्ग का पथ प्रदर्शन कराते है, अतः गुरू भगवंतों का हमारे उपर जो उपकार हैं उसे शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। ऐसे उपकारी गुरू भगवंतों की जीवन पर्यंत सेवा की जाय तो भी उनके उपकार के ऋण से छुट नहीं सकते हैं। उपाध्यायजी महाराज ने कहा हैं–

समकितदायक गुरूतणो, पच्चुवयार न थाय।
भव कोड़ा कोड़ी करी, करता सर्व उपाय।।

अनेक उपायों द्वारा करोड़ों भवों तक समकित दाता गुरूदेव की सेवा भक्ति की जाय तो भी उनके उपकार में से ऋण मुक्त नहीं हो सकते है। ऐसे उपकारी गुरू भगवंत हमारे लिए परम आदरणीय और उपास्य होते है। उनका विनय बहुमान और सेवा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। **"दुष्प्रतिकारौ मातापितरौ स्वामिगुरूश्च लोकेऽस्मिन्"** प्रशमरति ग्रन्थ में माता, पिता, शेठ और गुरू के उपकार को दुष्प्रतिकार कहा है। दुष्प्रतिकार अर्थात् जिन के

For Private And Personal Use Only

उपकार का बदला कभी चूकाया नहीं जा सकता। माता–पिता विद्या गुरू शेठ और धर्मदाता गुरू का हमारे पर महाउपकार होता है। इस जीवन में हम जो कुछ भी सुन्दर व श्रेष्ठ कार्य करते हैं, उनमें इन्हीं का मुख्य हिस्सा है। भौतिक देह के जन्मदाता माता–पिता है तो आध्यात्मिक देह के जन्मदाता धर्मगुरू हैं। अगर हममें कृतज्ञता हो, तो उनकी सेवा करनी ही चाहिए। माता–पिता हमें जन्म देकर पालन–पोषण करते है। सभी चिंताओं से मुक्त रखकर पढ़ाई–शिक्षण आदि की व्यवस्था करते है। खान–पान, कपड़े, मकान आदि जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति वे ही करते है। हमारे संस्कारों से लेकर जीवन की हर जरूरत (आवश्यकता) की चिंता वे ही करते है। बालक के शारीरिक व मानसिक विकास के लिए माता–पिता का पूरा–पूरा योगदान होता है। बालक की शारीरिक अस्वस्थता में जितनी चिंता माता–पिता करते है, उतनी और कोई नहीं करता है। पूर्वाचार्यों, महर्षियों का कथन हैं कि माता–पिता का जो उपकार है उसे किसी भी संयोग में हम चूका नहीं सकते हैं। इस प्रकार माता–पिता के हम पर अगणित उपकार है अतः उनके उपकारों को सदा याद रखना चाहिए और अपना कर्तव्य है कि तन–मन–धन से उनकी भक्ति सेवा चाकरी करे। आर्थिक दृष्टि से कमजोर हालत में थे तब मदद करने वाले मालिक (शेठ) का भी कम उपकार नहीं है। जिन्होंने हमें काम सिखाया, रोजगार दिया आगे बढ़ाया आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाया उनका भी अवश्य ही उपकार मानना चाहिए। वो गुरू जिन्होंने हमें इस संसार के कीचड़ से बाहर निकालकर मोक्ष मार्ग दिखाया ऐसे उपकारी गुरू का कोई कम उपकार नहीं है। अक्षरज्ञान देने वाले विद्या गुरू का भी अपने पर उपकार कम नहीं है। ज्ञानाभाव के कारण नवजात शिशु का जीवन पशुतूल्य ही होता है। व्यवहारिक शिक्षण के बाद ही उसमें ज्ञान का प्रकाश और विवेक प्रगट होता है, क्योंकि ज्ञान से ही विवेक आता है जिससे कार्य अकार्य कर्तव्य अकर्तव्य का बोध होता है। जिसने माता पिता की सेवा की हो वही प्रायः गुरू की सेवा कर सकता है। अपनी आत्मा पर सर्वोत्कृष्ट उपकार धर्मदाता गुरू का है। माता–पिता

For Private And Personal Use Only

लौकिक उपकारी है जबकि गुरू लोकोत्तर उपकारी है। कहते भी है कि **"गुरू बिना ज्ञान नहीं"** । अपने उपकारियों के प्रति कृतज्ञता का भाव आने के बाद ही जीवन में धर्म का प्रारम्भ होता है। आर्यसुहस्तिसूरिजी महाराज ने भावि शुभ परिणाम को देखकर एक भिखारी को दीक्षा दी। उन्हें शिष्य की लालसा नहीं थी कि जो आये उसे मुंड़ दे, उस ज्ञानि गुरू ने भिखारी के उज्वल भविष्य को देखा होगा वर्ना वे इस तरह उसे दीक्षा नहीं देते। हम जैसे लोग होते तो जरूर कहते कि इन्हें शिष्य बनाने की कितनी लालसा है कि एक भिखारी को दीक्षा दे दी। अतिभोजन के कारण वे मुनि उसी रात्रि को समाधिपूर्वक संयम का अनुमोदन करते हुये काल धर्म प्राप्त कर गए और कुणाल के पुत्र रूप में पैदा हुए। बाल उम्र में ही संप्रति उज्जयिनी नगरी के राजा बनें। धीरे-धीरे संप्रति महाराजा युवावस्था को प्राप्त हुए।

एक बार वे झरोखे में बैठकर नगर नजारे को देख रहे थे, तभी उन्होंने भव्य जुलुस के साथ नगर प्रवेश कर रहे आर्य सुहस्तिसूरिजी महाराज को देखा। आचार्य भगवंत को देखकर लगा कि मैंने इनको कहीं देखा है , मैंने इनको कही देखा है, यूं सोचते और उहापोह करते हूए जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ। उसने अपने उपकारी गुरूदेव को पहचान लिया। ओहो! गत जन्म में मैं भिखारी था और खाने के लिए ही दीक्षा ली थी, अब मैं इन्ही के प्रभाव से और इन्हीं के कारण एक राजा बना हूँ। संप्रति राजा तुरन्त ही महल में से नीचे उतरे। आचार्य भगवंत के चरणों में भाव पूर्वक प्रणाम किया। फिर बोले, हे प्रभो! क्या आपने मुझे पहचाना? उज्जयिनि के सम्राट संप्रति को कौन नहीं जानता है? आचार्यश्री ने कहा। इस रूप में नहीं, अन्य किसी रूप में! संप्रति ने पुछा। तत्क्षण आचार्य श्री ने श्रुतज्ञान के बल से सम्राट संप्रति के पूर्वभव को प्रत्यक्ष देखा और फिर बोले हां। अब पहचान लिया। गत जन्म में तुम मेरे शिष्य थे। तुरंत ही सम्राट संप्रति ने कहा गुरूदेव! आप ही के पुण्य प्रभाव से मुझे इस राज्य की प्राप्ति हुई है अतः यह राज्य मुकुट आपके चरणों में समर्पित करता हूँ। इसे ग्रहण कर आप मुझे कृतार्थ किजिये। आचार्य भगवंत

For Private And Personal Use Only

बोले हमें राज्य से क्या लेना देना? हम तो अकिंचन है, साधु है। तो गुरूदेव! आप मेरे योग्य आज्ञा फरमाईये। संप्रति राजा ने कहा। महानुभाव। पुण्य के प्रभाव से संपत्ति प्राप्त हुई है, इसे जिन शासन की प्रभावना में लगाओं बेजोड कार्य करो। गुरूदेव के आदेश का पालन कर उसने अपने जीवन में सवा करोड़ प्रतिमाएँ भरवाई और सवा लाख जिन मंदिरों का निर्माण करवाया। सम्राट संप्रति को दुबारा सद्धर्म की प्राप्ति हुई उसका मूल गुरूदेव का उपकार ही था। अपने उपकारी गुरूदेव के प्रति रही कृतज्ञता के कारण ही वे राज्य प्राप्ति के बाद भी जिन शासन प्रभावना के बेजोड़ कार्य कर सके थे। महावत के अंकुश के अधीन रहा हाथी आय/कमाई का साधन बनता है। मदारी के अधीन रहा बंदर और सर्प भी मदारी की कमाई का साधन बन जाता है। परन्तु वे ही स्वतंत्र हो तो भारी नुकसान कर देते हैं। इसी तरह मनुष्य पर भी गुरू आदि का अंकुश न हो तो नुकसान ही होता है। स्वच्छंदी स्वतंत्र पशु से जो नुकसान नहीं होता, उससे अनेक गुणा अधिक नुकसान स्वच्छंदी मनुष्य से होता है। हमारे जीवन की लगाम गुरू के हाथ में रहनी चाहिए। जीवन व्यवस्था को चलाने के लिए बड़ों के कठोर अनुशासन की आवश्यकता रहती है, परन्तु उस अनुशासन/नियंत्रण को वही मनुष्य स्वीकार करेगा। जो आत्म कल्याण का इच्छुक हो जिसे सम्यग्ज्ञान मिला हो। स्वच्छंदी को गुरू की हितकर बात भी अच्छी नहीं लगती। हकिकत में देखा जाय तो गुरू आज्ञा पालन में ही धर्म रहा हुआ है। गुरू की आज्ञानुसार किया गया एक छोटा सा अनुष्ठान भी महालाभ का कारण बनता है और उनकी आज्ञा का उल्लंघन कर किया गया बड़ा अनुष्ठान भी अहितकर ही बनता है। विधिपूर्वक की आराधना के लिए गुरू निश्रा और समर्पण भाव बहुत जरूरी है। जैसे किये हुए दुष्कृतगर्हापूर्वक की आलोचना गुरू की निश्रा/साक्षी में करनी होती है, वैसे जो धर्मकार्य करना है वह भी गुरू भगवंत को पुछकर उनकी संमति–आज्ञापूर्वक धर्माराधना करने से ही धर्माराधना फलदायी होती है। तभी तो कल्प सूत्र में तप आदि करने के लिए भी गुरू देव को पूछकर ही करने की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बात कही है अतः गुरू आज्ञा और समर्पण बिना की आराधना भी विराधना गिनी जाती है। गुरू के अनुसरण और समर्पण से शिष्य अनेक प्रकार की पाप प्रवृत्तियों से अपने आप को बचा लेता है और सद्धर्म की साधना में गतिशील बनता है। जीवन की सुरक्षा के लिए या तो खुद ड्राइवर बनें अथवा ड्राइवर को अपनी गाड़ी सौंप दो। जो खुद ड्राइवर नहीं बने हैं और अपनी गाडी ड्राइवर को सौंपने के लिए तैयार नहीं है, वे बेमौत के शिकार हो जाते है। बस, उसी प्रकार जब तक स्वयं योग्य न बन जाय वहां तक अपनी जीवन नौका, गुरूदेव को सौप देनी चाहिए.... इसी में जीवनविकास और आत्मविकास है। ऐसे पुज्य गुरूदेवों की सेवा करने से हमें ह्रदय से उनके आशीर्वाद प्राप्त होते है, जिससे हमारा जीवन ही बदल जाता है। विनय, वैयावच्च, आदर, सत्कार, बहुमान, भक्ति तथा आज्ञापालन आदि से उनकी सेवा की जा सकती हैं आचार्य देव श्री धर्मघोष सूरीश्वरजी महाराज की सेवा संग भक्ति से पेथड़शाह का जीवन कितना तेजस्वी बन गया। आमराजा के जीवन में जो अद्भूत परिवर्तन आया उसका एक मात्र कारण महान् प्रभावक आचार्य प्रवर श्री बप्पभट्ट सूरीश्वरजी के संग और सेवा से ही था। कलिकाल सर्वज्ञ सद् गुरूदेव श्री हेमचन्द्राचार्यजी की चरण सेवा को प्राप्त कर कुमारपाल महाराजा ने कैसी अद्भूत शासन प्रभावना की थी। भगवान महावीर के मौजूदा काल में श्रेणिक महाराजा भी जिस जीवदया का पालन न करा सके ऐसी जीवदया का पालन कुमारपाल महाराजा ने कलिकाल सर्वज्ञ के उपदेश से अपने राज्य में कराया अतः जीवन के अभ्युत्थान के लिए ज्ञान और चारित्र युक्त आत्माओं की सेवा में सदैव तत्पर रहना चाहिए। गुरू की आराधना से अनंत ज्ञान व अनंत आत्मगुणों को पा सकते हैं और बाह्रय व अंतर्लक्ष्मी के स्वामि बन सकते है, जबकि गुरू की विराधना अज्ञान दुःख व दुर्गति का कारण बन सकती हैं। गुरू की सच्ची आराधना वही कर सकता है जो कि स्वयं के गुरू के प्रति पूर्णतया समर्पित हो, गुरू पर जिसकी अटूट आस्था हो, विश्वास हो, भरोसा हो। चन्द्रगुप्त मौर्य के जीवन की एक घटना है। चन्द्रगुप्त मौर्य चाणक्य को अपना उपकारी गुरू

For Private And Personal Use Only

मानता था। उनकी आज्ञा का उल्लंघन कभी नहीं करता था। एक बार चाणक्य को पता लगा कि कुछ इर्ष्यालु व तेजोद्वेषी लोगों ने चन्द्रगुप्त को मेरे विरूद्ध कुछ झूठी बातें कह कर भड़का दिया है। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त की परीक्षा के लिए मन ही मन एक योजना बनाई और उस योजना के अनुसार वे चन्द्रगुप्त, कुछ मंत्रीगण, सामंत और विशिष्ट लोगों को साथ लेकर एक बावड़ी के पास पहुँचे। वहाँ पहुँच कर उन्होनें चन्द्रगुप्त को आज्ञा दी। तुम बावड़ी में उतरो। चन्द्रगुप्त ने तुरन्त गुरूवर के आदेश का पालन किया और सीढ़ियाँ नीचे उतरता हुआ पानी के करीब पहुँच कर खड़ा हो गया। यह देखकर बोले चन्द्रगुप्त और नीचे उतरो। इस आदेश को सुनकर चन्द्रगुप्त बावड़ी के पानी में उतर गया। जब उतरते–उतरते उसके गले तक पानी आ पहुँचा तो वह ठहर कर गुरूजी की ओर देखने लगा व नये आदेश का इन्तजार करने लगा। यह देख चाणक्य ने फिर कहा चन्द्रगुप्त! बावड़ी के पानी में और गहरे तक उतरो। इस आदेश को सुन चन्द्रगुप्त अब तो उतरता–उतरता पूरा का पूरा पानी में डूब गया। वह तैरना नहीं जानता था, पानी में जाते ही उसकी साँस रूकने लगी, प्राण अकुलाने लगे। वह पानी में बेचैन हो गया। परन्तु पानी से बाहर नहीं निकला। उसकी छटपटाहट अकुलाहट को देखकर चाणक्य ने सेवकों को आज्ञा दी कि चन्द्रगुप्त को तुरन्त पानी से बाहर निकालो। इस आदेश को सुनकर सेवक तुरन्त ही पानी में कूदे और अकुलाते व डूबते हुए चन्द्रगुप्त को बावड़ी से बाहर निकाला। सामान्य उपचार करने के बाद कुछ स्वस्थ हुआ तो गुरू चाणक्य ने पूछा। चन्द्रगुप्त! सच कहना कि पानी में डूब जाने के बाद तुम्हारे दिल में मेरे प्रति क्या विचार उत्पन्न हुए थे? चन्द्रगुप्त गुरूदेव को प्रणाम करते हुए बोला– गुरूजी! मैंने सिर्फ इतना ही सोचा कि आपने मुझे धरती का साम्राज्य दिलवाया है और अब लगता है कि आप मुझे स्वर्ग का साम्राज्य दिलवाना चाहते हैं। **''मम लाभेति पेहाओ''** गुरू जो कुछ कहते होंगे, या करते होंगे वो मेरे हित के लिए और लाभ के लिए करते होंगे। यह शिष्य के अंतर में गुंथ जाना चाहिए। इस बात को सुनकर चाणक्य गद्‌गद हो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गया और वहाँ मौजुद मंत्रीगण सामंत आदि सभी चन्द्रगुप्त की गुरू के प्रति ऐसी अटूट श्रद्धा को देखकर आश्चर्य में डूब गये। यह गुरूभक्ति ही चन्द्रगुप्त की समस्त प्रकार की समृद्धियों का मूल था। साँस ससूर की सेवा करने वाली पुत्र वधु, या उनके आदेशानुसार कार्य करने वाली प्रतिव्रता? गुरू की केवल सेवा करने वाला शिष्य या उनकी आज्ञा को शिरसावंद्य करने वाला शिष्य? पिता की केवल सेवा करने वाला पुत्र या उनके वचनों को लात मारने वाला पुत्र? महान् कौन है? सचमुच समर्पण बिना की सेवा मजदूरी ही है ऐसा कहने में कुछ गलत नहीं होगा। जो शिष्य या पुत्र गुरू और पिता की बाह्य सेवा तो करता है, परन्तु उनकी आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार नहीं है और आज्ञापालन नहीं कर पाने का दिल में खेद भी नहीं हैं तो ऐसे शिष्य और पुत्र की सेवा जैसे मजदूर पेट भरने के लिए मजदूरी करता है उससे अधिक नहीं है। श्रीमंत की सेवा से रोटी कपड़ा मकान मिल सकता है। सद्गुरू की सेवा एकाध सद्गति का बुकिंग करवा दे, परन्तु सम्पूर्ण दुःखक्षय और कर्मक्षय नहीं जबकि गुरू आज्ञा के पालन से मुक्ति भी मिलती है। शास्त्रों में शिष्य के पाँच प्रकार कहे हैं।

(1) गुरू के लिए सिरदर्द बने ....अधमाधम शिष्य (अवज्ञा)
(2) गुरू के सामने सिर उठाए ....अधम शिष्य (उपेक्षा)
(3) गुरू का सिर दबा दे ....मध्यम शिष्य (सेवा)
(4) गुरू की आज्ञा को सिर पर चढ़ाये..उत्तम शिष्य (आज्ञा)
(5) गुरू के हृदय में जा बसे .... उत्तमोत्तम शिष्य(आशय)

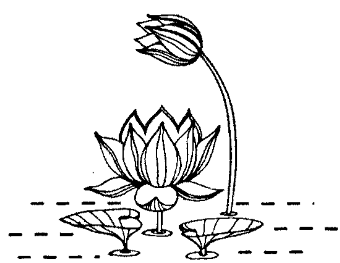

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

12

तत्त्वं जिज्ञासनीयं च

"तत्त्व जिज्ञासा रखनी चाहिए"

माना कि सिर्फ दुकान जाने से धनवान नहीं बना जाता किन्तु धनवान बनने की संभाव ना तो रहती है। सिर्फ कुए–तालाब जाने से प्यास नहीं मिटती किन्तु प्यास बुझने की संभावना तो रहती है। सिर्फ वृक्ष के पास जाने से पेट नहीं भरता किन्तु पेट भरने की संभावना तो रहती है। बस! वैसे ही जिज्ञासा मात्र से ही ज्ञानि नहीं बना जाता परन्तु ज्ञानि बनने की संभावना तो रहती है। कोई आदमी अधिक ज्ञानि क्यों हैं? क्योंकि उसके पास जिज्ञासा अधिक थी। कोई आदमी अधिक अज्ञानि क्यों है? क्योंकि उसके पास जिज्ञासा नहीं के बराबर थी , जिज्ञासा के आधार पर ही ज्ञान मिलता है। जिज्ञासा अर्थात् जानने की इच्छा। जिज्ञासा, अंतर्हृदय से प्रकटे तो ज्ञानदाता गुरू मिल जाते है। अगर प्यास लगी है तो आदमी पानी तो कहीं से भी ढूंढ़ लेता है। ज्ञान तो सभी दिशाओं से बरसने को तैयार है, परन्तु हमारी तैयारी नहीं है। अपने अंतर्हृदय में गहरी प्यास/जिज्ञासा नहीं हैं। जिज्ञासा के बिना ज्ञान मिलता नहीं है। प्यास के बिना पानी मिलता नहीं है। भूख के बिना भोजन मिलता नहीं है। चार ज्ञान के धनी गुरू गौतम स्वामी जिज्ञासु बनकर जिज्ञासा की तृप्ति के लिए बालक की तरह रहे निर्दोष भावों से अंजलीबद्ध हो कर प्रभु को पूछ रहे थे। प्रभु! आपने मुझे तीन लोक का स्वरूप समझाया जगत् का स्वरूप प्रस्तुत किया, देव–मनुष्य तिर्यच और नरक गति का चिंतन दिया, जीवादि नौ तत्त्वों को बखूबी समझाया। चारों गति के जीवों के दुःखदर्दों का परिचय कराया। परमविनयी गुरू गौतमस्वामी चार ज्ञान से युक्त थे फिर भी प्रभु को विनयपूर्वक प्रश्न पूछते थे और प्रभु भी हे गोयम! कहकर समाधान करते थे। ये गुरू शिष्य की प्रश्नोत्तरी श्रोताओं को धर्ममार्ग में जोड़ने और तत्त्व को समझाने का कारण बन गयी परिणाम स्वरूप सभी की जिज्ञासा का समाधान हो ऐसा एक आगम निर्मित हुआ। उस आगम का नाम है भगवती सूत्र, इस आगम में गौतमस्वामी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ने भगवान महावीर स्वामी को किये छत्तीस हजार प्रश्नों का समाधान (संग्रह) हैं। बालक स्कूल से घर आता है आते से ही माँ से खाना मांगता है क्योंकि उसे जोरों से भूख लगी है। माँ भी सारे काम छोड़कर पहले उसे खाना देती है। बस! शिष्य भी बालक जैसी तत्त्व जिज्ञासा गुरू से दिखाएं तो गुरू भी उसे ज्ञान देकर तृप्त करते हैं। देखो! महावैरागी जंबुस्वामी की तिव्र जिज्ञासा और गुरू सुधर्मास्वामी का तत्त्व/ज्ञान भोजन देने का तरीका। रायपसेणी सूत्रानुसार परदेशी राजा, जीव और शरीर को एक ही मानने वाले थे, वे भ्रमणा में भटक रहे थे। देह के नाश में आत्मा का नाश है। देह और देही को भिन्न देखने के लिए कितने ही जीवों की हत्याएं की थी। शरीर के टूकडे–टूकडे करके आत्मा की खोज की थी। परंतु अरूपी आत्मा चरम चक्षु से दिखी नहीं थी। ऐसी भ्रमणा में जी रहे परदेशी राजा को केशीस्वामी जैसे सद्गुरू का योग मिलने से भ्रमणा तूट गई थी और वे आध्यात्मिक रंग में रंग गये थे। फिर वे परदेशी मिटकर स्वदेशी बन गये थे।

मुझे भी आपसे यही कहना है कि जिज्ञासु बनिये, जिज्ञासा हृदय की गइराई से उत्पन्न हो तो ज्ञानदाता गुरू मिल ही जाऐंगे। धूप लगती हो तो आदमी छांव ढूंढ ही लेता है। आदमी को ज्ञान की नहीं जिज्ञासा की चिंता होनी चाहिए, भोजन की नहीं भूख की चिंता होनी चाहिए। पानी की नहीं प्यास की चिंता होनी चाहिए। प्यास होगी तो पानी मिलेगा ही, सूरज की नहीं आँख की चिंता होनी चाहिए, आँख होगी तो सूरज दिखेगा ही। भूख होगी तो भोजन मिलेगा ही। भक्ति होगी तो भगवान मिलने ही वाले हैं। आश्चर्य की बात है! आदमी को खुद में कितनी जिज्ञासा है उसकी चिंता नहीं है, अपितु ज्ञान की चिंता है!भूख की नहीं, अपितु भोजन की चिंता है। आँख की नहीं अपितु सूरज की चिंता है। भक्ति की नहीं, अपितु भगवान की चिंता है। जिज्ञासा है या नहीं? पता कैसे चलता है? भीतर से उठने वाले प्रश्नों से। प्रश्न जितने अधिक, जिज्ञास उतनी ही तीव्र मनुष्य तीन तरह से पूछ सकता है। एक कुतुहल होता है बच्चों जैसा कोई जरूरत न थी, पूछने के लिए पूछ लिया कोई प्रयोजन नहीं

For Private And Personal Use Only

था, उत्तर मिले तो ठीक, न मिले तो ठीक, दुबारा पूछने का भी सवाल नहीं आता , रास्ते से गुजर रहे है, बच्चे पूछते हैं यह क्या है? वृक्ष क्या है? फल क्या है? ये हरे क्यों है?

विदेश से एक व्यक्ति भारत की यात्रा पर आया। अपनी प्रशंसा करना उसे बहुत अच्छा लगता था। वह हर समय दूसरे व्यक्ति को नीचा दिखाने की कोशिश करता था। एक दिन किसी सब्जी की दूकान पर गया। एक–एक सब्जी का नाम पूछने लगा। ककड़ी का नाम सुनकर उसने कहा– हमारे देश में जिसे ककड़ी कहते है वह तो इससे बीस गुनी बड़ी होती है। इसका नाम क्या है? यह केला है साहब। केला? अजीब बात है, हमारे देश में तो यह दो मीटर जितना लम्बा होता है। तरबूज की और इशारा करते हुए पूछा यह क्या हैं? सब्जी वाला विदेशी की बातों से झूंझला चूका था। उसने कहा– साहब यह अंगूर है अंगूर! विदेशी बोला इतना बड़ा अंगूर? सब्जी वाला बोला यह तो छोटा अंगूर है राजस्थान में तो इससे भी बड़े–बड़े अंगूर होते है। हँसना मत यह तो लोगों की आदत होती है पूछने की और प्रदर्शन करने की। सूरज दिन में क्यों निकलता है रात में क्यों नही? सितारे अंधेरें में क्यों टिमटिमाते है उजाले में क्यों नहीं? अगर उत्तर न दिया तो उत्तर के लिए उन की प्रतिक्षा नहीं है, जब तक उत्तर मिल रहा था। पूछते गये– उत्तर न भी दो जोर नहीं डालेंगे कि उत्तर दो। पूछने के लिए पूछ रहा है। जैसे चलने के लिए ही चलता है कही पहुँचना नहीं है, मजा लेता है। जब बोलने लगता है तो बोलने के लिए बोलता है। पूछने में प्रश्न नहीं है सिर्फ कुतुहल है। दूसरा थोड़ी गहराई बढ़े जिज्ञासा पैदा होती है सिर्फ पूछने के लिए नहीं है उत्तर की तलाश है, तलाश बौद्धिक है, आत्मिक नहीं। जिज्ञासा से भरा व्यक्ति उत्सुक है चाहता है कि उत्तर मिले, लेकिन उत्तर बुद्धि में संजोलिया जाएगा, जानकारी बढ़ेगी, ज्ञान बढ़ेगा आचरण नहीं, आदमी को बदलेगा नहीं, वैसा ही रहेगा, ज्यादा जानकार जरूर हो जायेगा। फिर तीसरा तल, इसलिए नहीं पूछ रहा है कि थोड़ा और जान ले, इसलिए पूछ रहा है कि जीवन दाँव पर लगा है, उत्तर पर निर्भर है कि कहाँ

For Private And Personal Use Only

जाएँ क्या करें, कैसे जिएं, एक प्यासा आदमी पूछता है, पानी कहाँ हैं, यह जिज्ञासा नहीं हैं, जिसको प्यास लगी है वह सरोवर चाहता है। किन्हीं लोगों को सामने से चलकर बात–बात में प्रश्न पूछने की आदत होती है। एक जानी मानी महिला वक्ता महिला उत्त्थान के सम्बन्ध में भाषण दे रही थी। जोश में कहने लगी, मैं पूछती हूँ–यदि स्त्री न होती तो ये पुरूष कहाँ होते? पीछे से आवाज आई स्वर्ग में। कुछ लोग सिर्फ अपनी हुशियारी बताने के लिए पूछते रहते हैं वह भी उधार और मुर्दा प्रश्न होते हैं। मार्पा अपने गुरू के पास गया, नारोपा के पास। तो तिब्बत में रिवाज था कि सात परिक्रमाऐं की जायें फिर सात बार उनके चरण छुये जायें, सिर रखा जाएं, फिर साष्टांग लेटकर प्रणाम किया जाएं, जैसे खमासमण सूत्र में बताये अर्थ के अनुसार पंचाग प्रणिपात का अर्थ होता है कि इस सूत्र को बोलते समय अन्त में जब मत्त्थएण वन्दामि शब्द आये तब हमारे पांच अंग (1) दो घुटने (2) दो हाथ (3) मस्तक जमीन को छूने चाहिए। इसे कहते है पंचाग प्रणिपात सूत्र। फिर प्रश्न निवेदन किया जाए लेकिन मार्पा सीधा पहुँचा। जाकर गुरू की गर्दन पकड़ ली और कहा कि यह सवाल है। नारोपा ने कहा कि मार्पा, कुछ तो शिष्टता बरत, यह भी कोई ढ़ंग है? परिक्रमा कर दंड़वत् कर विधि से बैठ। जब में कहूँ कि पूछ तब पूछ। लेकिन मार्पा ने कहा जीवन है अल्प। और कोई भरोसा नहीं कि सात परिक्रमाएं पूरी हो जावें। और अगर मैं बीच में मर जाउं तो नरोपा, जिम्मेवारी मेरी कि तुम्हारी? तो नरोपा ने कहा कि छोड़ परिक्रमा पूछ ही ले। परिक्रमा पीछे कर लेना। नरोपा ने कहा है कि मार्पा जैसा शिष्य फिर नहीं आया। यह कोई कुतूहल न था, यह कोई अपनी डेढ़ हुशियारी नहीं थी, यह कोई ज्ञान का प्रदर्शन नहीं था, यह तो जीवन का सवाल था। यह ऐसे ही पूछने नहीं चला आया था। जिंदगी दांव पर होती है तब गहरी जिज्ञासा होती है। और जब ऐसी खुजलाहट होती है दिमाग की तब कुतूहल होता है। प्रश्न भीतरी जिज्ञासा को दर्शाते हैं। स्वाध्याय के पाँच प्रकार है। उस में दुसरा प्रकार "पृच्छना" है। पृच्छना अर्थात् प्रश्न। वाचना लेने के बाद प्रश्न पैदा न हो तो गुरू को पता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कैसे चलेगा कि शिष्य में जिज्ञासा है या नहीं। जिज्ञासा यानी जानने की समझने की इच्छा। यह जगत क्या है? कोई ज्ञानि तो कोई अज्ञानि क्यों है? मेरा स्वरूप क्या हैं? भविष्य में मुझे कैस बनना है? जो कर्म ज्ञान को ढ़ांके, ज्ञान का प्रकाश कम करे, ज्ञान पर आवरण डाले वह ज्ञानावरणीय कर्म कहलाता है। जैसे आंख में देखने की शक्ति है, लेकिन उस पर पट्टी बांध दी जाये तो वे देख नहीं सकती। उसि प्रकार आत्मा में सब–कुछ जानने की शक्ति होते हुए भी ज्ञानावरणीय कर्म के कारण जान नहीं सकती। ज्ञानावरणीय कर्म का जितना क्षयोपशम होता है, उतना ही आत्मा को ज्ञान होता है। उस से अधिक नहीं। क्षयोपशम का अर्थ। पानी में स्थित कचरा नाश को प्राप्त करता है तो क्षय है और कचरा नीचे बैठ जाता है तो उपशम है। जिनको ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कम होता है वह कम जानता है जिनका अधिक होता है वह अधिक जान सकता हैं। मनुष्यों में ज्ञान की जो इतनी बड़ी तरतमता दिखती है वह इस ज्ञानावरणीय कर्म के ही कारण है। ज्ञानावरणीय कर्म के उदय के कारण नहीं जान सकते कि मुझे किस कारण से ज्ञान चढ़ता नहीं है। याद किया हुआ क्यों भूल जाता हूँ। परन्तु जरूर कोई ऐसी बात हैं जिस कारण से बहुत रटने पर भी मुझे याद नहीं रहता है और अन्य को दो पाँच बार रटने से याद हो जाता है मेरा स्वरूप क्या है? वर्तमान में जो कुछ कर रहा हूँ वह मेरा स्वरूप नहीं है। जन्म–मरण मेरा स्वरूप नहीं है। अलग–अलग रूप धारण करना मेरा स्वरूप नहीं है। कोल्हू के बेल की तरह चारोंगति में घूमना मेरा स्वरूप नहीं है। कषायों से कुचलते रहना, वासनाओं में (खूंप) डूब कर/फंसकर रहना–मोह–ममता–माया करना मेरा स्वरूप नहीं है। मेरा असली स्वरूप है, शुद्ध, बुद्ध, अजर, अमर, उसे पाने के लिए तूं पुरूषार्थ कर। भविष्य में मुझे कैसा बनना है? इस प्रश्न के उत्तर में हमें अपने भविष्य का नक्सा तैयार करना है। नई इमारत का नक्सा है जो सुधारना हो सुधार सकते है। मैं भविष्य में व्रतधारी श्रावक बनने वाला हूँ, सज्जन, सदाचारी, साधु और अंत में सिद्ध बनने वाला हूँ। इस तरह आत्मचिंतन आत्मनिरीक्षण करता हुआ भयानक दुःख जनक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भूतकाल को भूलकर अपने भविष्य का जो नक्सा तैयार किया है उसी तरह जीवन को बनाने लग जायेंगे तो भविष्य बन जायेगा। जिन–जिन आत्माओं ने अपने भविष्य को सुधारा है। उन्होंने भूतकालीन भूलों का एकरार करके भूल के शूल को दूर किया है। जो भूल का एकरार कर के भूल को दूर करता है उसी का जीवन अच्छा बनता है। महान नैयायिक प्रखर प्रज्ञावान विश्वनाथ पंचानन भट्टाचार्य ने शिष्य राजीव के लिए न्यायमुक्तावली नामक ग्रन्थ बनाया। एक दिन उन्होने राजीव को पढ़ाना शुरू किया। धीरे–धीरे थोड़ा थोडा पढ़ते पढ़ते ग्रन्थ पूरा हुआ, फिर उन्होंने पूछा, बोलो अब तुम्हें कुछ पूछना है, कोई सवाल उठ रहा है? नहीं गुरूजी। सब कुछ अच्छी तरह से समझलिया हूँ कुछ भी पूछने जैसा नहीं है। मूर्ख! तुझे पूछने जैसा कुछ नहीं लग रहा है? तेरे अंतर में कोई प्रश्न ही नहीं उठ रहा है तो तूने कुछ पढ़ा ही नहीं है। चल, दुबारा इस ग्रन्थ को पढ़। शिष्य राजीव को पुनः पढ़ाना शुरू किया। पहले पढ़ चूके थे इस कारण से ग्रन्थ जल्दी पूर्ण हुआ। ग्रन्थ पूर्ण होने के बाद फिर वही प्रश्न दोहराया। कुछ पुछने जैसा लग रहा है? हाँ...... कहीं–कहीं पूछने जैसा लग तो रहा है। तुं अब कुछ पढ़ा है, परन्तु अभी भी ठीक से नहीं पढ़ा है, ग्रन्थ को फिर से पढ़ना होगा। पुनः अध्ययन शुरू हुआ। फिर वही प्रश्न! शिष्य राजीव में शनैः शनैः जिज्ञासा उत्पन्न होती है, प्रश्न पूछने का मन होता है। कई बार पढ़ाने के बाद एक दिन उसने कह दिया। गुरूजी अब तो पग–पग पर प्रश्न होने लगे हैं। एक–एक शब्द से मेरा मन प्रश्नों से भर जाता है। वाह! वाह! शाब्बास बेटे शाब्बास! सच्चे अर्थ में अब तुने पढ़ा है। प्रश्न ही नहीं जगे वहाँ वह पढ़ा हुआ क्या काम का? विश्वनाथ पंचाननजी बोले! प्रश्न उठने के बाद समाधान मिलने से ज्ञान निःशंक बनता है। ज्ञान मनुष्य पढ़ सकता है, सोच सकता है और आचरण भी कर सकता है। कंठस्थ करने से नहीं हृदयस्थ करने से ज्ञानि कहे जाते हैं।

जादुगर स्कूल में पढ़ रहे बच्चों के सामने खेल दिखाने लगा। बच्चे इकट्ठे हो गये। जादुगर ने पहले जलता अंगारा मुँह में डाला, फिर कागज,

For Private And Personal Use Only

उसके बाद काँच के टूकड़े मुहँ में ड़ाले, तत्पश्चात् पत्थर पेट में उतार दिये। सब बच्चे उत्सूकता और आश्चर्य भरी नजरों से सब देख रहे थे। खेल खत्म हुआ। जादुगर ने बालकों से कहा। बच्चों अब तुम मुझे आठआना रूपया दो। जिससे मैं कुछ खा कर पेट भर सकूं। एक बालक चिल्ला उठा बाप रें! इतना सारा खा लिया फिर भी ओर कुछ खाना है! इसके पेट में और कितनी जगह बची होगी! जिज्ञासु (प्रश्नकार) को जादुगर समझना। शायद जादुगर का पेट इन चीजों से भर सकता है परन्तु जिज्ञासु तत्त्वपिपासु का पेट बहुत ज्ञान मिलने पर भी भरता नहीं है। संसार में पुलिस चोर को पकड़ने में सक्षम होती है वैसे अज्ञान को मिटाने में ज्ञान समर्थ होता है। हिताहित का बोध ज्ञान से ही होता है अतः ज्ञान रूचि को विस्तृत करना चाहिए। ज्ञान की रूचि के बिना ज्ञानार्जन का प्रयत्न नहीं होगा। ज्ञान की रूचि के बिना ज्ञान पाने के लिए कौन मनुष्य प्रयास करता है? ज्ञान और अज्ञान से एक ही क्रिया करोड़ की और कोड़ी की हो जाती है, तब कौन ऐसा बेवकूफ होगा जो ज्ञान पाने का इच्छुक नहीं होगा? तीर्थंकर बनने के (बीस स्थानक) बीस कारण में भी ज्ञानपद हैं, तो ज्ञान रूचि का होना अति जरूरी है और इस ज्ञान/तत्त्व चिंतन से जबरदस्त कर्मसंवर और कर्म निर्जरा कर के कर्म की ताकत को निर्मूल कर सकते है। ज्ञान आत्मा का स्वभाव है और अक्षय, अनंत आनंद का कारण है। कुछ विद्यार्थियों में बात हो रही थी। किस विषय में अध्ययन करके आगे बढ़ें, डिग्री प्राप्त करें, आगे क्या बनना चाहते है? और क्यों? पहले ने कहा, मैं कॉमर्स करके बड़ा व्यापारी बनूंगा। भेलसेल, कालाबाजार, नकली चीजों से कुछ वर्षो में ही धनवान बन जाऊंगा। दूसरा बोला मैं कॉमर्स करके बैंक में एकाउन्टेन्ट बनूंगा। मेरे पिताजी भी बैंक में ही नौकरी करते है, इसलिए वहां मेरा नंबर लगना और भी आसान हो जाएगा। पश्चात् मैं केशियर बैंक मैनेजर, चपरासी आदि के साथ मिलकर लाखों हजारों का घोटाला करके चुटकी में देखते ही देखते करोड़पति बन जाऊंगा। तीसरे ने कहा मैं चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट बनुंगा। किसी कंपनी के हिसाब किताब में थोड़ा सा इधर उधर करके हजारों की फिस

For Private And Personal Use Only

लूंगा। चौथा बोल पडा मैं डॉक्टरी का अध्ययन करूंगा। फिर डॉक्टर बनूंगा। बिमारों को ठीक भी नहीं करूंगा और मारूंगा भी नहीं। बस! यूं ही दवाई इन्जेक्सन देकर धनवान बन जाऊंगा। पाँचवा बोला मैं एम.कॉम. करके प्रोफेसर बनूंगा। कॉलेज में पढ़ाने का पगार नहीं लूंगा, पर्सनल क्लासिस खोलूंगा, विद्यार्थियों को परीक्षा पेपर की जानकारी देकर उनसे रूपये एँठता रहूँगा। छट्ठे ने कहा मैं एल.एल.बी. का अध्ययन करूंगा, और वकिल बन कर केस लड़ूंगा और दो में से किसी को नहीं जिताऊंगा, फिर मैं दोनों और से पैसे लेकर मालामाल हो जाऊंगा। सातवें ने कहा मैं तो इन्जियनियर ही बनूंगा। क्योंकि मकान, बिल्ड़िंग, फैक्ट्री आदि के निर्माण में नकली सिमेन्ट लगाकर पैसे तुरन्त मिल जाते है अतः मैं इन्जिनियर बनूंगा। फिर अंतिम विद्यार्थी ने कहा मैं तो राजनीति का अध्ययन करूंगा। फिर राजनीति में घुसकर नामी नेता बन जाऊंगा, बाद में तुम जैसे लोग काम निकलवाने के लिए आएंगे बिन पैसे खाये काम नहीं करूंगा। मैं भी स्वीज बैंक में खाता खुलवाऊंगा।

इस युग में ज्यादातर डिग्रीप्राप्त लोगों की यही धारणा और मानसिकता है। परन्तु **यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः तज्ज्ञानमेव नास्ति।** जिसकी मौजुदगी में राग-द्वेष विषय ममता आदि चकमते है। वह ज्ञान की रोशनी नहीं हो सकती। ज्ञान के प्रमुख चार काम है-(1) मोह को हटाना (2) सन्ताप रहित करना (3) चित्त को एकाग्र करना और (4) आत्मा के सहज गुणों का पालन करवाना।

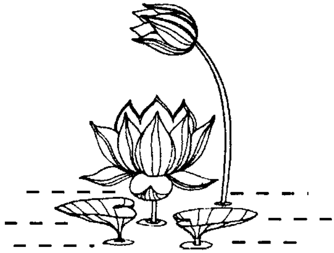

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

13

शौचम्

"पवित्रता रखनी"

एक घटना के माध्यम से अपनी बात प्रारम्भ करता हूँ, क्योंकि घटना एक सेतु है, आपके दिल तक पहुँचने का। प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कोई न कोई घटना अवश्य घटती है, जो उसके लिए प्रेरणा भी बनती है, निराशा भी। लेकिन यह घटना आपके लिए प्रेरणादायक सिद्ध होगी शौचम् को समझने और अशौचम् को छोड़ने के लिए।

एक देहाती था, बिल्कुल भोला–भाला, सीधा–सादा। ध्यान रखियेगा भोले आदमी और सीधे आदमी में फर्क होता है। या तो समझ विहीन आदमी सीधा होता है या पूर्ण समझदार आदमी सीधा होता है। भोला आदमी बाहर से सीधा नजर आता है, पर भीतर से मौके की तलाश में रहता है, सीधा आदमी जो करना होता है तत्क्षण कर देता है, या करने का संकल्प कर लेता है, पर भोला आदमी अवसर की तलाश में रहता है।

वह देहाती था। उसने बम्बई का नाम बहुत सुना था तो उसे हुआ कि एक बार बम्बई की सैर कर आये, देखे तो सही वहाँ कितने बड़े होटल है, कितनी बड़ी इमारते है, डबलडेकर बस कैसी होती है। वह बम्बई देखने चला। बम्बई पहुँचा तो, वहाँ के रंग–रोगन को बड़ी–बड़ी बहु मंजिला इमारतों को बड़ी–बड़ी गाड़ियों, बस, जीप, मोटर कार समुद्र और लोगों की चहल–पहल को देखता है तो विस्मय से भर जाता है। ये क्या? इतने सारे झुंड के झुंड तो हमारे गाँव में गाय भैंसों के निकलते हैं। यहाँ मोटर कारों गाड़ियों के झुंड है। वह देखता हुआ और सोचता हुआ आगे बढ़ रहा था, आगे उसे एक हॉटल नजर आया तो उसने सोचा देहात में ऐसा हॉटल कहाँ, चलो आज इस होटल में रोटी की बजाय पकवान खाये जाये। वह सभी हॉटलों में जाता है और कुछ न कुछ खाता है। जैसे आप कहीं से गुजरते है, मुँह में कुछ भी डाल लेते है यह जानवर की प्रकृति है इंसान की नहीं। जैसे बकरी सभी जगह मुँह मारती है, कुत्ता सभी पदार्थो को सूंघता है उस प्रकार इंसान भी करता है। उस देहाती ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सभी हॉटलों में कुछ न कुछ खाया। जरूरत से ज्यादा पेट को भर लिया तो आप जानते ही है अति के बाद इति हो जाती है।

अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।।

अति बोलने से बकवादी, प्रलापी, वाचाल की संज्ञा पाता है। प्रसंग पर भी नहीं बोलने वाला तिरस्कार पात्र होता है। अत्यधिक बरसात जन–जीवन को, खेत खलियानों को नष्ट कर देती है और ज्येष्ठ–वैसाख की धूप त्राहि–त्राहि मचा देती है। तो अति इति का कारण है। उस देहाती ने खाने में अति की, परिणाम! पेट में पड़ा पकवान गड़बड़ करने लगा, इतनी भीड़ में शंका का समाधान कहाँ करें? देहात में तो चारों तरफ जंगल होता है, खेत होते है पर बम्बई में तो .... एक शंका ने बम्बई की सुन्दरता समाप्त कर दी। गाड़ी हॉटल बिल्डींग सबभूल गया क्योंकि जिधर जाता जिधर देखता आदमी नजर आये। काफी दूर जाने के बाद एक पार्क आया तो वहाँ एक बोर्ड में लिखा हैं, "यहां गन्दगी करना सख्त मना है"। अब उसकी परेशानी ओर बढ़ गयी। आस–पास देखता है, सुनसान है अपना काम कर लूं परन्तु मन कहता है कि किसी ने देख लिया तो बेमौत मारा जाऊंगा। याद रखना, गलत काम करने वाला सदैव भीतर से भयभीत रहता है फिर भी वह साहस करता है देहाती ने अन्दर जाकर अपना काम कर लिया। इतने में दो पुलिस वाले आ गये वह ड़र का मारा अधमरा हो गया क्या करूं? क्या न करूं? सोचता है कि कहीं ये पुलिस वाले देख लेंगे तो खाल उधेड़ देंगे। हे भगवान! ओर कुछ नहीं सूझा तो आनन–फानन में अपनी पगड़ी उतारकर उसके ऊपर रख दी। पुलिस वहाँ पहुँची और कड़क कर पूछा क्यों यहाँ क्या कर रहे हो? साहब कुछ नहीं वैसे ही आ गया। बम्बई घूमने आया था थक गया तो यहाँ आकर बैठ गया........ पर पगडी क्यों उतारी? साहब गर्मी लग रही थी पुलिस वाले पूछकर आगे बढ़ गये फिर उनके मन में विचार आया, यार यह देहाती है इसका माल लो। वे दोनों दुबारा देहाती के पास पहुँचें और उससे कहते हैं चलो उठाओ अपनी पगड़ी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जाओ यहां से। देहाती डर गया अगर पगड़ी उठायी तो गया काम से सारी पोल–पट्टी खुल जायेगी। फिर भी साहस करके वहीं बैठा रहा। पुलिस वाले फिर कहते हैं कि चलो उठो, जाओ यहाँ से, तो वह गिड़गिड़ाने लगा और कहने लगा साहब माफ करना .... दरअसल बात यह है कि मेरे घर में एक बहुत प्यारा तोता था। वह हमेशा राम...... राम... बोलता था, अगर दरवाजे पर टांग देता तो कोई भी अतिथि आता तो सुस्वागतम् कहता था, नमस्कार......... नमस्कार............. बोलता था, एक दिन मेरे बेटे ने पिंजरा खोल दिया तो तोता उड़कर यहाँ आ गया, काफी समय के बाद आज यह पकड़ में आया है इसीलिए मैंने पगड़ी से तोते को ढ़क दिया है सोच रहा हूँ पहले पिंजरा ले आऊं फिर तोते को ले जाऊं, पर ड़र है मैं जाऊं और तोते को कोई ले न जाये। दोनों पुलिस वाले सोचते हैं कि तोता तो अच्छा है, मौका भी अच्छा है, दोनों नजरें मिलाते है, दोनों एक दूसरे के भावों को समझ जाते हैं, और देहाती को पिंजरा लेने रवाना कर देते है। देहाती को यही चाहिए था, वह भागा यही सोचकर कि जान बची तो लाखों पाये, पीछे मुडकर नहीं देखा। यहाँ दोनों पुलिस वालों में विवाद हो गया कि तोता कौन ले। विवाद काफी बढ़ गया फिर आखिर यह निर्णय लिया गया कि दोनों एक–एक हाथ ड़ाले जिसके हाथ में तोता आयेगा, वही तोते को ले जाएगा। दोनों ने हाथ डाल काफी देर तक ढूंढा परन्तु तोता हाथ में नहीं आया उनके हाथ जरूर अपवित्र हो गये। देहाती ने माया करके खुद को अपित्र किया और पुलिस वालों ने पगड़ी में हाथ डालकर अपने को अपवित्र किया।

शिष्य गुरू से पूछ रहा है कि हे भगवन्! दुनिया में सबसे पवित्र आदमी किसे मानना? शिष्य के इस प्रश्नोंत्तर में गुरू कहते है– हे वत्स! स्नान से खुद के शरीर को स्वच्छ–शुद्ध पवित्र मानने वाले बहुत है। परन्तु वह बाहरी पवित्रता है, उससे सिर्फ शरीर का मेल दूर होता है। वह पवित्रता क्षणिक है, क्योंकि कुछ ही देर में शरीर फिर मलिन/गंदा हो जायेगा। भीतर तो गंदगी का प्रवाह बहता ही रहता है। वास्तविक पवित्रता तो उसे मिलती है कि जो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुद्ध भावरूप जल से स्नान करके अपने राग–द्वेष रूप आंतरिक मेल को दूर करता है और अपने चित्त को अति निर्मल करता है।

इस तरह जिसका अंतःकरण राग–द्वेष रूपी मेल दूर होने से अत्यंत स्वच्छ हुआ है, वही सबसे पवित्र है।

देवों का शरीर वैक्रिय होता है। कितने भी भोग भोगो थकता नहीं है। बहुत बारिक सुक्ष्म और उत्तम पुद्गलों से बना होता है। पसीने से रहित होता है। नौ अथवा बारह द्वार अर्थात् नाक आदि से गंदगी निकलती नहीं है। रोग और मेल इत्यादि से रहित होता है। मानवीय शरीर की अपेक्षा कई गुना विशिष्ट प्रकार की सुंदरता और भव्यता होती है। इसकी तुलना में मानवीय शरीर भोग भोगने से थक जाता है, रोग ग्रस्त हो जाता है। स्थूल तो है ही, और श्रेष्ठ पुद्गलों से भी बना हुआ नहीं है। पसीने की बदबू से भरा है। निरंतर नौ (बारह) द्वारों से अंदर की गंदगी बाहर निकलती रहती है। कई रोगों से घिरा हुआ है। धोकर साफ स्वच्छ करने पर भी फिर मलिन हो जाने के स्वभाव वाला है। देवों के शरीर की तुलना में कुरूप और काला है। जैसे शालीभद्रजी श्रेणिक महाराजा के श्वासोच्छावास को भी सह नहीं पाये थे, वैसे देव भी मनुष्य के शरीर से निकलने वाली गंदगी को सह नहीं पाते है।

घर में जब कोई मंदिर बना लेता है, तो उस मंदिर में सोता नहीं है, उस मंदिर में लड़ने–झगड़ने नहीं जाता, खान–पान भी उस मंदिर में नहीं करता, उस मंदिर में सिर्फ दर्शन–पूजन–प्रार्थना को जाता है। हर तरह से मंदिर को साफ–सुथरा और पवित्र रखा जाता है। घर कितना ही अपवित्र हो उस कोने को पवित्र रखता है, वैसे ही शरीर भी एक मंदिर है वह घर वाला मंदिर प्रभु का मंदिर है, और शरीर आत्मा का मंदिर है। जिस तरह मंदिर को पवित्र रखा जाता है वैसे ही शरीर को भी पवित्र रखा जाना चाहिए। जीवन को भी पवित्र रखा जाना चाहिए। घर के मंदिर में पवित्र कार्य होते है वैसे जीवन में भी पवित्र कार्य होने चाहिए। जब घर के मंदिर में विराजित भगवान की इतनी चिंता करते हैं, तो शरीर में विराजित आत्मा की चिंता क्यों नहीं करते।

For Private And Personal Use Only

बात है पवित्रता की। पवित्रता तीन प्रकार की है (1) शारीरिक (2) वाचिक और (3) मानसिक। शारीरिक पवित्रता रखना सरल है। केवल स्नानादि से कोई भी प्राप्त कर सकते है। शरीर पर पानी डालो साबु सेम्पु लगाओ। फिर शरीर को घिसो मेल पसीना दुर्गन्ध चली जायेगी। नाक साफ कर लो, ब्रस कर लो, मंजन कर लो, नाखुन से मेल निकाल लो हो गये पवित्र आपकी भाषा में पवित्रता आ जाएगी। अंग्रेज वह भी मुश्किल से करते है सिर्फ हाथ मुँह धोये पाउड़र, सेन्ट लगाया और पवित्र हो गये बड़ा आसाना है शारीरिक पवित्रता को प्राप्त करना।

मैं कह रहा हूँ काया की पवित्रता की बात। एक शुभाषित में कहा हैं–

कुचेलिनं दंतमलाव धारिणं,
बह्वासिनं निष्ठुर वाग्भाषिणम्।
सूर्योदये चास्तमने च शायिनं,
विमुञचति श्रीर्यदि चक्रपाणिनम्।।

आदमी अगर विष्णु जैसा महान् हो.........! परन्तु गंदे वस्त्र पहनने वाला हो गंदे दांत रखता हो......... बहुत आहारी (अधिक खाने वाला) हो .... सूर्योदय और सूर्यास्त के समय सोने वाला हो......... ऐसे को लक्ष्मी छोड़ चलती है। अतः वस्त्रादि को भी साफ और पवित्र रखिये।

एकेन्द्रिय अवस्था में सिर्फ काया मिलती है। अकेली काया से पूर्व करोड़ वर्ष का आयुष्य बंधता है : विकलेन्द्रिय अर्थात् द्विन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चउरिन्द्रिय भी पूर्व करोड़ वर्ष का बांधते है। असंज्ञी पंचेन्द्रिय उत्कृष्ट से पल्योपम का असंख्यतवाँ भाग जितना बांधते हैं, जबकि संज्ञी पंचेन्द्रिय उत्कृष्ट से तेत्तीस सागरोपम का आयुष्य बांधते है। ऐसे मन वचन और काय योग हमें प्राप्त हुए है। इस योग का उपयोग हम किस तरह कर रहे हैं? काय योग कपड़े के व्यापार जैसा है। वचन योग मोती के व्यापार जैसा है और मन योग हीरे के व्यापार जैसा है। कपड़े के व्यापार में महेनत ज्यादा परंतु कमाई कम, मोती

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और हीरे के व्यापार में मेहनत कम और कमाई अधिक इस व्यापार में कमाई की संभावनाएँ ज्यादा है। रातोरात धनाढ़य बन सकते है, परन्तु जोखिम भी उतना ही है। मोती हीरे का व्यवसाय करना शिख ले तो मालामाल हो सकते हैं, वरना बरबाद हो जायेंगे।

काया से होने वाली साधना–आराधना कपड़े के व्यापार जैसी है, तप–ध्यान, काउस्सग्ग (कायोत्सर्ग) सब मर्यादित होता है। सिर्फ कपड़े के व्यापार से धनवान नहीं बना जाता। वैसे अकेले काययोग के सुकर्म से मोक्ष में नहीं पहुँच सकते। काया से पवित्र बनों क्लीनमेन बनो। जिसने अपने जीवन में जान बुझकर अथवा नादानी और अज्ञानता में भूल की हो। युवानी के मद में पाप किये हो। दोस्तों की बातों मे आकर पापाचरण किये हो फिर सच्ची समझदारी आने पर उस रास्ते से लौट आये हो, जीवन में किये सारे पापकर्मों को याद करके जो पश्चाताप, क्षमायाचना करता है। फिर बचे हुए जीवन में पाप का परित्याग करता है वही पवित्र पुरूष कहा जाता है। भगवान महावीर के शासन में एक नहीं अनेक आत्माएँ इस तरह से मोक्ष में गई हैं। घोरातीघोर पाप करने वाले सुबह–सुबह जिनके नाम लिये जाते है। ऐसे इलाचीकुमार, दृढ़प्रहारी, अर्जुनमाली ने 163 दिनों में 1141 स्त्री पुरूषों की हत्याएं (मार डाले थे) की थी। रोहिणेय...... चिलातीपुत्र जैसी आत्माएँ उसी भव में मोक्ष गामी बन गई थी। वचन योग को भी पवित्र रखिये शुभ वचन योग कर्म निर्जरा कराता है। प्रभु के गुणगान, गुणियों के गुणानुवाद, गुण की प्रशंसा वाणी से होती है। परमात्मा की स्तुति से अंतरमन धवल बनता है, जन्म–मरण मिटता है। वचन योग के पांच दोष है– (1) कर्कशता (2) निष्ठूरता (3) निंदा (4) मजाक और (5) असत्य। बोलना तो कैसा बोलना! कहा प्रिय–हितकारी और सत्य वचन ही बोलना। एक कहावत है सोने में सुगंध, यानी एक तो सोना हो और उसमें सुगंध मिल जाय तो फिर कहना ही क्या? खूबसुरती अगर सोना है तो मधुरवाणी सुगंध है। दुनिया में ऐसे कितने ही लोग है जो रूपवान जरूर है परन्तु वचन कटु है, जिनके रूप को देखकर हमने संबंध स्थापित किया, परन्तु

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संबंध के बाद ही पता चला कि ये वचन नहीं अपितु अंगारे हैं। कई स्त्रियाँ ऐसी होती हैं, जिनके शब्द कांटों के समान होते है। उनकी कर्कशवाणी वातावरण में कलह पैदा कर देती है। कुछ लोगों के वचन इतने निष्ठूर होते है कि सामने वाला जीते जी मर जाता है, तो कई लोगों के वचन में अर्थात् बात-बात में निंदा का रस घुला होता है। जब-जब हम अप्रिय अहितकर और असत्य वचन बोलते है तब-तब माँ सरस्वती का अपमान करते हैं, ऐसा बोलकर हम वाचिक रूप से अपवित्र बनते है। वाचिक पवित्रता प्रिय हितकर और सत्य वचन से प्राप्त कर सकते हैं। किन्हीं लोगों के वचन मजाक से भरपूर होते हैं, तो किन्हीं लोगों के वचन में अकारण ही असत्य का हलाहल भरा होता है। व्यक्ति खुद तो झूठ बोलता ही है साथ ही उस कली को भी गलत मोड़ देता है। जो उपवन की सुन्दरता बनने वाली है। झूठ जन्म की देन नहीं है बल्कि उन लोगों की है जो खुद कीचड़ में फँसे है और दूसरों को फँसाने के लिए भी जाल फेंक रखा है। पता होगा, बालक सत्य का रूप कहा गया है।

वास्तव में शिशु कभी असत् का भागीदार नहीं होता। अभिभावक ही उसे असत के दाँव पेच लड़ाना शिखा देते है। वे ही बच्चों को झूठ बोलने के संस्कार देते है। घर में टेलीफोन की घण्टी बजी। ढब्बू ने रिसीवर उठाया। फोन करने वाले आदमी ने ढब्बू से पूछा तुम्हारे पिताजी है? ढ़ब्बू ने कहा जी, देखकर बताता हूँ। ढ़ब्बू कमरे में गया। कहा पिताजी! सोहनराजजी (अंकल) का फोन आया है। आपके बारे में पूछ रहे हैं क्या जवाब दूँ? पिताजी ने कुछ सोचा और कहा, कह दो घर में नहीं है। ढ़ब्बू फोन के पास आया माउथपीस कान से लगाकर बोला, जी! पिताजी कह रहे है कि कह दो घर में नहीं है। वास्तव में लोग झूठ के इतने अभ्यस्त हो गये है कि उन्हें झूठ तो व्यावहारिक लगता है और सत्य अव्यावहारिक। मनोयोग, कपड़ा गंदा हो तो शोभास्पद नहीं होता , वैसे मन भी मलिन नहीं होना चाहिए। मनको स्वच्छ पवित्र बनाने के लिए शुक्लध्यान चाहिए, हम तन और धन को जितना संभालते है उतना मन को नहीं संभालते। शरीर गंदा, मेला होगा तो मोक्ष मिलेगा परंतु मन मेला होगा

For Private And Personal Use Only

तो मोक्ष नहीं मिलेगा, शरीर के साथ वेदनीय कर्म जुड़ा है, तो मन के साथ मोहनीय कर्म जुड़ा है। त्रियोग में कर्मबंधन कराने वाला मन है। विचार शुद्ध हो तो उच्चार शुद्ध निकलते है। मन की मलिनता को मिटाने के लिए संयमभाव शस्त्र के समान है। जैसे घड़ी में तीन कांटे हैं। घण्टे का, मिनट का और सैकेन्ड का। वैसे मन, वचन और काया के तीन कांटे हैं। सैकेन्ड का कांटा सांठ बार धक्का लगाये तब मिनट कांटा एक बार खिसकता है। मिनट का कांटा सांठ धक्के मारे तब घण्टे का कांटा खिसकता है, वैसे मन का कांटा धक्का लगाये तब वचन बोला जाता है और वचन का कांटा धक्का मारे तब काया को धक्का लगता है। मन के कांटे को प्रयत्न पूर्वक स्थिर रखने की जरूरत है।

आजकल शराब, अण्डे, मांसादि व्यशनों से काया को अपवित्र किया जा रहा है जैसा खायेंगे विचार भी वैसे ही आयेंगे। अफ्रिका के डरबन शहर में कस्तुरबा बीमार हुए। तब वहाँ डॉक्टरों ने उनको सलाह दी मांस खाने की। गाँधीजी ने पूछा बोल तेरी इच्छा क्या है? कस्तुरबा ने जो जवाब दिया, गांधीजी ने आत्म कथा में लिखा है। आप मुझे मांस खाने की इच्छा पूछ रहे हो? यह मनुष्य जन्म बार–बार नहीं मिलता है। अतः मैं इस देह को मांस खा कर अपवित्र करना नहीं चाहती। मौत कल आनी हो आज आये। मैं मांस खाकर जीऊं उससे अच्छा है राम का नाम लेते–लेते मर जाऊं! जो लोग व्यशनों से अपने शरीर को अशुद्ध, गंदा करते हैं उनके गालों पर कस्तुरबा का जवाब करारा तमाचा है। कषाय भी अपवित्र करते हैं। निमित्त मिलते ही कषाय भाव आ जाते है। क्रोध, करूड़ और उत्कुरूड़ दोनों मुनि महान तपस्वी थे। नगर के लोगों ने किसी कारण से उनका अपमान तिरस्कार किया उस निमित्त से क्रोध के वशीभूत होकर समग्र नगर के संहार के लिए सात–सात दिन रात तक बरसात गिराकर नगर का विनाश किया, और वे सातवीं नरक में गये। त्रिपृष्ठ वासुदेव ने शय्यापालक के कान में क्रोध कषाय के कारण गरम–गरम सीसा ड़लवाया, वे भी सातवीं नरक में गये। क्रोध के कारण स्कंदिलाचार्य मरकर व्यंतर बन गये। चंडकौशिक की आत्मा पूर्व के साधु के भव में शिष्य के निमित्त

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्रोध कर के कहाँ से कहाँ चले गये। बाहुबलीजी ने एक वर्ष पर्यंत घोर तपश्चर्या की, लताएँ शरीर से लिपट गई, पक्षियों ने शरीर पे घोंसले बना दिये मकडियों ने जाले बना दिये, फिर भी ध्यान से विचलित न हुए। इतना तप, जप करते हुए भी केवल ज्ञान प्राप्त करने में मानकषाय के कारण विलंब हुआ।

मायाकषाय मल्लिकुमारी ने पूर्वभव में मित्र से माया की तो उस मायाकषाय ने स्त्री का अवतार दे दिया। धर्मराजा युधिष्ठर ने एक ही बार कहा– **"अश्वत्थामा मृतः नरो वा कुंजरो वा"** ऐसा कपट भरा वचन बोलने से सदैव जमीन से उपर उठकर रहने वाला उनका रथ जमीन पर आ गया।

लोभकषायः से क्या हालत होती है यह भी सुन लिजिये, एक राजकुमारी वैराग्य वासित हो कर दीक्षा के लिए तत्पर हुई, दीक्षा भी ली परंतु अपने पास रहे रत्नों का मोह छुटा नहीं था। दीक्षा तो ली परन्तु रत्न भी साथ रख लिए। इसकी जानकारी किसी को भी नहीं होने दी। नित्य उन रत्नों को देखकर खुश होती है, उनकी आसक्ति अंतिम समय भी नहीं छुटी, परिणाम मरकर छिपकली बनना पड़ा। मम्मण शेठ भी लोभकषाय के कारण ही मरकर सातवीं नरक में चले गये। तो कषाय करके आत्मा को अपवित्र करके दुर्गति के मेहमान मत बनों।

आत्मा नदी संयमतोयपूर्णा।
तत्राऽभिषेकं कुरू पाण्डुपुत्र।
न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा।।

अजैन महाभारत की एक घटना है। पाँच पांडव अड़सठ तीर्थो की यात्रा के लिए निकल रहे थे। माँ कुंती ने कड़वी तुंबड़ी देकर कहा। तुम अड़सठ तीर्थों की यात्रा के लिए जाने वाले हो। तुम एक काम जरूर कारना प्रत्येक तीर्थ में तुम स्नान करोगे तब इस तुंबी को भी स्नान करवाना। माँ की बात का स्वीकार करके वे अड़सठ तीर्थों की यात्रा के लिए निकल पड़े। हर तीर्थ में उन्होंने स्नान किया और तुंबी को भी हर तीर्थ में स्नान कराते रहे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बहुत समय बाद जब पांडव लौटे तो वह तुंबी माँ को सौंप दी। माता कुंती ने उस तुंबी की सब्जी बनाकर सभी की थाली में (रख दी) दे दी। सब्जी मुँह में डालते ही पाँचों ही पांडव थू...... थू........ थू.......... करने लगे। क्यों? क्या हुआ? थू..... थू.........थू.......... क्यों कर रहे हो? माता कुंती ने पूछा। माँ यह सब्जी तो कड़वा जहर है। माँ ने कहा उस कड़वी तुंबी का ही ये शाक है। मुझे ऐसा विश्वास था कि अड़सठ तीर्थो में स्नान कराने से वह मीठी हो गई होगी। क्या अभी भी वह कड़वी ही है? माँ! वह तो कड़वी ही रहेगी न! बाहय स्नान व्यर्थ है।

हे पांडु पुत्र! आत्मा ही नदी है, संयम के जल से भरी हुई नदी। वहाँ ही तू स्नान कर क्योंकि बाहय्र जल से अंतरात्मा शुद्ध नहीं हो सकती।

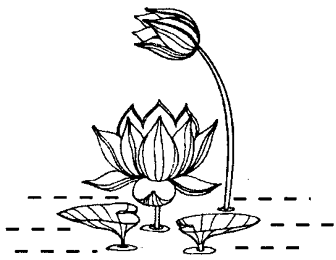

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

14

स्थैर्यम्

"स्थिरता रखनी"

समय का जादु जगत के समस्त पदार्थों और मनुष्यों पर समान रूप से असर कर रहा है। प्रत्येक पदार्थ को पर्याय की अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। पर्याय की तुलिकाहर किसी के उपर पल–पल में फिरा करती है। कोई अवस्था स्थिर नहीं होती । काल का जादु कहाँ रूकता है। नया जीर्ण बनता है,लघु ज्येष्ठ बनता है, सुक्ष्म स्थूल बनता है, रिवला कुम्हलाता है, तंदुरस्त म्लान बनता है, फिर भी हम जैसे कई इस जादु के जाल में मुग्ध होकर फंसते रहते हैं। नवजात शिशु धीरे–धीरे माँ की गोद छोडकर स्वयं दुध, पानी पीने लगता है। शिशु से शैशव, तरूण, युवा, प्रौढ़ और वृद्ध। निवृति की अवस्था में पहुँचने पर जैसे ऑफिस/दफ्तर से एक के बाद एक व्यक्ति निवृत्त होते जाते हैं, वैसे मुँह से एक के बाद एक दाँत गिरते जाते है। काल की तुलिका फिरती है मुँह पर झुरियाँ आ जाती है, कमर कमान की तरह हो जाती है, पाँव टेढ़े हो जाते है। प्रसृति गृह से प्रारंभ हुई जीवन यात्रा मरघट में समाप्त होती है। खेत में कपास देखकर किसी को कल्पना भी न आये कि इस पर कई प्रक्रियाएँ होंगी और कपास मनोहर सूट में बदल जायेगा। दो तीन पिकनीक या पार्टी में वह सूट बहुत उपरी स्थान पायेगा, पश्चात् उसका स्थान धीरे–धीरे नीचे गिरता जायेगा और एक दिन आयेगा जब कपाट में लटके रहने के लिए एक हेंगर भी नहीं मिलेगा अर्थात् कपाट में उसकी जगह नहीं रहेगी। 5000 के उस सूट की जगह कागज के बोक्स, लोहे या एल्युमिनियम की पेटी में होती है। प्लास्टिक कंपनी में बना बास्केट किसी ऑफिस में स्टेशनरी रखने के लिए मैनेजर के टेबल पर जगह पाता है, दिन बितते–बितते उसका रंग फिका पड़ जाता है और मैनेजर के टेबल से उस बास्केट की छुट्टी हो जाती है। ऑफिस के किसी एक कोने में डस्टबीन की अपमानित दशा को प्राप्त करता है। जिसमें क्लार्क पीक करते हैं। बील्डर, कोन्ट्राक्टर, आर्कीटेक्ट और इन्जीनियर इत्यादि की कुशलता से एक सुंदर बंगला तैयार होता है। प्लास्टर ऑफ पेरीस की छत,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महंगे गलीचे और आकर्षक फर्निचर के साथ वह बंगला कुछ वर्ष शोभास्पद लगता है, फिर धीरे– धीरे रंग फिका होता जाता हैं, उसकी डिजाईन पुरानी हो जाती है, दिवारों में दरारे हो जाती है, रीपेरर और प्लम्बर को बार–बार बुलाना पड़ता हैं। आखिर में वह बंगला किराये दिया जाता है, एक समय का सुन्दर बंगला वक्त गुजरते खंडहर बन जाता है। गाय–भैंस के पेट में चार–पाँच घंटे में न जाने क्या रसायनिक प्रक्रिया होती है कि घास सफेद दूध में रूपांतर हो जाती है। उस दूध का दहीं, दहीं का मक्खन, मक्खन का घी और घी से मिठाई बनती है। किसी की शादी की शान बनने वाली मिठाई कुछ घंटो में दुर्गन्ध युक्त विष्टा बन जाती है। जापान के बने गोगल्स, मेड़ इन U.S.A. की पेन तुटने के बाद कचरपट्टी को मुबारक होती है, उसे फेंकने के लिए जापान या U.S.A. नहीं जाते है। मिठाइयाँ, रोटी, सब्जी पहले आदमी की भूख मिटाती है फिर सुवर की भूख मिटाने योग्य बन जाती है। वस्तु/पदार्थ की परिवर्तनशील अवस्थाओं को जानने के बाद भी आदमी उन पदार्थों में स्थिरता की कामना करता है। बदलती अवस्थाओं को देखकर उसके चेहरे की रेखाएं बदलती है।

राजा, मंत्री और कुछ साथी घूमने निकले थे, रास्ते में चलते–चलते गटर से निकलती दुर्गन्ध से सभी ने घूटन महसूस की, मंत्री के शिवा सभी ने नाक बंद कर ली। उससे साश्चर्य बने सभी ने मंत्री को उपहास का केन्द्र बनाया तब मंत्री ने उनसे कहा अत्तर सूंघकर क्या खुश होना और इस दुर्गन्ध से क्या ना खुश होना? यह सब पुद्गल का खेल है, मंत्री का यह तत्त्वज्ञान राजा की समझ में नहीं आया। बहुत दिनों बाद मंत्री ने भोजन समारंभ में राजा को दावत दी। बत्तीस पकवान, तेंतीस व्यंजन, पेंतीस फरसान यह देखकर सब खुश हो गये। शीतल पेय ने सब को प्रसन्न कर दिया। परन्तु आज के समारंभ की सब से श्रेष्ठ वेराइटी क्या? इस प्रश्न के उत्तर में सर्वानुमत से एक ही चीज थी, वह कोई पकवान या मिठाई नहीं थी, नमकीन या मुखवास भी नहीं था, परन्तु सभी के मन में भोजन समारंभ की श्रेष्ठ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वेराइटी थी ठंडा, सुगन्ध युक्त जल। राजा से रहा नहीं गया उन्होंने पूछ ही लिया, यह जल तो बहुत अच्छा लग रहा हे नगर के किस कुएँ का है? या कहीं बाहर से मंगवाया हैं? मंत्री बोला। राजन! कुएँ से क्या मतलब? पानी से मतलब है न? परन्तु राजा ये जानना चाहते थे उनके मन में ये उत्सूकता तीव्र थी कि पानी कहां से लाया गया है? मंत्री बोले राजन्! पहले आपकी तरफ से निर्भयता का वचन चाहता हूँ। अरे मंत्रीश्वर! आप निर्भयता के वचन की बात कर रहे है? पानी का उत्पत्तिस्थान जानने के बाद मैं तुम्हें बक्षिस दूंगा, क्योंकि इस पानी से मैं बहुत–बहुत तृप्त और तुष्ट हुआ हूँ। तब मंत्री बोले राजन्! यह किसी कुएँ बावडी, नदी, गांव, नगर से लाया गया पानी नहीं है। परन्तु आपको याद होगा आज से कितनेक दिन पहले आप मैं और कुछ साथी एक गटर के निकट से गुजर रहे थे उससे भयंकर दुर्गन्ध निकल रही थी, दुर्गन्ध से आपने घूटन महसूस की थी और मैं उस पुद्गल के खेल से स्वस्थ रहा था। उसी पानी को शुद्ध बनाया अनेक प्रक्रियाओं से उसे ही मीठा और सुगन्धित बनाया है। यह पानी भी मुझे अस्थिर नहीं बना सकता क्योंकि यह भी पुद्गल का ही खेल है, यह मैं जानता हूँ। जिस पानी को देखकर, थूंकने का मन होता था, दुर्गन्ध से नाक बंद करने का मन होता था, घृणा होती थी, वही पानी घुंट भर–भर कर पीने का मन होता है। दोनों ही पुद्गल की शुद्ध और अशुद्ध अवस्थाएँ है, ऐसा समझने वाला विद्वान दोनों परिस्थितियों में अपने मन के भावों की स्थिरता रख सकता है। वैराग्य की दृढ़ता और मन की स्थिरता के लिए खुद की तीन अवस्थाओं का चिंतन बहुत उपयोगी दिखता है। बचपन के खेल–कुद, यौवन की मस्तियाँ सपने और भावी वृद्धत्व की पराधीनता को प्रतिदिन हर व्यक्ति को नजर के सामने लानी चाहिए। मुवी के सुंदर दृष्य के समान बचपन या बिजली की चमक जैसा यौवन गुजार कर जीवन की नाव वृध्धत्व पाकर लाचार बन गई है। जो वस्तु या व्यक्ति रागद्वेष के निमित्त लेकर उपस्थित हो उससे बचने के लिए उसकी भूत, भावि और वर्तमान अवस्था का विचार करते मन स्थिर और स्वस्थ रह सकता है। प्रतिदिन सवेरे–सवेरे ताजा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समाचार का अखबार फेरिया फेंक जाता है, उस अखबार को जाग्रत आत्मा आने वाले कल की पस्ती में देखती है, जिसके टूकडों में हलवाई मिठाई बांधकर देने वाला है। जाग्रत आत्मा को स्टील सेट में कबाड़ा नजर आता है। मखमल के गलीचे में उसे चिथडों के दर्शन होते है पदार्थ के परिवर्तन में मन को स्थिर रखना बहुत बडी साधना हुआ करती है अतः पदार्थ परिवर्तन में भी मन की स्थिरता आनी चाहिए। आत्म साधना के लिए स्थिरता बहुत जरूरी है। यूं तो किसी भी कार्य के लिए स्थिरता अनिवार्य है। स्थिरता का मतलब सभी शक्तियों का एक ही जगह पर केन्द्रिकरण। बिलोरी काँच से जब सूर्य धूप एक ही बिंदु पर स्थिर केन्द्रित बनती है तब वह बिंदु वाला रूई, कपड़ा जलने लगता है। केन्द्रीकरण की कितनी बड़ी ताकत है। जगह–जगह दो–दो फिट जमीन खोदने से पानी होगा तो भी नहीं मिलेगा, परंतु एक ही जगह पर खोदे तो? चंद्रयश राजा के हृदय में धर्म स्थिर बना था। उन्होंने श्रावक व्रत स्वीकार किये थे। उन्हे नित्य ध्यान धरने का नियम है। एक बार ध्यान धरते हुए ऐसा संकल्प किया कि दीपक जलता रहे वहाँ तक मुझे ध्यान धरना है और वे आत्मभाव में ध्यानस्थ खड़े है। रात का प्रथम प्रहर पूर्ण होते ही दासी ने आकर दीपक में तेल डाला। राजा! अपने शुद्ध भाव में स्थिर है। काया को कष्ट हो रहा है। फिर भी ध्यान में खड़े है। दूसरा प्रहर पूरा होते ही दासी फिर आई और दीये में तेल डालकर चली गई। इस तरह रात्रि के चारों ही प्रहर राजा को ध्यान में खड़े हुए देखकर दासी दीये में तेल ड़ालती रही और राजा की पूरी रात धर्म जागरण ध्यान में बीत गई। राजा ने देह का दमन करके पूरी रात धर्म जागरण किया। हम शरीर को पोषण करके रातों में जाग कर कर्मबंधन बढ़ाते है। उस चन्द्रयश राजा का शरीर एक ही अवस्था में स्थिर रहने से (जकड़) अकड़ गया। देह को कष्ट होने से आयुष्य पूरा हुआ और वे सद्‌गति को पा गये। एकाग्रता स्थिरता का इतना महत्त्व सुनकर हमें प्रश्न हो सकता है कि ऐसी स्थिरता कैसे पायी? कई लोग पूछते है कि महाराजजी। सभी संत प्रेरणा करते हैं इसलिए माला

For Private And Personal Use Only

तो फेरते है, परंतु हमारा मन तो भटकता ही रहता है। मुश्किल से दो पाँच नवकार संपूर्ण स्थिरता से गिने जाते होंगे। प्रतिक्रमण–चैत्यवंदन स्वाध्याय–पूजा पाठ अनुष्ठानों में मन स्थिर एकाग्र नहीं रहता। मन स्थिर रहे उसका कोई उपाय बताओ। अस्थिर मन से कि हुई क्रियाओं का क्या मतलब? पहली बात सीधे ही मन को स्थिर करने की मत सोचो पहले शरीर को साधो–शरीर को स्थिर करो क्योंकि जो शरीर को स्थिर कर सकता है वही मन को स्थिर रख सकता है। जो व्यक्ति शरीर को साध लेता है, वह सहनशक्ति को पा लेता है। उसे सहनशिलता सिद्ध हो जाती है। वह शरीर में होने वाली पीडा और कष्टों को प्रसन्नता से झेल सकता है। और जो व्यक्ति मन को साध लेता है वह एकाग्रता को पा लेता है। मन को साधना तो बड़ा कठीन है। इसके सामने तो बड़े–बड़े योगी भी हार जाते हैं। तभी तो आनंदधनजी महाराज ने कुंथुनाथ भगवान के स्तवन में गाया हैं–**"मन साध्युं तेणे सघ लुं साध्यु"** जिसने मन को साध लिया उसने सब साध लिया। हजार किलो वजनी हाथी को वश में रखना महावत के लिए सरल है। फुलस्पीड़ में दौड रही राजधानी एक्सप्रेस को कंट्रॉल में रखना गार्ड के लिए आसान हैं। अरे! जेट विमान को भी काबू में रखना पायलोट के लिए फिर भी सरल है। परंतु मन! मन को नियंत्रित रखना बड़ा कठीन है। एक सज्झाय पद में कहा हैं–

क्या करूं मन स्थिर नहीं रहता।
इधर फिरे मन मेरा, उधर फिरे मन मेरा।।

यदि एकाग्रतापूर्वक कार्य संपन्न होता है तो उसमें अवश्य सफलता मिलती है। साधना के क्षेत्र में मन की एकाग्रता अत्यन्त जरूरी है। और जिसने वचन को साध लिया वह मौन को साध लेता है वह क्लेश–झगड़ों से बच जाता है। परन्तु जिसने तन, मन और वचन को साध लिया। वह आत्मा को पा लेता है। हम साधना करने बैठते है तो शरीर तो अस्थिर होता ही है, साथ वचन भी अस्थिर होता है फिर मन कहाँ से स्थिर रहेगा? थोड़ी–थोड़ी देर में काया को हिलाते–डूलाते रहते है। किसी से बातचीत भी कर लेते है, बोलकर नहीं करते

For Private And Personal Use Only

तो इशारों से और आंखों के संकेत से कर लेते है, फिर मन कैसे स्थिर होगा। बाल्टी में पानी है जो स्थिर है, परन्तु बाल्टी को हिलायेंगे तो पानी अस्थिर हो ही जायेगा। बस! वैसे ही मन पानी के स्थान पर है और शरीर बाल्टी के स्थान पर है। मन को प्रभु प्रेम में डूबोओ। हृदय के एक–एक तार को प्रभु से जोड़ दो, फिर मन स्थिर जरूर होगा। हम मंदिर मैं भक्ति करते हैं तो मन भागता है। हम मंत्र जाप करते है तो मन भटकता है। मैं आपसे कहता हूँ ठीक से भगवान की पहचान कर लो, सुयोग्य तरीके से मंत्र को भी जान लो फिर मन नहीं भगेगा और न भटकेगा। जैसे किसी छोटे बच्चे को किसी अपरिचित अनजान के हाथ में सौप दो, तो वह बच्चा उससे छूटने के लिए चीखता है, चिल्लाता है, छटपटाता है, रोता है। परन्तु वही बालक जब अपरिचित से परिचित हो जाता है, उस अनजान को जानने लग जाता है तब उसी आदमी के साथ खेलने लग जाता है, फिर उससे डरता नहीं हैं। वैसे ही जब हम भगवान को अच्छी तरह से जान लेंगे उनसे प्रेम होगा रस उत्पन्न होगा तो फिर दर्शन, पूजा और नवकार वाली गिनते मन अस्थिर नहीं होगा, भटकेगा नहीं। आत्म–साधना के मार्ग म प्रगति करने के लिए चित्त की स्थिरता जरूरी है। जिसका चित्त अस्थिर है, वह साधना के मार्ग मे आगे नहीं बढ़ सकता है। तालाब का पानी अगर अस्थिर है तो उस जल में अपना प्रतिबिंब नहीं दिखाई देता है, जल जब स्थिर होता है तभी प्रतिबिंब दिखाई देता है, मन जब तक बाहय पदार्थों में भटकता रहता है, तब तक आत्मा के वास्तविक आनंद की अनुभूति संभव नहीं है। जिस तरह खट्टे पदार्थ को डालने से दूध फट जाता है, उसी प्रकार मन की अस्थिरता से ज्ञानानंद रूपी दूध बिगड़ जाता है, साधना रूपी दूध खराब हो जाता है क्योंकि चंचल मन से की गई शुभ क्रियाएँ वास्तविक रूप में फलदायी नहीं बनती हैं, अतः साधना में यत्नपूर्वक मन की चंचलता को स्थिर करना चाहिए। वचन और काया को बांधना फिर भी आसान है परन्तु मन तो कच्चे पारे जैसा है। जैसे हाथ से छिटक कर नीचे गिर गये पारे को इकट्ठा करना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुश्किल है, वैसे शुभयोग से छिटक कर अशुभ योग में गये मन को स्थिर करना मुश्किल है। कबीर ने मन को पक्षी की उपमा दी है–

मन मेरा पंखी भया, जहाँ तहाँ उड़ जाय।
जहाँ जेसी संगत करे वहाँ वैसा फल पाय।।

पक्षी की तरह मन जहाँ–तहाँ उड़ा करता है। एक जगह पर स्थिर होकर बैठ नहीं पाता है। संस्कृत में एक जगह लिखा है– **"चित्त नदी उभयतोवाहिनी वहति पापाय च वहति पुण्याय च"**। चित्त नदी जैसा है। नदी जैसे दो किनारों से बहती है, वैसे मन पाप के मार्ग में भी बह सकता है और पुण्य के मार्ग में भी बह सकता है। उपाध्याय श्री यशोविजयजी भी मन को जीतना कितना कठीन है उस बात को अपने शब्दों में कह रहे हैं–

वचन कायाने तो बांधाए मन नवि बांध्युं जाय,
मन बांध्या विण प्रभु ना मिले करीए कोडी उपाय।

मर्कट जैसे मन को जहाँ–तहाँ भटकने से रोकना हो तो उसे प्रभु के नाम के साथ बांध दिजिये। प्रभु नाम की जंजीर से बंध जाने के बाद उसकी ताकत नहीं कि कहीं जा सके भटक सके। भाग्यशालियों! मन तो बादशाह है बादशाह! बदशाह को क्या चाहिए? आपको पता है? एक बादशाह की फकीर से दोस्ती थी। दोनों कभी–कभी एक दूसरे के वहाँ जाया करते थे। कभी बादशाह झोंपड़ी पर आ जाते तो कभी फकीर बादशाह के दरबार में आते थे। एक बार बादशाह अनायास फकीर की झोंपड़ी पर पहुँच गये। पूर्व सूचना नहीं मिलने से फकीर बाहर चले गये थे। उनका शिष्य हाजिर था। बादशाह को जानता नहीं था इस कारण से उसने उन्हें बैठने के लिए गुदडी बिछाई, किन्तु बादशाह वहाँ बैठे नहीं चक्कर ही काटते रहे। शिष्य ने सोचा शायद इन्हे गुदड़ी में बैठना अच्छा नहीं लगता होगा। बैठने के लिए कुछ और लाता हूँ। यूं सोचकर उसने खटिया लगाई, फिर भी बादशाह बैठे नहीं, चक्कर ही काटते रहे। शिष्य ने सोचा! झोंपड़ी में शायद गरमी लग रही होगी। तब उसका चक्कर

For Private And Personal Use Only

काटना चालु ही रहा रूका नहीं। उसी समय फकीर वहाँ आ पहुँचे। शिष्य ने उनसे कहा गुरूदेव। यह कैसा विचित्र आदमी है। बैठने के लिए आसन, गुदडी, खटिया बिछायी, परन्तु बैठता ही नहीं है.......... और चक्कर ही काटे जा रहा है। गुरू ने कहा यह सामान्य आदमी नहीं है। ये तो बादशाह है बादशाह! बदशाह को बैठने के लिए सिंहासन चाहिए। सिंहासन के बिना ये कहीं नहीं बैठेंगे। तू नीचे के तलघर में जा और जल्दि से सिंहासन ले आ। सिंहासन आते ही बादशाह वहाँ बैठ गये। उसका चक्कर काटना बंद हो गया। अपना मन भी बादशाह है। परमात्मा के चरण रूप सिंहासन नहीं मिलेगा वहाँ तक चक्कर ही काटता रहेगा। जिस दिन प्रभु के चरण का सिंहासन मिलेगा मन वहां जरूर बैठेगा जरूर बैठेगा।

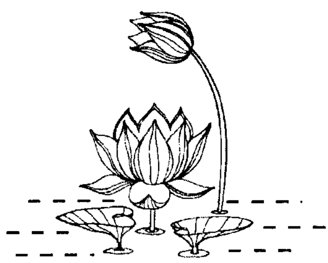

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

15

अदम्भः

"दम्भी मत बनो"

आज के आदमी के पास मनी दो प्रकार की होती है। एक नंबर की और दो नंबर की। वैसे आज का आदमी भी दो प्रकार का होता है। अंदर का और बाहर का। हाथी के दो प्रकार के दांत की तरह आदमी के दो प्रकार है। चेहरे के उपर मुखौटा लग जाने से असली चेहरा ढ़क जाता है वैसे अंदर के आदमी का चेहरा बाहर के आदमी का मुखौटा लग जाने से ढ़क जाता है। बाहर से भगवान महावीर के अनुयायी/भक्त के नाम का मुखौटा पहनकर घूमने वाले आदमी का चेहरा तो कभी चंडकौशिक को भी शरमाये वैसा होता है। महिने की प्रत्येक एकम को दो-दो घंटे तक सुंदर स्नात्रमहोत्सव करने वाला आदमी घर आकर छोटीसी भूल के लिए घर के सदस्यों के साथ झगड़ा करता हो तो क्या समझना? लाखों रूपयों के चढ़ावे की बोली बोलकर मंदिर में परमात्मा की प्रतिष्ठा करने वाला आदमी यदि अपने माँ-बाप को घर में रखने को तैयार न हो तो क्या समझना? हर दिन अष्टप्रकारी पूजा करने वाला, प्रभु के गुण किर्तन करने वाला दूसरे की निंदा भी करता जाये तो क्या समझना? ऊंची बोली बोल कर आचार्य भगवंत को कमली बहोराने का चढ़ावा लेने वाला, साधर्मिक भाई अथवा दुकान में निष्ठा से काम करने वाले नौकर का तिरस्कार करता हो तो क्या समझना?

सेंतालिस, पेंतीस और अट्ठाईस दिन तक उपधान में उपवास नीवी आयंबिल करने वाला उपधान के बाद रात्रि भोजन करता हो तो क्या समझना? शत्रुंजय की नव्वाणुं यात्रा करने वाला घर आकर फिल्मी हॉल और होटल के चक्कर काटता हो तो क्या समझना? पर्युषण में मासक्षमण, सोलह, ग्यारह या अट्ठाई का तप करने वाला पारणे में अभक्ष्य अनंतकाय और कंदमूल खाता नजर आये तो क्या समझना? तेरह महिने और तेरह दिन तक लगातार एकान्तरे उपवास करने वाला पालने के बाद नवकारसी भी न करें तो क्या समझना। एक बहन ने अट्ठाई की पारणे के अगले दिन अर्थात् संवत्सरी के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिन पुत्रवधू से पूछा, बोल बेटा! कल मेरे अट्ठाई का पारणा है तो मेरे लिए क्या बनाएगी? बहु ने कहा, मम्मी! कल मैं आपकी फेवरीट आइटम बनाउंगी। सासु ने पूछा, तुझे पता है......... मेरी फेवरीट क्या है? बहु ने कहा, हां मम्मी! आपकी फेवरीट आइटम रोटी और आलु प्याज की सब्जी। अतः कल सुबह मैं आपके लिए वही बनाऊंगी। कहने का मतलब इतना ही है। बाहर का आदमी कभी दान–धर्म–तप धर्म करता दिखता है उस धर्म को करने के पीछे भी अपना नाम हो ऐसी इच्छा लोक प्रशंसा मिले ऐसी वृत्ति हुआ करती है, अन्यथा भीतर के आदमी को तो खाने पीने, मौज–शौक और भोग सुख में ही मजा आता है। भीतर के बिगडे हुए आदमी को सुधारने के लिए बाहर के आदमी को सुधरना पडेगा। बाहय आचरण सुधरेगा तो भीतर के विचार सुधरे बिना नहीं रहेंगे। जो लोग आचार में परिवर्तन लाये बगैर मात्र विचारों में परिवर्तन लाने की बात करते है वे दंभी है। मुझे रसगुल्ले और रसपुरी खाने में रस नहीं है ऐसा कहकर मौका मिलने पर नहीं चूकने वाले को दंभी न कहे तो ओर क्या कहें? दंभ यानी व्यवहार से दूसरे को ठगने की क्रिया परन्तु निश्चय से खुद को ही ठगने की क्रिया है। यह मत भूलना। दंभ यानी दिखावा करने की वृत्ति। खुद में कुछ भी न हो फिर भी अधिक दिखाने की वृत्ति दंभ को जन्म देती है। मैं योगी न होउं, परन्तु योगी जैसा दिखना है या योगी रूप में प्रख्यात होना है तो क्या करना होगा? योगी जैसा दिखावा करना होगा। अंदर चाहे योगी जैसा कुछ भी न हो, परन्तु बाहर योगी का आडंबर अपनाना पडेगा। झूठा प्रचार करके लोगों में ऐसी हवा फैलाने का प्रयास करना पड़ेगा। इसी का नाम दंभ है। यह आत्मवंचना है, खुद से ही खुद की ठगाई है, पाखंड है। जो आदमी खुद को ही ठगता हो दुनिया में उससे बढ़कर धूर्त कौन होगा। योगशास्त्र में हेमचन्द्रसूरिजी महाराज कहते हैं–**''भुवनं वञ्चमाना वञ्चमाना वञ्चयन्ते स्वमेव ही''** जगत को ठगने वाले लोग आखिर तो खुद को ही ठग रहे है।

कबीर ने भी कहा–

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कबीर आप ठगाइए, ओर न ठगिया कोई।
आप ठग्या सुख उपजे, और ठग्या दुःख होई।।

दम्भपूर्वक जीना और रहना उचित नहीं, क्योंकि दम्भ से धर्म फलिभूत नहीं होता। शास्त्रकार कहते हैं कि दम्भरहित सरल मनुष्य की अल्पसत्क्रिया भी कर्मों का आंशिक क्षय करने में समर्थ बन जाती है। दम्भ मुक्तिरूपी लता को जलाने के लिए आग के समान है। दम्भ धर्मरूपी चन्द्रमा को ग्रसकर मलिन करने वाले राहु के समान है तथा दुर्भाग्य वृद्धि का कारण है और दम्भ आध्यात्मिक सुख को रोकने के लिए अर्गला के समान है। दम्भ ज्ञानरूपी पर्वत को तोड़ने के लिए वज्र के समान है। दम्भ बुराईयों–व्यशनों का मित्र है, दम्भ व्रतरूपी लक्ष्मी को चोरने (हरने) वाला चोर है। जिसने दम्भ का त्याग नहीं किया, फिर व्रत ग्रहण करने या विविध तप–जप करने से भी क्या लाभ? जैसे अन्धे आदमी के लिए दीपक और दर्पण किस काम के? अंधे के लिए दीपक और दर्पण दोनों ही निरूपयोगी हैं, उसी तरह दम्भी के लिए व्रत, तप, जपादि किसी काम के नहीं है, निरर्थक है। जिस प्रकार बहुमूल्य रत्न में जरा–सा दाग (जर्क) लगा हो तो वह मूल्यहीन हो जाता है उसी तरह साधक कई धर्माराधनाएँ करता हो विविध क्रियाएँ करता हो, लेकिन उसके जीवन में दम्भरूपी दाग हों तो उसकी मोक्षलक्षी सभी आराधनाएँ और क्रियाएँ दूषित हो जाती है, निष्फल और निकम्मी बन जाती है। दम्भ को त्यागना कितना कठीन है, उपाध्यायजी महाराज कहते है। टेस्टफुल भोजन की रस–लोलुपता छोड़ना आसान है। काम–भोगों को भी आसानी से छोड़ा जा सकता है, शरीर के श्रृंगार छोड़ने भी सरल है, लेकिन दम्भ का त्याग करना बहुत ही कठीन है। अपने दोषों/भूलों को छिपाने वाले लोग यों सोचते हैं कि ऐसा करने से लोगों में हमारी प्रतिष्ठा, पूजा और बड़ाई होगी। हमारा गौरव बढ़ेगा, लेकिन वास्तव में बुद्धू इस दम्भ से ही विडम्बना और फजीहत को निमंत्रण देते है। अपनी आत्म प्रशंसा के लिए अपने दोषों को छिपाने वाला मनुष्य सोचता है कि मैं दम्भपूर्वक अपने दोषों को ढंक लूंगा, जिससे गुणीजनों की तरह मेरी भी प्रसिद्धि हो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाएगी। दुनिया गुणियों की पूजा करती है अतः दुनिया में मेरा भी मान–सम्मान बढेगा, इज्जत होगी, अथवा मेरा भी नाम महापुरूषों की पंक्ति में गिना जाएगा। दुनिया की आंखों में धूल झोंक कर अपनी बड़ाई करने वाला खुद की आत्मा को दुर्गति के भँवर में फँसाता है। कभी असलियत छिपी नहीं रहती , चाहे कितना भी छिपाओ कभी न कभी अनायास ही खुल जाती है। और तब शर्मिंदा होना पड़ता है।

एक गधा एक बार घांस चरते–चरते नगर से जंगल में पहुँच गया। वहाँ एक शियार ने उसे देखा, दोनों के बीच औपचारिकता से बातचीत शुरू हुई और मित्रता में समाप्त हुई। शियार ने कहा तुम जैसा मित्र पाकर आज मैं बहुत खुश हूँ। सचमुच तकदीर से ही तुम जैसा मित्र मिलता है। जाने का वक्त हूआ तो गधा बोला, अच्छा! तो, अब मैं चलू? शियार बोला। अब तुम यहाँ रोज ही आया करोगे, जिससे अपना मिलन भी हो जाया करेगा और तुम्हें पेट भरने के लिए घांस भी। अब गधा रोज ही जंगल में जाने लगा। दोनों की मुलाकातें होती रही, दोस्ती भी पक्की हो गई। एक दिन उन दोनों ने मरे हुए शेर की खाल देखी, तो शियार ने कहा– यह शेर की खाल है और बड़े काम की है। हमारे बहुत काम लगेगी। इससे जंगल में हम अपना शासन भी चला सकेंगे। उठाकर देखी तो खाल बड़ी थी। शियार बोला। यह मेरे नाप की नहीं है, तुम्हारे नाप की है, अतः तुम ही इसे ओढ़ (पहन) लो। मित्र के कहने से गधे ने खाल ओढ़ ली। वाह! दोस्त क्या जच रहे हो तुम, सचमुच तुम शेर ही नजर आ रहे हों। हम दोनों मिलकर एक आइड़िया करते है। हमें जंगल का राजा बनकर हुकूमत करने का बहुत अच्छा अवसर हाथ लगा है, अतः क्यों न इन सब प्राणियों पर राजा बन कर राज किया जाय और अपना उल्लू सीधा किया जाय। हमें किसी का ड़र भी तो नहीं है। क्योंकि असली शेर मर चूका है। यह बात पेड़ पर बैठे बंदर ने सुनी तो वह गधे से बोला! तुम जो करने जा रहे हो वह कतई योग्य नहीं है, यह पोल जब कभी खुलेगी तो बहुत भारी पड़ जाएगा। शियार बीच में ही

For Private And Personal Use Only

बोल पड़ा, देख दोस्त। जलने वालों की आदत होती है, वे किसी की अच्छाई और उन्नति देख नहीं सकते और जलते है। यह बंदर भी जलन के कारण ही ऐसा बोल रहा है, तुम इस की बातों पर ध्यान मत दो। उन दोनों ने बंदर की बात को सुना अनसुना कर दिया। दोनों मित्रों ने मिलकर विचार विमर्श किया कि हम एक ऐसा भव्य आयोजन करें कि जिस में जंगल के सभी प्राणियो को आमंत्रित किया जाय। और सभी को बताया जाय कि ये हमारे जंगल के नये राजा है। हम इन्हें राजी खुशी और सर्वानुमत से हमारे राजा घोषित कर रहे है। इससे सभी को पता भी चल जाएगा और सम्मान भी हो जायेगा।

एक दिन तय किया गया और सभी प्राणियों को सम्मान समारंभ का निमंत्रण भी दे दिया गया। नियत समय पर जंगल के सारे प्राणी भी पहुँच गयें। तब शियार ने नये राजा का परिचय कराते हुए कहा! मेरे वनवासियों! आज बड़ी खुशी का दिन है क्योंकि हमें एक सुयोग्य, रक्षक, पालक राजा मिले है अतः मैं यह घोषणा करता हूँ कि आज से हम सभी के राजा यही होंगे। बोलो वनराज की जय........ सभी प्राणियों के जयकारे से सारा जंगल गुंज उठा। फिर वहाँ उपस्थित सभी प्राणी नाचने लगे, और गाने लगे, यूं खुशी का इजहार करने लगे। इन्हें नाचते और गाते हुए देखकर गधा भी जोश में आ गया और सिंहासन से नीचे उतर कर पंचम स्वर में ढेंचू...... ढेंचू..........ढेंचू..........करते हुए नाचने लगा, दो तीन ठुमके लगाए त्यों ही ओढ़ी हुई शेर की खाल नीचे गिर पड़ी। यह देखते ही जंगल के सारे प्राणी गधे को मारने के लिए उसकी तरफ लपके कि इस नालायक गधे ने हम सब को बेवकूफ बनाया। इसे पकड़ कर धुलाई करो, छोड़ो मत! गधा वहाँ से छिटककर ऐसा भगा ऐसा भगा कि सीधा गाँव में पहुँच कर ही रूका। फिर दुबारा जंगल में जाने की बात तो दूर रही उस तरफ देखा भी नहीं।

इस कहानी से दम्भ को अनर्थ का कारण जान कर आत्मार्थी साधक को उसे छोड़ना चाहिए, क्योंकि आगम में बताया है कि सरलता से आत्मा की शुद्धि होती है। जैसे कमल पर हिमपात, शरीर में रोग, वन में आग, दिन में रात

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(अंधेरा), ग्रन्थ के सम्बन्ध में मूर्खता और सुख के प्रसंग में क्लेश उपद्रव रूप है, उसी प्रकार धर्म की आराधना में दम्भ उपद्रवरूप है। लोगों को ठगने, उल्लू बनाने और भरमाने के लिए ज्ञानी ध्यानी बन कर बैठे उस व्यक्ति की जैन शास्त्रों में कोई कीमत नहीं है। यूं तो मछली को पकड़ने के लए स्थिर बने, बगुले, चूहा पकड़ने के लिए तत्पर हुई बिल्ली और ग्राहक को ठगने के लिए तत्पर बने व्यापरी में स्थिरता होती है, परन्तु ऐसी स्थिरता की कीमत नहीं होती। दम्भी को कितना अस्वाभाविक रहना पड़ता है। न हो उसे प्रगट करना पड़ता है और जो है उसे छिपाना पड़ता है। अस्वाभाविकता, असलियत कहाँ तक छिपी रहेगी? वह तो एक दिन गधे ने ओढ़ी शेर की खाल की तरह प्रगट होगी तब कैसी फजीहत होगी? दम्भी लोगों को यह पता तो होता है कि कभी मुश्किल में पड़ेंगे परन्तु उन्हे दम्भ पर अति विश्वास होता है क्योंकि उनके प्रयोग दो पाँच बार सफल हो गये थे कि इससे लोग मूर्ख बन सकते है। अगर आपका पुण्य जोर करता हो तो आप कुछ समय तक सभी लोगों को मूर्ख बना सकते हैं या कुछ लागों को कुछ समय तक मूर्ख बना सकते हैं, परन्तु सभी लोगों को हमेशा मूर्ख नहीं बना सकते। रामकृष्ण परमहंस ने पाँच प्रकार के लोगों से सावधान रहने के लिए कहा है–

(1) जो आदमी धार्मिक होने का दिखावा करता हो।

(2) जिस की वाणी का प्रवाह पानी के झरने की तरह अविराम बहता हो।

(3) जिसका हृदय अनावृत्त (बंद) हो।

(4) जो तालाब काई से अच्छादित हो।

(5) जो स्त्री लम्बा घुंघट निकालती हो।

(1) जो धार्मिक दिखने की कोशिश करता है। उससे सावधान रहना ये तुम्हें फंसाने का जाल बिछा रहा है। कहा भी है "**लम्बा तिलक मधुर वाणी यह है धूर्त की निशानी**"।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(2) जिसकी मधुर वाणी सतत बह रही हो, जो बहुत बोलता हो, जिसकी बोली से आप प्रभावित हो जाते हो, उसके वचन को ही शास्त्र वचन मानने को तैयार हो जाते हो तो सावधान हो जाना। अपनी वाणी के बल से अपनी ही बात सिद्ध कर रहा हो तो ऐसे आदमी के पास फटकना भी मत।

(3) जिसका हृदय अनावृत्त हो किसी के भी साथ खुल्ले दिन से बात न करता हो, कुछ छिपाने की कोशिश करता हो, और हमारी बातें जानने की कोशिश करता हो, बहुत ही धीरे-धीरे बोलता हो, उससे भी सो गज दूर ही रहना।

(4) जो तालाब काई से आच्छादित हो, क्योंकि काई के नीचे क्या है उसका कुछ भी पता नहीं चलता है।

(5) एक बादशाह बचपन में एक स्कूल में पढ़ता था। उसका एक मित्र था बाद में वह मित्र संन्यासी हो गया। उसने सब छोड़ दिया, बादशाह भी युवा हुआ, गद्दी पर बैठा। दूर-दूर के राज्य जीते, राज्य को विस्तारित किया। नई राजधानी बनाई । वैभव की दूर-दूर तक किर्ती फैली एक दिन पुराने मित्र फकीर का आना हुआ। राजा ने कहा मेरा मित्र आ रहा है। सब कुछ त्यागा है। बहुत महान है। हम उसका स्वागत करे शाही सन्मान दें। सारे नगर को सजवाया जिस शाम को प्रवेश होना था। सारे नगर में दीपावली मनवायी। रास्तों पर कालीन बिछवाया। राजा खुद दरबारियों को लेकर स्वागत करने गया। कुछ लोगों ने उस फकीर को जाकर कहा, राजा अपना धन दिखलना चाहता है। संपत्ति वैभव दिखलाना चाहता है, इसीलिए तो सारी राजधानी सजवा रहा है। ताकि तुम्हें हतप्रद कर शके। तुम्हें दिखा सके कि तुम क्या हो तुम्हारे पास क्या है। अकिंचन दरिद्र भीखारी। उस फकीर ने कहा अगर वह दिखाना चाहता है अपनी संपत्ति, वैभव तो हम भी उसे दिखा देंगे। सुनने वाले हैरान हुए, फकीर के पास दिखाने को क्या था। शिवाय फटे पुराने कपड़ों के, दुबले पतले शरीर के शिवा उसके पास कुछ भी नही था, लेकिन कहा हम भी दिखला देंगे। जिस दिन नगर प्रवेश हुआ। उन बहुमूल्य ईरानी कालीनों पर

For Private And Personal Use Only

जब वह चला तो लोग देखते रह गये। दिन तो वर्षा के नहीं थे, लेकिन उसके पाँव घुटने तक कीचड़ से भरे थे। वह कीचड़ से भरा था, वैसा ही उन कीमती कालीनों पर चलता रहा। राजा और सब को हुआ कि कीचड़ से कैसे भर गया। महल की सीढ़ियों पर चढ़ते वक्त राजा से नहीं रहा गया। उसने पूछा कि मित्र! क्या मैं पूछुं कि यह पाँव इतने कीचड़ से कैसे भर गये? फकीर ने कहा कि अगर तुम कालीन बिछाकर रास्तों पर अपना वैभव दिखा सकते हो तो हम फकीर है। हम उस पर कीचड़ भरे पाँव चलकर अपनी फकीरी बतला सकते है। बादशाह ने कहा मैं तो समझा था कि हममें और तुम में कोई फर्क पड गया है, लेकिन हम पुराने मित्र है और कोई फर्क नहीं पड़ा तुम भी वहीं हो जहाँ मैं हूँ। तुमने छोड़कर भी उसी दम्भ को तृप्त किया है, जिसे मैं पाकर तृप्त कर रहा हूँ। तो दम्भ को छोड़ना बडे योगियों के लिए भी बहुत कठीन है। जो व्यक्ति दम्भपूर्वक व्रत–अणुव्रत स्वीकार करके परम पद चाहता है, वह ऐसा ही है जैसे कि कोई लोहे की नाव में बैठ कर समुद्र पार करना चाहे। लोहे की नौका पर चढ़ा हुआ आदमी समुद्र में डूब जाता है, वैसे ही दम्भी संसार समुद्र में डूब जाता है। इस प्रकार दम्भ के गम्भीर अनर्थों को लक्ष्य में रखकर दम्भ के पाप को दूर करने का प्रयत्न किजिये।

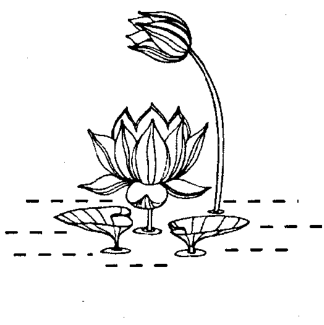

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

16

वैराग्यम्

"वैराग्यभाव धारण करना"

अध्यात्मसार ग्रंथ के सातवें अधिकर में वैराग्य के दो प्रकारों का बहुत ही अच्छा विश्लेषण है। (1) विषय वैराग्य और (2) गुण वैराग्य। विषय वैराग्य अर्थात् पाँच इन्द्रियों के सानुकूल विषयों में सतत विरक्ति! जिस योगी पुरूष का मन आत्मानंद स्वरूप में मस्त बना हो, उसे पाँच इन्द्रियों के भौतिक विषयों में जरा भी आशक्ति या आकर्षण नहीं होता है। जो आत्मा अध्यात्म के अमृत के कुंड़ में स्नान करती है। उसे विष का कुंड पीड़ित नहीं कर पाता, उसी तरह योगी पुरूषों का मन अनुकूल विषयों को प्राप्त कर तनिक भी चंचल नहीं बनता है। जिन योगी पुरूषों का मन शांत और अनाहत–नाद के श्रवण में लग चूका हो, ऐसे विरक्त पुरूषों को मधुर कंठी स्त्री के मादक/मधुर गान के श्रवण में जरा भी आकर्षण नहीं होता। शुद्ध स्फटिक की तरह आत्मा का शुद्ध स्वरूप अत्यंत ही धवल है, ऐसे धवल आत्मस्वरूप को निहारने वाले योगी पुरूषों को रज–वीर्य–और रूधिर से पैदा हुइ स्त्री आदि के देह दर्शन में किसी तरह का आकर्षण नहीं होता। आंखों से दिखाई देने वाला रूप तो नाशवान है, क्योंकि पुद्‌गलों से निर्मित बाह्य रूप/शरीर में बदलाव होता रहता है। आज शरीर की जो खुबसूरती दिख रही है, कल भी खुबसूरती वैसी ही रहेगी, यह संभव नहीं है। जवानी के कारण जिस स्त्री के रूप में आकर्षण होता है, वहीं स्त्री जब वृद्ध हो जाती है, तब वही रूप कुरूप और बिभत्स बन जाता है, फिर उसके रूप में किसी तरह का आकर्षण नहीं रहता है, न दिलचस्पी रहती है। विरक्त आत्मा का मन कस्तुरी, मालती के फूल, गुलाब व मोगरे के पुष्प, चंदन, केशर कपूरादि की महक में मूग्ध नही बनता है, क्योंकि विरक्त आत्माओं का मन तो शील की महक के आस्वाद में ही डूबा होता है। अध्यात्म की महक के रसपान का भ्रमर बने विरक्त पुरूष को क्षणिक और परिवर्तनशील भौतिक पदार्थों की बाहरी सुवास का कोई आकर्षण नही रहता है। विरक्त आत्मा को स्वादिष्ट व मधुर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फल, मेवा, मिठाई, पकवान आदि पदार्थों के स्वाद में किसी तरह का आकर्षण नहीं होता है। स्वादिष्ट और फेवरिट पदार्थों को देखकर रसलोलुप प्राणियों की जीभ में से पानी टपकने लगता है, जबकि उन्ही चीजों को देखकर विरक्त आत्माओं की आंखों में यह सोचकर आंसु आ जाते है कि इन पदार्थों के स्वाद में लुब्ध बनने पर भविष्य में आत्मा की कैसी भयंकर दुर्दशा होगी। मोक्षाभिलाषी आत्माओं को अशुचि की भंडार स्वरूप स्त्री के शरीर–स्पर्श में किसी तरह की सुखानुभूति नहीं होती है। अज्ञानी विषयाभिलाषी और मोहान्ध आत्माएँ स्त्री के भोग आदि में सुख की कल्पनाएँ करती है, जबकि ज्ञानी–योगी और विरक्त पुरूष की आत्मा ज्ञानादि गुणों के भोग में परमानंद की अनुभूति करती है। देह स्नान, तेल, चंदन का लेप, अच्छे अलंकार, सुन्दर कपड़े आदि से विरक्त आत्मा को किसी तरह का राग उत्पन्न नहीं होता है। क्योंकि विरक्त आत्मा इन चेष्टाओं को सर्प के जहर की मूर्च्छा समान मानती है। मोक्ष प्राप्ति में ही जिस आत्मा ने परम सुख की कल्पना की हैं, ऐसी आत्मा को जिस प्रकार इस लोक के बाहय पदार्थों का आकर्षण नहीं होता है, उसी तरह उसे देवलोक सम्बन्धि दिव्य सुखों की भी कोई लालसा नहीं होती है। वास्तव में देवलोक के सुख भी जहर मिश्रित पकवान की तरह सुखदायी नहीं हैं, क्योंकि उन देवताओं को आज जो दिव्य सुख मिले हुए है, उनके वे सुख भी (हमेशा) स्थायी रहने वाले नहीं है च्यवन/मृत्यु का समय करीब आते ही उनकी स्थिति दयनीय व करूण बन जाती है। स्वर्ग के देवों के पास श्रेष्ठ विमान, भवन, उपवन, बावडियाँ/तालाब, रत्न इत्यादि संपत्तियाँ होती हैं, परन्तु मृत्यु के छह महिने पहले कदापि न कुम्हलाने वाली गले की पुष्पमाला कुम्हलाने लगती है। उसके साथ–साथ देवता का मुख कमल भी कुम्हला जाता है, हृदय के साथ–साथ शरीर का ढांचा भी शिथिल पड़ जाता है, देवांगनाएँ भी उसे छोड़कर चली जाती है, उसके वस्त्रों के रंग भी फिके पड़ जाते है। यह सब देखकर देव विलाप करता है कि अब मुझे स्त्री के गर्भावास रूपि नरक में

For Private And Personal Use Only

वास करना पड़ेगा। हाय! कहाँ रतिनिधान सी देवांगनाएँ और कहाँ अशुद्धि/गंदगी से भरी हुई विभत्स मानुषी स्त्री? इस तरह स्वर्ग की वस्तुओं को याद करके देव रात-दिन विलाप करता है और अपार दुःख का अनुभव करता है।

देवताओं की इस हालत से वाकिफ, विरक्त आत्मा को देवलाक के दिव्य सुखों का आकर्षण नहीं होता है, वह तो भव-बंधन से छुटकर मुक्ति के सुख को पाने के लिए सदैव उत्सूक रहती है। इस प्रकार विषयों से विरक्त बने योगी पुरूषों को साधना के फल स्वरूप अनेक प्रकार की लब्धियों, उपलब्धियों, विपुललब्धि, ढाईद्वीप प्रमाण मनुष्य क्षेत्र में रहे जीवों के मनोगत पर्यायों या द्रव्यों को जानने वाला ज्ञान विपुलमतिमनःपर्यवज्ञान होता है, जो एक प्रकार की लब्धि है। पुलाकलब्धि, चक्रवर्ती की सेना को चूर्णकर देने वाली शक्ति पुलाकलब्धि होती है। चारणलब्धि, उड़कर किसी स्थान पर आने-जाने की शक्ति चारणलब्धि कहलाती है। आशीविषलब्धि अपकार या उपकार करने में आशीविषलब्धि समर्थ होती है। इसके अलावा मणि, मंत्र, औषधि आदि की भी कई ऋद्धि-सिद्धियाँ होती है। ये सब लब्धियाँ ज्ञान-दर्शन, चारित्र, तप और संयम की विशुद्ध आराधना से प्राप्त होती है। इनके प्राप्त होने पर भी विरक्त आत्माएँ घमंड नही करती और इनके प्रयोग से प्रसिद्धि आदि की कामना भी नहीं करती है। क्योकि मोक्ष की उपलब्धि को ही वे श्रेष्ठ उपलब्धि समझती है। सनत्चक्रवर्ती ने घास के जलते पूले के समान चक्रवर्ती के वैभव को छोड़ दिया और साधु बनकर दुष्करतप किया, जिससे उन्हें अनेक लब्धियाँ प्राप्त हुई, फिर भी वे अपने शरीर के प्रति निरपेक्ष थे।

हुआ यूं। सनत्कुमार चक्रवर्ती का अद्भूत रूप था। एक दिन इन्द्र महाराजा ने सौधर्म सभा में सनत्कुमार चक्रवर्ती के अद्भूत रूप की मुक्त कंठ से प्रशंसा की, वहाँ मौजुद दो मिथ्यादृष्टि देव उस प्रशंसा को बर्दास्त नहीं कर पाये। वे दोनों ब्राह्मण का रूप बनाकर इन्द्र के वचन की परीक्षा के

For Private And Personal Use Only

लिए सनत्चक्री के महल में पहुँच गये। उस वक्त सनत्कुमार चक्रवर्ती स्नानागार में स्नान कर रहे थे। ब्राह्मणवेषी दोनों देव स्नानागार के करीब पहुँच गये और सनत्चक्री के अद्भूत-रूप लावण्य को निहारने लगे। सनत्चक्री ने उनसे पूछ लिया अरे भू देवों! केसै आना हुआ? दूर-सुदूर क्षेत्र में हमने आपके रूप की प्रशंसा सुनी है, अतः आपके रूप दर्शन के लिए ही हम आये है। आह! हमने जैसा सुना था वैसा ही अद्भूत आपका रूप लावण्य है। ब्राह्मणवेषी देवों ने कहा! अच्छा तुम मेरा रूप देखने को आए हो? अरे ब्राह्मणों! मेरा लावण्य देखना हो तो राजसभा में आना। गर्व के साथ सनत्चक्री ने कहा। अभी तो मैं नहा रहा हूँ मेरे शरीर पर कीमती अलंकार भी नहीं है। जैसी आपकी आज्ञा ऐसा कहकर दोनों ब्राह्मण बाहर आ गए। थोड़ी देर में स्नान विधि से निवृत्त होकर सनत्चक्री ने बड़े कीमति वस्त्र धारण किये। फिर रत्नजड़ित स्वर्ण आदि के अलंकारों से उन्होंने खुद को अलंकृत किया। अच्छी तरह से सज-धज कर वे राजसभा में प्रवेश कर रहे थे। छडीदार ने छडी पुकारी। महामंत्री, सेनापति, नगर शेठ और सभाजनों ने उनका भावभीना सत्कार किया। सनत्चक्री अपने सिंहासर पर आरूढ़ हुए। महामंत्री ने राजसभा की कार्यवाही शुरू की। महाराजा ने सभाजनों पर पैनी नजर डाली। वहाँ ब्राह्मणवेषी दो देव भी आये हुए थे। किन्तु महाराजा की ओर नजर डालते ही उन्होंने अपना मुँह मोड़ लिया था। चक्रवर्ती ने इस विचित्र व्यवहार को देख लिया। वे तत्क्षण बोल उठे अरे ब्राह्मणों। तुम मेरे रूप को देखने के लिए बड़ी दूर से आए हो फिर अभी आंख मिचौली क्यों कर रहे हो? उन दोनों ने हाथ जोड़कर विनम्रता से कहा- राजन्! जिस रूप को देखने के लिए हम आए थे, वह अब देखने लायक नहीं रहा, वह रूप तो नष्ट हो चूका है। अगर आपको यकीन न हो तो अपने प्याले में थूंककर देख लिजिए। उनमें कितने कीड़े पैदा हो चूके है। चक्रवर्ती ने एक पात्र में थूंका। तत्क्षण उन्हें उसमें अनेक कीडे दिखाई दिए। रूप का अभिमान एक ही पल में गल गया और सोचने लगे, इस देह का रूप इतना विनश्वर! मेरी काया

For Private And Personal Use Only

रोगों से घिर गई? अब मुझे काया की ममता को छोड़कर आत्मा के सच्चे व शाश्वत सौंदर्य को हासिल करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने राज्य का परित्याग करके चक्रवर्ती के वेष को छोड़कर आत्मसौंदर्य को पाने के लिए साधु बन गए। सनत्चक्री के जीवन में यकायक आए इस परिवर्तन से सभी दिग्मूढ़ हो गए। उनका अंतःपुर करूण विलाप करने लगा। अंतःपुर की स्त्रियाँ उनका पीछा करने लगी और पुनः लौटने के लिए आजी-जी भरी प्रार्थनाएँ करने लगी। परंतु भीतर से विरक्त बन चूके सनत्चक्री के मन में रूदन भरे शब्द करूण आक्रंद और विलाप का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। न तो देह में फैले हुए भयंकर रोग ही उनकी आत्म साधना में बाधक बन सके और न ही उन्हें स्त्रियों का मोह आकर्षित कर सका। छः-छः मास तक उनका अंतःपुर उनका पीछा करता रहा......फिर भी वे महामुनि अपने साधना मार्ग से चलित नहीं हुए। आखिरकार हार-थककर अंतःपुर की स्त्रियाँ वापस अपने महलों में लौट गई। महामुनि रत्नत्रयी की आराधना में तल्लीन बन गए। वर्ष पर वर्ष बीतने लगे। इन्द्र महाराजा ने इन्द्र सभा में एक दिन पुनः सनत्कुमार महामुनि के धैर्य सत्त्वगुण की सराहना की। महामुनि के सत्त्व गुण की प्रशंसा को नहीं सह पाने वाले वे मिथ्या दृष्टि दो देव मुनि की परीक्षा के लिए वैद्य का रूप लेकर पृथ्वी पर आए। वैद्य वेषधारी देव मुनि के चरणों में आकर प्रणाम करने लगे। महामुनि ने उन्हें धर्मलाभ की आशीष दी। वैद्यों ने कहा भगवंत! हम शारीरिक रोगों की चिकित्सा करने वाले कुशल वैद्य है, आपके देह पर दृष्टिपात करने से लगता हैं कि आपका शरीर रोगों से घिरा हुआ है। अतः हे कृपालु! आप हम पर कृपा करें और हमें रोगों की चिकित्सा करने का मौका दें। वैद्यों की बात को सुनकर सनत्कुमार मुनि ने कहा, बंधुओं! देह रोग से भी भयंकर और खतरनाक कर्म रोग मेरी आत्मा को लगा हुआ है, अगर उस रोग को तुम मिटा सकते हो तो मेरी छूट हैं, अन्यथा शरीर के रोग की तो मुझे कुछ परवाह नही है, इस रोग को तो मैं भी मिटा सकता हूँ। इतना कहकर उन्होंने

For Private And Personal Use Only

अपने मुहँ से अपनी अंगुली पर थोड़ा सा थूंक लिया और उसे अपने दूसरे हाथ में लगाया। देखते ही देखते उस थूंक से स्पर्श हुई चमड़ी कंचन जैसी बन गई। उन मिथ्यादृष्टि देवों ने भी यह देखा तो वे भी भावपूर्वक उनके चरणों में झूक गए। देह में एक ओर भयंकर रोग और दूसरी और उनके रोगों को मिटाने की ऐसी अद्भूत आत्म लब्धि। फिर भी ये मुनि लब्धि का उपयोग देह रोग निवारण के लिए नहीं कर रहे है। गजब का सत्त्व है इनमें। सचमुच! इनके सत्त्वगुण की प्रशंसा इन्द्र महाराजा ने की थी, वैसे ही सत्त्वगुण के धारक है ये। देवों ने अपना मूल रूप प्रगट किया और अपने अपराध की क्षमा याचना कर पुनः स्वर्ग लोग में चले गए। सनत्कुमार मुनि भी अत्यंत दृढ़ता पूर्वक तन में फैले हुए उन रोगों को समता पूर्वक सहनकर समस्त कर्मो का क्षय कर मोक्ष में गए। उनके थूंक श्लेष्म आदि में रोग निवारण की शक्ति पैदा हो चूकी थी, परन्तु उन्होंने अपने स्वार्थ के लिए लब्धि का लेशमात्र भी उपयोग नहीं किया। सम्यग् ज्ञान के प्रकाश में जब हम जगत के यथार्थ को देखते है, तब अपनी आत्मा में इस बाहय संसार के प्रति वैराग्य भाव पैदा हुए बिना नहीं रहता।

एक जिज्ञासु ने रामजी से प्रश्न पूछा, वैराग्य यानी क्या? माया यानी क्या? **ज्ञान विराग अरू माया**। रामजी ने बहुत सुंदर जवाब दिया, छोटा सा जवाब था– मैं और मेरा। यह मालिकी ही माया है। जब मेरापन और तेरापन को मिटाओगे तो जीवन में वैराग्य का मंगलाचरण होगा। परमज्ञान का उदय होगा। यही ज्ञान तुम्हें वैराग्य के मार्ग में ले जाएगा। शास्त्रकार भगवंतों ने वैराग्य के तीन भेद भी बतलाएँ हैं, जिन में (1) दुःख गर्भित और (2) मोह गर्भित त्याज्य है जबकि (3) ज्ञान गर्भित वैराग्य उपादेय है। संसार के वास्तविक स्वरूप को जाने बिना एक मात्र संसार के बाहय कष्ट निर्धनता, तिरस्कार, अनादर, भूख आदि दुःखों को देखकर जिसे वैराग्य होता हैं, वह दुःखगर्भित वैराग्य कहलाता है। दुःखगर्भित वैराग्य भूख, प्यास, बीमारी तथा अपने कुटुम्ब के निर्वाह की चिंता आदि से ही होता है। यदि उसे अपनी

For Private And Personal Use Only

इच्छानुसार धनादि की प्राप्ति हो जाए तो वह वैराग्य टिकता नहीं है।

सिर मूंडन में तीन गुण, मिटे सिर की खाज।
खाने को लड्डु मिले, लोग कहे महाराज।।

जो आजीविका अथवा बीमारी आदि से दुःखित हो कर विरक्त होता है और दीक्षा लेता है, उसका दुःख जब दूर हो जाता है, तब फिर वह संसार में जाने की इच्छा करता है। जैसे संग्राम में जाने वाला शुरवीर सैनिक अपनी सलामती की कोई चिंता नहीं करता। विजय या मौत दो ही विकल्प सामने रखकर शत्रु सेना पर टूट पड़ता है, परन्तु कितनेक कायर सैनिक युद्ध मैदान में जाने से पहले ही, वन, गुफा या गुप्त स्थल खोज लेते हैं। युद्ध में लड़ते हुए मौत सामने दिखे तब भगकर छिपने की कोई जगह तो चाहिए न? दुःख गर्भित वैराग्य वाले जीव के हृदय में उत्तम वैराग्य नहीं होता। इसके कारण वाद–विवाद करने के लिए वह तर्क शास्त्र शुष्क न्याय आदि विद्याएँ पढ़ता है, क्योंकि वाद विवाद में विजय बनने से जगत् में कीर्ति बढ़ती है। आजीविका के लिए कोई व्याकरण शास्त्रादि पढ़ता है, वैद्यक विद्या, ज्योतिष शास्त्र, तंत्र, मंत्र का प्रभाव डालकर अर्थप्राप्ति की इच्छा रखता है। टोटके और चमत्कार दिखाकर आत्म प्रशंसा कीर्ति और प्रतिष्ठा बटोरना चाहता है। आगम शास्त्रों में उसे जरा भी रस नहीं होता है। सचमुच दुःख गर्भित वैरागी व्यक्ति क्वचित् एकाध तात्त्विक ग्रन्थ का थोड़ा–थोड़ा ऊपर–ऊपर से ज्ञान प्राप्त भी कर लेता है तो वह फूल कर गुब्बारा हो जाएगा। थोडा सा पानी मिलते ही ड्राउं...... ड्राउं....... करने लगता है। मोहगर्भित वैराग्य कुशास्त्रों के अध्ययन से संसार की निःसारता निर्गुणता देखने/जानने से जो वैराग्य होता है, वह मोह गर्भित वैराग्य होता है अज्ञान तपस्वी/बालतपस्वी को होता है। जिनेश्वर भगवंत के द्वारा बतलाए हुए सत्य तत्त्वों का जिसे यथार्थ बोध नहीं हैं और असर्वज्ञ कथित स्वर्ग, नरक, मोक्ष आदि के मिथ्या स्वरूप को जानकर जो संसार से विरक्त बनता हैं, उसका वैराग्य मोह गर्भित कहलाता है। मोह गर्भित विरक्त आत्माएँ कुशास्त्रों में कुशल होती है और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सर्वज्ञ कथित शास्त्रों का विपरीत अर्थ करती हैं। वे आत्माएँ स्वच्छन्दी होती है। न तो उनमें गुणीजनों के प्रति आदर भाव होता है और न ही क्रोध के प्रसंग में क्षमा भाव। क्योंकि भगवान की आज्ञा का प्रेम नहीं है। अपने बड़प्पन की डींग हांकना, दूसरों से द्रोह रखना, झगड़ा करना, दम्भयुक्त जीवन, पापों को छिपाना, गुणानुराग से रहित, उपकारी को भूल जाना, पाप के अनुबंध पड़ने की चितां नहीं करनी, शुभ क्रियाओं में चित्त की एकाग्रता न रखना अविवेक युक्त प्रवृत्ति करना इत्यादि मोह गर्भित वैराग्य के लक्षण है। ये दोनों ही प्रकार के वैराग्य त्याज्य है।

(3) ज्ञान गर्भित वैराग्य। सम्यक्त्व के कारण जिसे जिन प्ररूपित तत्वों का यथार्थ बोध हुआ हो, जो सदैव मोक्षमार्ग के उपाय में उद्यमशील हो, और तत्त्व जानने का अर्थी हो ऐसी आत्मा का वैराग्य ज्ञान गर्भित कहलाता है। यह ज्ञान गर्भित वैराग्य गीतार्थ (स्व पर शास्त्र के यथार्थ ज्ञाता) और गीतार्थ की निश्रा (आज्ञा पालन) स्वीकार करने वाले को कहा गया है। ज्ञान गर्भित वैराग्य के कारण आत्मा में अनेक गुण प्रकट होते है। ज्ञान गर्भित वैराग्य वाला सुक्ष्म चिंतन वाला होता है, मध्यस्थ होता है, उस आत्मा को किसी प्रकार का कदाग्रह नहीं होता है। वह क्रिया में आदर वाला, लोगों को धर्म में जोड़ने वाला, दूसरों की बुराई देखने में अंध, दूसरों की बुराई करने में मूक और निंदादि सुनने मे बधिर होता है। निर्धन मनुष्य जैसे धन पाने के लिए सतत् प्रयत्न करता है वैसे वह भी क्षमादि गुणों को प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयासरत होता है। विनम्र और इर्ष्या रहित होता है। वैराग्य में इतनी उंचाई न हो तो भी कम से कम राग की अल्पता अनाशक्ति रूप वैराग्य तो होना ही चाहिए। जिन वचनों को पूर्ण श्रद्धा और आस्था पूर्वक स्वीकार कर अपने जीवन में ज्ञान गर्भित वैराग्य को पुष्ट करने का प्रयास करें यही मंगल अभिलाषा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

17

आत्मनिग्रहः कार्यः

"आत्म नियंत्रण करना"

हमारे भीतर अनेक जन्मों से क्रोध–कषाय विषय वासना के कुसंस्कार अंदर पडे हुए है। जैसे कम्प्युटर की छोटी सी दिखने वाली फ्लोपी हजारों Page की किताब का मेटर सुरक्षित रखती है। वैसे आत्मा में जनम–जनम के कुसंस्कार मौजुद है। निमित्त मिलते ही उदय में आते हैं। छोटे–मोटे निमित्त से ही वे संस्कार जाग्रत हो उठते हैं। जैसे पानी हिलाने से उसमें रहा हुआ कचरा उपर आ जाता है, वैसे ही किसी निमित्त से भीतर पड़े हुए कुसंस्कार बाहर आते है। उस समय आदमी सामान्यतः अपना विवेक और ज्ञान भूलकर पशुवत् आचरण करने लगता है। पेट्रोल स्पर्श करने में ठंडा लगता है, परंतु एक चिनगारी का स्पर्श होते ही भंकर आग पैदा हो जाती हैं, बस, इसी प्रकार वैराग्य व नित्य धर्मोपदेश श्रवण आदि से आत्मा में घर कर गए कुसंस्कार दब जाते हैं, किंतु ज्यों ही उन्हे निमित्त मिलता है, वे कुसंस्कार जाग्रत हो जाते हैं और आत्मा का भयंकर अधःपतन करने के लिए तैयार हो जाते है, अतः अपने जीवन को सुरक्षित रखने के लिए कुसंग व कुनिमित्त से सर्वथा दूर ही रहने का प्रयास करना चाहिए। क्रोध, लोभ, काम आदि के आवेग के समय जो स्व नियंत्रण कर सकता है। उतने अंश में मनुष्य कहा जाता है। आवेगों के समय जो नियंत्रण करता है वही मनुष्य है बाकि नियंत्रण रहित होने से मनुष्य पशु के बराबर ही गिना जाता हैं। कुत्ते को गुस्सा आता है तब वह गुर्राने लगता है। गाय, भैंस, बैल को गुस्सा आता है तो सींग लगाने दौड़ते है। सर्प को गुस्सा आता है तो फुत्कारता है। सभी तिर्यंच/पशु आवेश के समय उस तरह का आचरण करने लगते हैं। जबकि मनुष्य की बात भिन्न है, अलग है। उसके पास विवेक शक्ति है, नियंत्रण शक्ति है। वह कुत्ते की तरह जब चाहे तब गुर्राता नहीं है अन्य प्राणियों की तरह भी नहीं करता है। वह अगर चाहे तो अपने आवेगों पर नियंत्रण कर सकता है। इस बात को ऐसे भी कह सकते है। जो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आदमी जितने अंश में अपने आवेग पर नियंत्रण काबू कर सकता है, उस आदमी का उतना भाग "आदमी" का है, शेष भाग पशु का है। जो लोग ऐसा कह रहे है कि आवेगों को दबाना नहीं चाहिए, मन में आए वैसा बरतने की छूट देते है, वे लोग मनुष्य को पशुता की ओर धकेल रहे है। किसी का भी दमन मत करो। दमन करने से वे वृत्तियाँ दुगुनी शक्ति से दबी हुई स्प्रींग की तरह उछलेगी। उससे अच्छा है उसे बाहर ही आने दो। तुम निर्बोझ, निर्भार हो जाओगे। ऐसी बातें करने वाले और सलाह देने वाले किसी का कहा हुआ कह रहे हैं। किन्हीं मनोंविज्ञानिओं का है। सब उसका अनुसरण कर रहे है, यह एक प्रवाह है। वे लोग इतना भी नहीं सोचते कि मन में जैसा वेग आये उसी प्रकार बर्ताव करने लगेंगे तो दुनिया की क्या हालत होगी? जगत की बात छोड़ो अपने मन में भी क्या-क्या चलता रहता है कैसे-कैसे आवेग उठते हैं? उन सभी आवेगों इच्छाओं की पूर्ति करने की छुट्टी दे दी जाय तो क्या होगा? क्या हम इन्सान के रूप में गिने जायेंगे? अरे! फिर तो हम में और पशु में कुछ भी फर्क नहीं रहेगा। सिर्फ दमन ही नहीं दमन के बाद फिर विसर्जन भी होना चाहिए और दमन के बाद ही विसर्जन हो सकता है। जैसे पानी में कचरा है और व्यक्ति फिटकरी के सहयोग से कचरे को नीचे दबा देता है, पर क्या हम उस पानी को निर्मल कहेंगे? यदि उस पानी की निर्मलता परखनी हो तो उसे वापस हिलाना, पाओगे वह पुनः मटमैला हो गया है। पानी को निर्मल करने के लिए कचरे को सदा नीचे दबा कर रखना हितकारी नहीं है। पानी को अगर सौ फिसदी निर्मल/स्वच्छ करना चाहते हो तो कचरे को नीचे डुबाकर ऊपर के पानी को किसी दूसरे बर्तन में निकाल दो और नीचे के पानी को विसर्जन कर दो। फिर उस पानी को कितना भी हिलायें वह पुनः गन्दा नहीं हो सकता तो पहले प्रयत्न पूर्वक दमन फिर विसर्जन हो। इच्छाओं, कषायों और वासनाओं के विसर्जन का यही श्रेष्ठ उपाय है। सिर्फ दमन करके बैठे रहना ठीक नहीं, उन्हें छोड़ा भी

For Private And Personal Use Only

जाना चाहिए। एकनाथ के पास एक व्यक्ति आया करता था, चर्चा करता प्रश्न पूछता– एक दिन अजीब सा प्रश्न पुछ लिया। मैं आपको बहुत दिनों से जानता हूँ, आज आपसे पूछ ही लेता हूँ। आपमें बुराईयाँ पैदा होती है या नहीं? विषय–कषाय पैदा होते है या नहीं? अन्दर पाप पैदा होते है या नहीं? बुरे विचार तो आते होंगे, बाहर से तो मैं आपको जानता हूँ अन्दर के बारे में मुझे बताइए। अभी बता दूँ। पर मुझे एक बात ध्यान में आई कल जब मैंने तुम्हारा हाथ देखा था मुझे दिखाई पड़ा कि सात दिनों में तुम्हारी मृत्यु होगी, सात दिन बाद तुम मर जाओगे, तो मैं तुम्हें बता दूँ, अब तुम्हारे प्रश्न का जवाब देता हूँ। कहीं फिर से भूल न जाऊँ इसलिए बता दूँ। व्यक्ति बैठा था खड़ा हो गया, कहा मौका मिला तो फिर आऊँगा। हाथ पैर कांपने लगे। जबान पे ताला लग गया। संत ने कहा इतनी जल्दि क्या हैं? सात दिन बहुत है, मरना तो है, सभी को मरना है। व्यक्ति एकनाथ की बात नहीं सुन रहा था, नीचे उतरने लगा। आया तब बल था, शक्ति थी, लौट रहा है तो दिवार के सहारे। मौत सात दिन बाद है अब बूढ़ा हो गया, रास्ते में ही गिर पड़ा। बेहोश हो गया। लोगों ने घर पहुँचाया, मित्र स्वजन इकट्ठे हुए खबर फैल गई। सात दिन बाद मौत है। सातवें दिन शाम के समय घर के सारे लोग रो रहे थे, व्यक्ति बिस्तर पर लेटा था। एकनाथ उसके घर गए, मौत का सा वातावरण था, उन्होंने कहा रोओ मत। मेरे मित्र एक बात पूछ ने आया हूँ, इन सात दिनों में कोई विकार, बुराई, पाप भीतर में पैदा हुए, मुश्किल से आंख खोली, मरते हुए की मजाक कर रहे हो। संत ने कहा– तुमने भी मरते हुए की मजाक की थी। तुम्हारी मौत अभी नहीं है, मैने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दिया है। जिसे मौत नजर आए, पाप की सजा नजर आए, दुर्गति नजर आए, पाप विलिन होते चले जायेंगे, विकार मर जाते है। विषय कषाय मोह–बुराइयाँ दमन पाप की भारी सजा को नजर समक्ष रखने से आत्म दमन तो होता ही हैं किन्तु इनका विसर्जन भी होता है। म्युझियम में रजवाड़े के समय की भोजन करने की एक डिस रखी हुई है। उस डिस के

For Private And Personal Use Only

धातु की रचना ही ऐसी है कि यदि उसमें विषमिश्रित चीज रखें तो तत्काल ही उस डिस से तड़...... तड़........तड़......... आवाज होने लग जाती है क्योंकि वह धातु विष को सह नहीं पाती है। ऐसा होने से रजवाड़े को अपने साथ होने वाले षड़यन्त्र की खबर हो जाती। अपनी आत्मा इस ड़िस जैसी होनी चाहिए, इस में विषय-कषाय, पाप, बुराई का जहर गिरे कि वह कांपने लगे, उसे दु:ख होने लगे। इन सब के प्रति धिक्कार भाव के बिना ऐसी कंपन कभी आ नहीं सकती। पपिते जैसा भय-ड़र होना चाहिए। एक थे पपिता भीरू शेठ। शेठ को पेट की सख्त पीड़ा के कारण वैद्य ने दवाई दी। और साथ ही दहीं न खाने की सख्त मनाई भी की। परन्तु बेचारे शेठ ने एक बार आखिर दहीं खा ही लिया। वे अपनी दहीं खाने की इच्छा को रोक नहीं पाये। परिणाम स्वरूप। उस रात को उन्हें असह्य पीड़ा होने लगी। तड़प तड़प कर मुश्किल से रात गुजारी। सुबह फिर वैद्य को दिखाया। दुबारा वैद्य ने दवाई देने के साथ ही शेठ को यह भी कहा कि अब पपिता मत खाना। दहीं खा लेने की गल्ति से शेठ के पेट में जो पीड़ा उठी थी, वह इतनी असह्य थी कि वे अब पपिता को खाने के लिए ललचाएं नही। इतना ही नहीं, परन्तु कभी सपने में भी पपिता देख लेते तो जोरों से चिल्ला उठते। कुछ भी हो कषाय-विषयादि के विसर्जन बिना ही धर्म क्रियाएँ सद्गति दे सकती है, परन्तु मोक्ष नहीं दे सकती। वही धर्म क्रियाएँ मोक्षप्रद बन सकती हैं जिन्हें करने वाले के हृदय में कषायादि के प्रति धिक्कार ठूस-ठूस कर भरा हो। स्वेच्छा से जो दमन और विसर्जन नहीं करता उसे दूसरे के दबाव से दमन और विसर्जन करना पड़ता है। कितना अच्छा होगा अगर हम समझकर, ज्ञान पूर्वक दमन और विसर्जन करते! हम नरक में थे तब परमाधामी ने हमारा बहुत ही दमन किया है। घोड़े के भव में घुड़सवार ने, गाय, भैंस, बेल के भव में किसान ने, हाथी के भव में महावत ने, पेड़ पौधों के भव में हवा और आग ने, मनुष्य के भव में शेठ ने, सैनिक थे तब सेनापति ने, सेवक थे

For Private And Personal Use Only

तब राजा ने दमन किया है, और अभी कौन दमन कर रहा है? आप ही बता दो। परन्तु ऐसे दमन का कुछ मूल्य नहीं है। क्योंकि तब अपनी लाचारी, मजबूरी थी। तब अपने पास दूसरा विकल्प नहीं था, पर अभी स्वेच्छा से मन, इन्द्रियों आदि का दमन करें तो दिव्यता, तेजस्विता प्रगट होगी। हॉमवर्क आने वाले कल के क्लास की तैयारी है, वैसे इस भव का आत्मदमन/नियंत्रण और विसर्जन आगामी भव की तैयारी है। अच्छा हॉमवर्क करने वाला अच्छी तरह से पढ़ सकता है। इस भव में हॉमवर्क रूप में कषायादिका दमन–शमन, विसर्जन करने वाला बाद के भवों में और भी अच्छी तरह से विषय–कषाय को त्याग सकता है, साधना में आगे बढ़ सकता है, और आत्मकल्याण में प्रगति साध सकता है। विद्या चाहिए, परंतु लेशन करना नहीं है यह बात विद्यार्थी के लिए अयोग्य गिनी जाती है, वैसे परलोक में सद्गति चाहिए पर इस भव में संसार के दु:खों को बढ़ाने वाले विषय–कषाय की प्रवृत्ति भी छोडनी नहीं है। जिसे पढ़ना नहीं है उसे विद्यार्थी कैसे कह सकते है? सिर्फ नाम का ही विद्यार्थी न। भिखारी को पूछा तुमने अपने पुत्र का नाम वैभव क्यों रखा? भिखारी ने कहा–मुझे भी कम से कम यह संतोष रहेगा कि मेरे पास भी वैभव है इसलिए। इन्द्रियों के तो गुलाम बने हैं और कहलाते है जैन। उस भिखारी को वैभव नाम से संतोष मान लेना है, वैसे अपने को भी केवल जैन शब्द से ही संतोष मानना हैं? हितकर और सुखकर की चतुर्भंगी समझ में आ जाए तो हम हितकर और सुखकर प्रवृत्ति कर सकते हैं। जो प्रवत्ति इस लोक के सुख के लिए ही हो वह सुखकर है, और जो प्रवृत्ति परलोक को सुधारने वाली बने वह हितकर है। (1) कितनीक प्रवत्तियाँ सुखकर है, पर हितकर नहीं, जैसे कि शरीर की अपेक्षा से होटल का खाना, आत्मा की अपेक्षा से अनीति। (2) कितनीक प्रवृत्तियाँ सुखकर भी नहीं और हितकर भी नहीं है। जैसे शरीर की अपेक्षा से जहर और आत्मदृष्टि से संघर्ष क्रोधादि। (3) कितनीक प्रवत्तियाँ सुखकर

For Private And Personal Use Only

नहीं पर हितकर है। शरीर की दृष्टि से कडवी दवा और आत्म दृष्टि से उपवास–आयंबिलादि और (4) कितनीक प्रवृत्तियाँ सुखकर भी है और दुःखकर भी, जैसे दुनियादारी की अशांति में शांतिदायक सामायिक और टेन्सनमुक्त मन को प्रसन्न करने वाली पूजा। अगर हमें दमन–शमन और विसर्जन अच्छा लगता हो तो यह प्रवृत्ति तुरन्त अपनायी जानी चाहिए। इस चतुर्भंगी में आत्मा के लिए वर्तमान और भविष्य में भी सुखकर और हितकर हो उन्हें अपनाना चाहिए। दूसरों को बहुत दबाया। बाप बनकर बेटे को दबाया। पति, बेटा और पुत्र वधु बनकर अंत में अपने ही माँ–बाप को दबाया। जमाई बनकर सास ससुर को दबाया, बहु बनकर सासु को दबाया और सासु बनकर बहु को दबाया। परमात्मा कहते हैं उस दमन से भवभ्रमण नहीं मिटा। भवभ्रमण से मुक्त बनने के लिए आत्मदमन करो।

वरं मे अप्पा दंतो, संजमेण तवेण य।
माहं परेहि दम्मन्तो, बंधणेहिं वहेहिय।।

दूसरों का दमन–शमन किया, अब आत्मदमन भी करो। जो आत्मा का संयम और तप से दमन करता है उसे दुर्गति के वध–बंधन से निग्रहित नहीं होना पड़ता। पराधीनता वश कई बार चारोंगति में दमन हुआ पर स्वाधीनता से दमन हो तो सकाम निर्जरा होती है। दमन अर्थात् पाँच इन्द्रियों और मन रूपि घोड़ा जो चारों तरफ इच्छानुसार दौड रहे हैं उन्हें संतोषरूपी लगाम से रोकना उसे ही कहते है दमन। शमन का अर्थ है: कषायरूपी आग को क्षमारूपी जल से शांत करना उसका नाम शमन। कभी निमित्त से तो कभी निमित्त बिना भी हम कषाय के आवेग से घिर जाते हैं। क्या हम इनका दमन नहीं कर सकते? मेतारज मुनिवर ने सोनी के उपसर्ग के समय क्रोध का दमन किया था। शालीभद्रजी और चंपाश्राविका ने मान का दमन किया था। कपिलमुनि और पुणियाश्रावक ने लोभ का दमन किया था। विजय शेठ और विजया शेठाणी ने काम का दमन किया था।

एक गाँव में एक गाड़ी में बैठकर चार पाँच युवान आये और गाँव में

For Private And Personal Use Only

जाहेरात करने लगे। आने वाले कल से दूध मूफ्त, दहीं मुफ्त, घी मुफ्त, पेड़े मुफ्त, बरफी मुफ्त, मुफ्त......... मुफ्त.......... मुफ्त.......... यह मुफ्त शब्द सुनते ही गाँव के लोग इकट्ठे हो गये (तमाशाने तेडु न होय) धर्म के लिए जाहेरात करवानी पडती है। यहाँ इस जाहेरात को सुनकर सभी खुश-खुश हो गए और सोचने लगे। कोई कहने लगा कल मैं दूध पीऊंगा। कोई कहता है मैं दहीं खाऊँगा। कोई कहता है मैं बरफी खाँऊगा। मुफ्त में मिलेगा तो खाने के लिए कौन मना करेगा। तब उन युवानों ने कहा कि सुनो। आनेवाले कल इस गाँव में पान सौ से ज्यादा गायें, तीन सौ भेंसें और सौ बकरियों का धन आएगा। उनको तुम चारा डालना, गोबर उठाना, उबला बनाना, यह सब-कुछ करने का फिर दूध, दहीं, घी, पेड़े, बरफी सब मुफ्त में। यह सुनकर वहाँ जो खड़े थे सभी रवाना हो गए।

माल खाना है परन्तु मेहनत नहीं करनी है। वैसे सुख पाना है, सद्गति पानी है परन्तु आत्मदमन अर्थात् विषय-कषाय इन्द्रियों का मनोनिग्रह करना नहीं है। निम्न प्रकार की प्रवत्ति से आत्मदमन होता है।

(1) किसी भी प्राणी के द्रव्य प्राणों का नाश नहीं करने से आत्मदमन/नियन्त्रण होता है। (2) अप्रिय-अहितकर और झूठा वचन नहीं बोलने से आत्मदमन होता है। (3) मालिक की बिना अनुमति के किसी भी वस्तु को नहीं लेने से आत्मदमन होता है। (4) काम-भोग की प्रवृत्ति नहीं करने से आत्मदमन होता है। (5) आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह नहीं करने से और उन पर आशक्ति नहीं रखे से आत्मदमन होता है। (6) किसी पर क्रोध नहीं करने से आत्मदमन होता है। (7) स्वामित्व प्राप्त किसी भी वस्तु का अभिमान नहीं करने से आत्मदमन होता है। (8) किसी भी व्यक्ति के साथ माया, कपट, आचरण नहीं करने से आत्मदमन होता है। (9) धन-वैभवादि की लालसा नहीं करने से आत्मदमन होता है। (10) किसी भी व्यक्ति अथवा वस्तु पर मोह नहीं करने से आत्मदमन होता है। (11) किसी व्यक्ति से द्वेष-घृणा नहीं करने से आत्मनियंत्रण होता है। (12) किसी भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यक्ति के साथ झगड़ा नहीं करने से आत्मनियंत्रण होता है। (13) किसी भी व्यक्ति पर झूठा आरोप नहीं लगाने से आत्मनियंत्रण होता है। (14) किसी के सच्चे झूठे दोषों को प्रकाशित नहीं करने से आत्मनियंत्रण होता है। (15) इष्ट की प्राप्ति से खुश और अनिष्ट की प्राप्ति से उद्विग्न नहीं होने से आत्म नियंत्रण होता है। (16) दूसरे की निंदा नहीं करने से आत्मनियंत्रण होता है। (17) माया पूर्वक नहीं बोलने से आत्मनियंत्रण होता है।

जिनेश्वर परमात्माने जो तत्त्व कहे है। उनको मानने से आत्मनियंत्रण होता है।

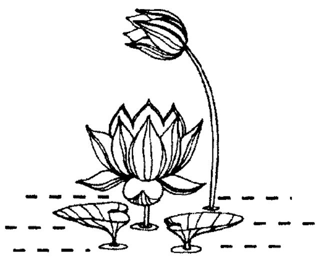

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

18

दृष्ट्वा भगवतदोषाः

"संसार के दोषों का दर्शन करना"

सूरज पूरब की ओर उदित होता है और उसी क्षण से ही पश्चिम की ओर अपनी यात्रा की शुरूआत कर देता है। इसी तरह मनुष्य जन्म लेता है और जन्म पाते ही मृत्यु की ओर अपने पाँव बढ़ाना शुरू कर देता हैं। यही कारण है कि मनुष्य का जन्म अनित्यता की गोद में होता है। अनित्यता का पाठ वह जन्म के साथ ही पढ़ना शुरू कर देता है। जहाँ जीवन है, वहाँ मृत्यु भी है, जहाँ दुःख है, वहाँ सुख भी है। जहाँ सफलता है वहाँ निष्फलता भी है। इस संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है। बगीचे में भँवरे की जो गुनगुनाहट आप सुन रहे हैं, वह भी कुछ समय तक ही है। जो फूल आज खिले हैं, वे कल मुरझा जाएँगे। जिस कोयल की सुरीली स्वर लहरियाँ आज हमें मदमस्त बना रही हैं, जाड़े के मौसम में वह उड़ जाएगी। जहाँ ऋतुराज बसंत भी हमेशा नहीं ठहरता वहाँ किसी भी चीज का चिर सम्मेलन कैसे संभव है! सरिता में आया पानी आगे बढ़ने ही वाला है, वह लौटकर नहीं आएगा। पानी बहता हुआ आगे ही चला जाता है। वह उसी रास्ते से वापस नहीं आएगा। इस बहते पानी का नाम ही जीवन है।

हमने एक दिया जलाया। हर आदमी सोचता है कि दिया जल रहा है। इसका एक पक्ष और भी है। जल रहा दिया प्रतिपल बुझता भी चला जा रहा है। लौ पैदा हुई, आगे बढ़ी और बढ़ने के साथ ही खत्म भी हो गई। लौ का एक तांता जरूर लगा रहता है। हम सफर करते हैं। साथ में सफर करने वालों से दोस्ती हो जाती हैं। कितने ही अजनबी हमारे मित्र बन जाते हैं। हम साथ-साथ बैठते हैं। साथ-साथ खाना खाते हैं। एक दूसरे को अपना सुख-दुःख कहते, सुनाते हैं। आदमी मूर्खताएँ करता है। गाड़ी स्टेशन पर रूकी। आदमी उतर गया और वहाँ की रंगिनियों में खो गया । जब गाड़ी चलने लगी तो चिल्लाया अरे रोको! रोको! गाड़ी रोको! मैं यही रहूँगा। स्टेशन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से कैसा राग! ये गाड़ी आगे बढ़ेगी ही स्टेशन छूटेगा ही। आदमी को जिन्दगी में कदम–कदम पर ठोकरें खाने को मिलती है। उसे मृत्यु का दर्शन भी होता है, लेकिन–आदमी न जगता है, न संभलता है। दुनिया का यह सबसे बड़ा सत्य है कि ठोकरें खाने के बाद भी आदमी को सच्ची समझ नहीं आती। ठोकरें लगना अनुभव है और जो व्यक्ति ऐसा अनुभव पाकर भी नहीं संभलता, उससे बडा बुद्धू इस दुनिया में कोई और नहीं है।

महाभारत की एक प्रसिद्ध घटना है। पाण्ड़व अपनी माँ कुन्ती के साथ वनवास भोग रहे थे। रास्ते में चलते–चलते एक दिन वे काफी थक चूके थे कि कुन्ती ने कहा कि बड़े जोरों से प्यास लगी है। धर्मराज युद्धिष्ठिर ने अपने सबसे छोटे भाई नकुल से कहा कि समीप ही कोई तालाब हो तो जरा पानी लेकर आओ। भीम ने एक पेड़ पर बहुत ऊँचें चढ़कर बताया कि यहाँ से थोड़ी ही दूर एक तालाब है। नकुल ने पत्तों का एक पात्र बनाया और चल दिया पानी लाने। उसे गए जब काफी देर हो गई वह आया नही, तो धर्मराज ने सहदेव को भेज दिया। वह भी नहीं आया। एक–एक कर अर्जुन और भीम भी जब वापस न लौटे तो धर्मराज खुद तालाब की ओर गये। तालाब के निकट पहुँच कर उन्होंने देखा कि एक पेड़ के करीब तालाब की पाल पर चारों भाई मृत अवस्था में पड़े हैं। धर्मराज बहुत दुःखी हुए, विलाप और रूदन भी किया। फिर माँ के लिए तालाब से ज्यों ही पात्र में पानी भरा, एक आवाज आई– ठहरो! पानी पीने से पहले मेरे एक सवाल का जवाब दो, वरना तुम्हारी हालत भी तुम्हारे भाईयों जैसी हो जाएगी। धर्मराज ने कहा– आप कौन हैं और आपका सवाल क्या है? पानी से आवाज आई– मैं यहाँ का एक यक्ष हूँ और यहाँ जो भी पानी पीने आता है, मेरे सवालों का जवाब दिए बगैर वह यहाँ इस तालाब का पानी नहीं पी सकता। यक्ष ने पूछा– तुम ही बताओं! दुनिया में सब से बड़ा सत्य क्या है? धर्मराज ने जवाब देने के बजाय यक्ष से ही पूछ लिया। पहले तुम ही बताओं मेरे इन चारों भाईयों ने तुम्हारे इस सवाल का जवाब क्या दिया था। यक्ष ने कहा कि नकुल ने सबसे बड़ा सत्य धर्म, सहदेव ने ईश्वर, अर्जुन ने ईमान और भीम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ने शक्ति जवाब दिया था। अब धर्मराज ने जवाब दिया। जो व्यक्ति ठोकर खाने तथा अनुभव पाने के बाद भी नहीं संभलता, वह सबसे बड़ा मूर्ख है और यही दुनिया का सबसे बड़ा सत्य है। युद्धिष्ठिर ने अपनी बात का खुलासा करते हुए आगे बताया कि जब नकुल यहाँ मृत अवस्था में पड़ा था तो उसकी हालत देखकर भी मेरे शेष तीन भाइयों को समझ नहीं आई। उन्होंने विचार नहीं किया कि इस की हालत ऐसी क्यों हुई। बस, भेड़, बकरियों जैसा काम इन्होंने किया और कुएँ में जा गिरे। इसलिए मेरा कहना है सबसे बड़ा सत्य है कि आदमी अनुभव का फायदा उठाए और जो फायदा नहीं उठाता, उससे बड़ा बेवकूफ और कोई नहीं है। यह घटना एक प्रतीक है। जो आदमी ठोकर लगने से भी नहीं संभलता, उसके सामने यदि स्वयं भगवान भी आ जाएँ तो भी उसे नींद से जगाना बहुत कठीन है। संसार के दोषों का दर्शन आये दिन अपनी जिन्दगी में होता रहता है। गुरूभगवंतों के मुख से प्रवचन के द्वारा भी सुनते रहते है, फिर भी हमारी मोह नींद नहीं उड़ती, आंख नहीं खुलती। मनुष्य जिस राग, मिथ्यात्व और माया से जुडा हुआ है, उससे छूट नहीं पाता। इसीलिए तो कहता हूँ कि व्यक्ति की सारी जिन्दगी अनित्यता की गोद में पल रही है। मनुष्य का पहला धर्म यही है कि जिनके साथ वह अपनी जिन्दगी को साधे, उनके बीच रहते हुए भी जिन्दगी में लगने वाली ठोकरों से जागे। उनसे अनुभव पाए समझ को परिपक्व बनाए। उस अनुभव के ज्ञान को ही असली ज्ञान और सम्यग् ज्ञान समझो। जब तक संसार मीठा, मधुर और सुन्दर लग रहा है वहाँ तक उसमें से छुटने की इच्छा नहीं होगी। कारागृह को ही महल समझा जाये, बेड़ियों को ही आभूषण समझा जाये तो उन्हें छोड़ा कैसे जायेगा?। संसार की विचित्रता को तो देखो। कहीं विशाल साम्राज्य है। तो कहीं धन का अंश भी नहीं। कहीं सुन्दर शरीर तो कही कुरूप काया। कहीं हास्य! तो कहीं रूदन! कहीं शादी के मंगल गीत! तो कही मातम्! ऐसे संसार से निर्वेद न हो यही तो आश्चर्य है।

ज्ञानि कहते हें, स्वार्थमय संसार है। यद्यपि इस संसार में खून के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रिश्ते कहलाने वाले अनेक संबंध हैं, परन्तु उन संबंधों में स्वार्थ की भयंकर बदबू रही हुई है। जब तक अपना स्वार्थ सिद्ध होता होगा, तभी तक उन संबंधों के बीच प्रेम और वात्सल्य के दर्शन होंगे, परन्तु स्वार्थ पूर्ण होने के साथ ही उन संबंधों के बीच लंबी दरार सी पड़ जाती है। आपके बिना मैं अपने जीवन के अस्तित्व की कल्पना भी नही कर सकती हूँ। इस प्रकार बोलने वाली सूर्यकांता महारानी ने ही अपने प्रियतम प्रदेशी राजा को विष भरा दूध का जाम पीलाकर मौत के घाट उतार दिया था। कितना आश्चर्य! जो प्राण देने के लिए तैयार थी, वही प्राण लेने के लिए तैयार हो गई! कारण? कारण इतना ही था कि प्रदेशी राजा अब धार्मिक बन गए थे। जबकि सूर्यकांता महारानी को धार्मिकता पसंद नहीं थी।

अपना ही खून, बेटे आनन्द ने, पिता सिंह राजा को भयंकर कारागृह में ड़ाल दिया था। कारागृह का वातावरण बड़ा ही विषम है, चारों ओर से भयंकर बदबू आ रही है। कोने में गन्दगी के ढ़ेर पड़े हैं। फिर भी सिंह राजा के मुख पर प्रसन्नता है। उनके दिल में एक मात्र इस बात का दुःख है कि समय रहते संयम ग्रहण नहीं कर पाए। परन्तु उस कारागृह में ही भाव से संयम स्वीकार कर उन्होंने चारों प्रकार के आहार का त्याग कर अनशन कर लिया। वे वहाँ रहकर भी आत्म समाधि में मग्न बन गए। कुछ ही देर के बाद भोजन का वक्त होने पर आनन्द ने नौकर के द्वारा पिता सिंह राजा के लिए भोजन की थाली भेजी। परन्तु अणाहारी पद के उपासक सिंह राजा ने आहार ग्रहण करने से इनकार कर दिया। उस नौकर ने जाकर राजा आनन्द को यह बात कही। यह सुनते ही आनन्द राजा क्रोधित हो उठा और बड़बड़ाने लगा, मेरी आज्ञा को भंग करने की हिम्मत? अभी उन्हें खत्म कर दूंगा। क्रोध से धमधमाता हुआ हाथ में नंगी तरवार लेकर आनन्द कुमार कारागृह में पहुँचा और बोला– भोजन स्वीकार......... अन्यथा यह नंगी तलवार तुम्हारा शरकलम कद देगी। बेटे आनन्द के मुख से इस तरह के ड़रावने कठोर वचन सुनकर भी सिंह राजा ड़रे नहीं, किन्तु मधुर स्वरों में बोले मुझे मृत्यु का भय नहीं है। मौत उनके सामने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खड़ी थी......... किन्तु मौत से वे भयभीत नहीं हुए। क्योंकि उन्होंने जीवन की यथार्थता को जान लिया था। जिन धर्म ने उन्हें निर्भय बना दिया था। जिस आनंद कुमार को सिंह राजा ने बड़े प्रेम से पाला–पोषा था, वही आनंद कुमार जबरन राज्य छीनकर पिता को जेल में डाल देता है, इतना ही नहीं उनकी हत्या भी कर देता है। कारण इतना ही था कि उसे राजसिंहासन प्राप्त करना था।

मुझे याद आती है उस मणिरथ की, जो छोटे भाई युगबाहु की पत्नी मदन रेखा को पाना चाहता था, अपनी बनाना चाहता था, अपने मोहजाल में फँसाना चाहता था, परन्तु मदन रेखा महासती थी। जिनका नाम भरहेसर की सज्झाय में आता है, जिनका स्मरण किये बिना हम साधु–साध्वी, अन्न–जल भी ग्रहण नहीं करते हैं। बड़ा भाई मणिरथ सोच रहा था कि जब तक युगबाहु जिन्दा रहेगा वहाँ तक मदन रेखा मेरी हो न सकेगी। अतः मौका देखकर छोटे भाई युगबाहु को ही खत्म कर दूँ। वह कितने ही दिनों से मौके की तलाश में था। आखिरकार एक दिन मणिरथ को वह मौका मिल ही गया, वह छोटे भाई के पेट में छूरी भौंक कर भाग गया। युगबाहु पत्ते की तरह जमीन पर गिर पड़े। और यह देखकर मदन रेखा वहाँ दौड पडी ओर पति युगबाहु की स्थिति देखकर बड़ा ही आघात लगा। वहाँ विलाप और रूदन की जगह पर अपने को सम्हालते हुए पति की देह को अपनी गोद में लेकर बैठ गई। क्रोध के आवेश में मेरे स्वामी की दुर्गति न हो जाय, अतः मुझे इनकी आत्मसमाधि के लिए प्रयत्न करना चाहिए। प्रेरणाओं के सरोवर में डूबकर युगबाहु की आत्माने समाधिपूर्वक देहत्याग करके ब्रह्मदेवलोक को प्राप्त किया। पति की समाधि मृत्यु का श्रेय महासती मदन रेखा को ही जाता है। कारण इतना ही था कि मणिरथ मदन रेखा के रूप में पागल बन गया था। उस विषयांधता के कारण ही उसने भाई का खून किया था।

मुझे याद आती है अमर कुमार की, गरीब भद्रा बाह्मणी ने अपने ही पुत्र को बलि चढ़ाने के लिए चाँदी के कुछ टूकड़ों के बदले में बेच दिया था। किंतु

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवकार के प्रभाव से अमरकुमार आबाद रीति से बच गया था। कारण इतना ही था कि भद्राब्राह्मणी को पैसे चाहिए थे, अतः बदले में बेटे को ही दे दिया था।

चुलनी माता ने अपने पुत्र ब्रह्मदत्त को जिन्दा जला देने का षडयंन्त्र रचा था। कारण वह पर पुरूष में आसक्त बनी थी। चाणक्य ने मित्र पर्वत के साथ ठगाई की थी। भरत ने षट्खंड़ के अधिपति बनने के लिए भाई बाहुबलि के साथ बारह बारह वर्ष तक युद्ध किया था।

दो भाई थे। उन दोनों में गजब का प्रेम था। एक दिन बड़े भाई ने छोटे भाई को घर पे आने का निमंत्रण दिया। दोनों भाई A.C. युक्त कमरे में एक ही टेबल एक ही थाली में खाना खा रहे थे। बहुत ही आनन्द से दोनों भाईयों ने खाना खाया। और खाना खाने के बाद न जाने क्या बात हुई? कहीं से आग की चिनगारी आ गिरी। वे दोनों भाई झगड़ पड़े। एक दूसरे को मारने को तत्पर हो गए। एक दूसरे के खून के प्यासे बन गए। मामला अदालत में गया और आखिर वे दोनों भाई जिन्दगी भर के लिए एक दूसरे के दुश्मन बन गए।

एक ही माँ के दो पुत्र थे। पहला बेटा हुशियार था और खूब धन कमाता था, दूसरा बेटा कमजोर था, वह धन कमाने में पीछे था। कई बार तो दुर्भाग्य के कारण छोटा बेटा नुक्सान भी कर देता था। कहने के लिए तो एक ही माँ के वे दो बेटे थे। परन्तु उन दोनों के प्रति माँ के व्यवहार में काफी अंतर नजर आता था। बड़े बेटे को वह खूब प्रेम देती थी, उसे वह गर्म-गर्म रोटियाँ खिलाती थी, उसका हर तरह से ख्याल रखती थी, जबकि छोटे बेटे के प्रति उसे विशेष प्रेम नहीं था, उसे वह ठंडी रोटी खिलाती थी। वास्तव में माँ के व्यवहार में भी स्वार्थ की बदबू ही थी। एक ग्वाला गायों को घास ड़ाल रहा था, परन्तु कुछ गायों को हरी-हरी घास खिला रहा था। और कुछ गायों को सुखी घास। खोज करने से मालुम हुआ कि जो गायें दूध देती हैं, उन्हें हरी घास खिलाता है और जो गायें दूध नहीं दे रही हैं उन्हें सुखी घास खिलाता है। यह ग्वाले का स्वार्थ है। जिन वृक्षों पर फल-फूल आते हैं, माली उन वृक्षों की भली भांति देखभाल करता है, परन्तु जो वृक्ष फल-फूल नहीं देते उजड़े हुए होते हैं,

For Private And Personal Use Only

माली उनकी जरा भी परवाह नहीं करता है। क्योंकि यहाँ दुनिया में स्वार्थ का ही बोलबाला है। सरोवर में जब तक पानी भरा होता है, तब तक हजारों मनुष्य पशु पक्षी वहाँ आते हैं, परन्तु ज्योंहि वह सरोवर सूख जाता है, त्योंहि सभी व्यक्ति उससे दूर चले जाते हैं। संसार में प्रेम करते हैं धन से। संसार में प्रेम करते हैं पद से। संसार में प्रेम करते हैं शक्ति से। संसार में प्रेम करते हैं रूप से। यदि तुम्हारे पास धन है, पद है, रूप है अथवा शक्ति है तो दुनिया तुमसे प्रेम करेगी। तुम्हारे प्रति सन्मान भाव दिखायेगी, परन्तु यदि तुम्हारे पास इनमें से कुछ भी नहीं है तो तुम्हारे ही मित्र–स्वजन–संबंधि तुम से दूर–दूर रहेंगे। इसीलिए तो भगवान महावीर ने कहा है। स्वार्थमय संसार है संसार के सारे संबंध स्वार्थ से भरे हुए है। आज संसार में कई घटनाएँ ऐसी घट रही है जो मानव जाति के लिए कलंक है। अखबारों में हम बहुधा पढ़ते हैं। अपने नाम से वसीयत नाम न करने पर पुत्रों ने पिता की हत्या कर दी। धन के लालच में बेटे ने माँ के पेट में छुरा चला दिया। पति ने अपनी नई नवेली दुल्हन पर दहेज के लिए केरासिन डालकर आग लगा दी। संपत्ति के लोभ में भाई ने भाई की हत्या कर दी। एक पिता ने अपनी बेटी के साथ मुँह काला किया। माँ बाप ने एक बेटी को दरिन्दों के हाथ में बेच दिया।

एक शेठ की दो पत्नियाँ थी। दोनों कमरे आमने–सामने थे। एक दिन शेठ देर रात तक घर नहीं लौटा। संयोग से एक दिन चोर चोरी करने उसी शेठ के घर में घुस गया। रात के करीब बारह बजे जब शेठ घर आया तो ऊपर चढने के बाद दायें कमरे में घुस गया तो बाएं कमरे वाली पत्नी चिल्लाती हुई आई और दरवाजे पर हाथ मारने लगी। शेठ जब बाहर आया तो उसने कहा, आज तो मेरी बारी है। दाएं कमरे वाली शेठानी बोली कि बारी है तो क्या हुआ। शेठ आज मेरे कमरे में आ गया है। दोनों लड़ने लगी। दोनों ने शेठ का एक–एक पाँव पकड़ लिया और लगी अपने अपने कमरों की तरफ खींचने। चोर यह सारा नजारा देखता रहा। सारी रात गुजर गई, चोर चोरी न कर सका और शेठ को कोई शेठानी अपने कमरे में न ले जा सकी। सुबह हो गई। इतने

For Private And Personal Use Only

में शेठ की नजर चोर पर पड़ गई । उसने चोर को पकड़ लिया और सजा दिलाने राज–दरबार में ले गया। दरबार में राजा ने चोर को कहा कि तू चोरी नहीं कर पाया, मगर चोरी का प्रयास तो किया ही है। अब तू ही बता दे कि तुझे क्या सजा दि जाए? चोर बोला अन्नदाता। आप जो दण्ड़ देना चाहे, दे दें मगर दो दो औरतों के साथ मेरी शादी मत करवाइएगा। चोर ने रात की सारी घटना बयान कर दी। कहने का तात्पर्य यही है कि आये दिन स्वार्थमय संसार के दर्शन होते रहते हैं फिर भी इस सांसर में मन लग जाता है। सुअर जैसे विष्टा में आसक्त बना रहता है, वैसे मनुष्य भी संसार की माया जाल में ही मग्न होते हैं।

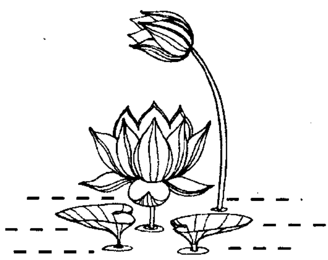

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

19

चिन्त्यं देहादिवैरूप्यम्

"देह आदि की विरूपता सोचनी"

ज्ञानियों ने प्रत्येक पौद्गलिक चीजों को अनित्य कहा है। यह शरीर भी पौद्गलिक है। सड़ना, गलना, बनना, बिगड़ना उसका स्वभाव है। इस कारण से अकुलाने की जरूरत नहीं है, क्योंकि हर चीज अपने-अपने स्वभावानुसार बदलती रहती है। अनित्य-नाशवंत शरीर से नित्य, सुन्दर और हितकर धर्म करने में ही बुद्धिमत्ता है। यह औदारिक शरीर श्रेष्ठ और उदार धर्माराधना के लिए मिला है। दुनिया की एक भी चीज भरोसेमंद नहीं है, जिसका हम भरोसा कर सकें। कौन सी चीज कब धोखा दे दे कुछ कहा नहीं जा सकता। भरोसेमंद चीजों में प्रथम नंबर शरीर का है। वर्षों तक जिसको सम्हालकर सुरक्षित रखा गया शरीर कब रोगग्रसित होकर गिर जाय, कहा नहीं जा सकता है। शीशे के ग्लास की तरह नाजुक इस शरीर के भरोसे पे रहने से अच्छा है समय रहते जब तक शरीर है उतने समय तक धर्म ध्यान किया जाय। यह शरीर पाँच तत्त्वों का मिश्रण है। पंच महाभूतों से बना है यह शरीर। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश से निर्मित हुआ है। यह शरीर पाँच तत्त्व आकर मिले तब ही बन पाया है। सामान्यतया पानी, पृथ्वी, वायु, आकाश, अग्नि ये सब भिन्न-भिन्न नजर आतें हैं। इसे जरा गहराई से समझें। स्त्रियाँ इसे जल्दि समझ पायेंगी। जब वे घर में रोटियाँ बनाती हैं तो क्या केवल सूखे आटे से रोटियाँ बन जाएँगी? आटे को पानी से गीला करना पड़ेगा, चकले पर बेलना होगा, गर्म तवे पर सेंकना होगा, तब जाकर रोटी बन पाएगी। यह शरीर भी कुछ ऐसा ही हैं। मिट्टी, पानी, हवा, अग्नि और आकाश के मेल का परिणाम ही तो शरीर है। शरीर माटी से आया है और माटी में चला जाएगा। मनुष्य की यह मूढ़ता है कि वह इस सत्य को जानते हुये भी देहासक्त बना रहता है। संसार का स्वभाव है सततपरिवर्तन, बदलते रहने का। संसारका अर्थ ही है निरंतर सरकना, एक अवस्था से दूसरी अवस्था में एक पर्याय से दूसरे पर्याय में बदलते रहने का। कोई चीज एक रूप में नहीं रहती। शरीर भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संसार का एक भाग हैं शरीर भी परिवर्तित होता रहता है। जिस दिन हवा स्थिर रहेगी उस दिन शरीर की अवस्था भी स्थिर रहेगी। अतः जब तक शरीर ठीक हो, वहाँ तक धर्म साधना कर ही लेनी और जब शरीर खराब हो, तब समता-समाधि में रहना। यह शरीर गंदगी का घर है। देह में है क्या? मल, मूत्र जैसी अनके चीजें भरी है इसमें। यह शरीर अशुचि से भरा हुआ है। शरीर के नौ द्वारों से अशुचि का प्रवाह बह रहा है। लहसून को कस्तुरी के बीच भी रखा जाय तो भी वह सुगंधीत नहीं बन सकता, बस इसी प्रकार इस तन को सुंदर दिखाने के लिए कितने ही श्रृंगार किये जाय फिर भी यह देह अपनी अशुचि के स्वभाव का त्याग करने वाला नहीं है। बड़े नगरों/शहरों में अन्डर ग्राउन्ड गटर देखने को मिलते है। पाईप -लाईन के द्वारा सड़क के नीचे भयंकर गंदगी बहती है। जब, कहीं पाईप लाईन फुट जाती हैं, और उसकी गंदगी बाहर आती हैं, तब उसकी भयंकर गंदगी को सहन करना कठीन हो जाता है। सच, मानव देह की स्थिति भी उस गंदे नाले की भाँति है। मानव तन की चमड़ी, चाहे जितनी आकर्षक हो, परंतु उसके भीतर तो गंदगी ही बह रही है। गट्टर का ढ़क्कन खुलते ही जैसे बदबू आने लगती है, उसी तरह मानव देह की चमड़ी दूर होते ही उस देह में से गंदगी बाहर आती है।

जैनों की तीर्थंकर श्रृंखला में एक कड़ी हुई है मल्लिनाथ। वह एक राजकुमारी थी। भोग के परिवेश में जन्मी, पली, किन्तु निर्भोग और वीतभोग की लहरें उसके दिलों-दिमाग में लहरायीं थी। मल्लिकुमारी सुन्दर तो थी ही, उसके सौन्दर्य पर कई राजकुमार मोहित हो गए। छह राजकुमार तो मल्लिकुमारी से शादी करने के लिए राज्य सीमा में आ गए। हर राजा यह सोचकर अपने दल-बल सहित आया कि यदि प्रेम से मल्लिकुमारी मिल गई तो ठीक है, अन्यथा जबरन हथियाकर लाऊँगा। मल्लिकुमारी और उसके पिता के सामने बहुत बड़ी समस्या पैदा हो गई। उसके पिता के पास जितनी सैन्य ताकत थी। उससे दुगुनी चौगुनी ताकत शादी करने आए एक-एक राजा के पास थी। मल्लिकुमारी बुद्धिमती और दूरदर्शी थी। उसे पहले से ही हर स्थिति का भान हो गया था। अपने रूप पर मोहित बने हुए राजकुमारों को प्रतिबोध

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देने के लिए मल्लिकुमारी ने अपनी एक प्रतिकृति / प्रतिमा का निर्माण करवाया था। और रोजाना उसमें दो चार कौर भोजन ड़ाल दिया करती थी। उस प्रतिकृति में वह कई दिनों से भोजन ड़ाल रही थी। प्रतिकृति में कई दिनों से पड़ा–पड़ा भोजन भयंकर बदबू मारने लग गया। मल्लिकुमारी के पिता बड़े चिंतित थे। शादी करने की इच्छा से आए छह राजाओं के झमेले से बचने के लिए मल्लिकुमारी ने अपने पिता से कहा– पिताजी! आप छह के छह राजकुमारों के पास यह सन्देश भिजवा दिजिए कि मल्लिकुमारी शादी से पहले आप को देखना चाहती है, मिलना चाहती है। यह सन्देशा एक–एक राजा के पास अलग–अलग भिजवाया जाए। उन छहों राजकुमारों को अलग–अलग रास्तों से राजकुमारी के कक्ष में लाया गया। कक्ष में वह प्रतिकृति रखी हुई थी। उन राजाओं ने इसे हकीकत समझा और कहने लगे। वाह! क्या रूप है, क्या सौन्दर्य है। बहुत खूबसूरत। इससे तो मैं ही शादी करूंगा। हालांकि राजकक्ष में स्वयं राजकुमारी नहीं है, उसकी प्रतिकृती है। तभी हठात् उस कक्ष में राजकुमारी स्वयं आयी। राजकुमार उसे देखकर घबरा गये। यह कैसी माया, एक सरीखे दो रूप। मल्लिकुमारी ने कक्ष में प्रवेश करते ही उस प्रतिमा के उपर से ढ़क्कन हटाया। उन राजकुमारों को बड़ी शर्म आयी कि जिसे हम राजकुमारी समझते थे, वह वास्तव में उसकी प्रतिकृति थी। मूर्ति का ढ़क्कन खुलने से उसमें से भयंकर दुर्गन्ध आने लगी। सारा कमरा भयंकर दुर्गन्ध से भर गया। वे सभी राजकुमार अपनी नाक भौं सिकौड़ने लगे। तभी राजकुमारी ने कहा, आप नाक क्यों बंद कर रहे हो? सभी राजकुमारों ने एक ही स्वर में कहा यह भयंकर दुर्गन्ध सही नहीं जा रही हैं। मल्लिकुमारी ने कहा आप कितने सम्मोहित है। जिसे आपने मल्लि समझा, वह मूर्ति थी और जिस पर आप लुभाए, उससे उपजी दुगर्न्ध से आप अपनी नाक पर रूमाल रखने लगे। मल्लिकुमारी ने कहा जैसी यह मूर्ति है, वैसी ही मैं भी हूँ। इस शरीर में यही खाद्य पदार्थ समाता है। मेरे शरीर के अंदर भी यही गदंगी–दुर्गन्ध रही हुई है। यह शरीर संसार का सबसे अपवित्र चोला है। जिस देह के प्रति तुम राग कर रहे हो, उस शरीर के भीतर रही गंदगी का भी विचार करो, तुम्हारे हृदय में रहा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राग भाव नष्ट हो जाएगा। इसके सम्पर्क में आने वाली हर वस्तु तुच्छ हो जाती है। इस माटी की देह में इतना आकर्षण! इतना राग! मल्लिकुमारी के शब्दों ने उन राजकुमारों पर जादुई असर किया, क्योंकि उनके शब्द राजकुमारों के हृदय को छेदने वाले तीखे तीरों जैसे थे। तत्क्षण उनका राग भाव दूर हो गया। उनकी आत्मा जागृत हुई। लौट गए वे सभी काम विजयी भावनाओं के साथ। उनके पैर फिर अपने राज्यों की तरफ नहीं बढ़े, वरन् जंगल की ओर बढ़े, आत्मस्वरूप का परिचय पाने के लिए। मल्लिकुमारी भी दीक्षा ले लेती है। उसे केवल ज्ञान प्राप्त होता है और ये राजा भी उन्हीं के शिष्य बनते है। मानव देह अशुचि का भंड़ार ही है। गंदगी का ढेर है। जिस स्त्री देह के प्रति मन में तीव्र आकर्षण होता है, उस स्त्री देह के भीतर रहे तत्त्वों को यदि बाहर प्रगट किया जाय तो तुरंत ही भौं सिकोड़ने के शिवाय दूसरा काम नहीं करेंगे। देह राग को तोड़ने के लिए देह की अशुचि का चिंतन सर्वोत्तम है। ज्यों-ज्यों देह की अशुचिता का विचार करते जाते हैं, त्यों-त्यों देह के प्रति रहा राग - भाव कम होता जाता है। अशुचिभाव का चिंतन हमारे वैराग्य भाव को पुष्ट करता है। दुनिया में कई तरह के कारखाने होते हैं, उन कारखानों में बहुत ही आकर्षक और सुंदर वस्तुएँ बनती है। परंतु यदि उन सभी आकर्षक वस्तुओं के कच्चे माल को देखा जाय तो वह दिखने में बिभत्स-कुत्सित व खराब ही होता है। कारखाने में रही मशीनों में तैयार हुआ कपडा कितना आकर्षक लगता हैं, परन्तु उन कपड़ों का मूल तो सामान्य कपास ही होता है। मशीन में तैयार हुआ कागज बड़ा ही सुंदर दिखता है, परंतु उसका मूल पदार्थ घास-पत्ते इत्यादि देखे जाए तो उस पर कोई आकर्षण नहीं होता है। मशीन में तैयार हुई घड़ी बड़ी मोहक लगती है, परंतु उसी घड़ी का मूल पदार्थ लोहा अगर देखा जाय तो उस पर कोई आकर्षण नहीं होता है। इससे सिद्ध होता है कि दुनिया के सभी कारखानें कच्चे माल को पक्के माल में बदलते हैं जबकि हमारा शरीर एक ऐसा कारखाना है जो पक्के माल को कच्चे माल में बदलता है। अच्छे पदार्थ को बुरे पदार्थ में बदलता है। इस शरीर में कुछ भी डालें, अच्छी से अच्छी मिठाई या पकवान ड़ालें फिर भी उसे बिगाड़े बिना और दुर्गन्ध युक्त बनाये बिना नहीं

For Private And Personal Use Only

रहता है। गुलाब जामून, रसगुल्ले, रसमलाई या बादाम का सीरा खाए, तब भी यह शरीर तो उसे विष्टा में ही बदलता है। बढ़िया से बढ़िया सरबत, ज्युस पिया हो फिर भी वह कुछ घडियों में मुत्र में ही बदल जाता है। इस शरीर के संपर्क में आने वाले वस्त्र भी कुछ महिनों में चिंथड़े बन जाते है। शरीर के संपर्क में आने वाला इत्र और सेन्ट भी कुछ देर बाद बिगड़ जाता है। यूं हमारे संपर्क में आने वाली सभी चीजों को शरीर बिगाड़ता ही है, फिर भी हमें अपने शरीर के उपर सब से अधिक राग है। सबसे अधिक राग शरीर पर होता है। इसीलिए उपाध्यायजी महाराज ने धनादि नहीं कहकर के शरीरादि की आशक्ति कम करने की प्रेरणा दी है। राग का केन्द्रस्थान शरीर है। शरीर है तो धन है, धन है तो मकान है, शरीर के लिए ही सब है। मकान–दुकान, धन परिवार शरीर आदि के उपर मनुष्य को अत्यधिक आशक्ति होती है। आशक्ति होना स्वाभाविक है, क्योंकि सांसारिक जीवन के मूल स्त्रोत वहाँ से जूडे है। जीवन व्यवहार चलाने के लिए धन चाहिए। धन प्राप्त करने के लिए दुकान चाहिए। रहने के लिए मकान चाहिए। सहानुभूति और मानसिक आश्वासन के लिए परिवार चाहिए। यह सब किस के लिए चाहिए? शरीर के लिए ही चाहिए। मतलब धनादि से भी शरीर का राग प्रबल होता है। अभी अपना सारा जीवन शरीर पर ही केन्द्रित बना हैं। हम जानते भी है और बोलते भी है कि जो शरीर है वह मैं नहीं हूँ फिर भी शरीर की रागदृष्टि टलती नहीं है। इस बात से यह सिद्ध होता है कि शरीर का राग तोड़ना कितना कठीन है। **''देहे रोग भयम्''** शरीर के साथ रोग का भय जुड़ा हुआ है। यह शरीर पाँच करोड़ अडसठ लाख नव्वाणु हजार पान सौ चोरासी (5,68,99,584) रोगों से घिरा हुआ है। नरक में ये सारे रोग एक साथ उदय में आते है। इन रोगों को हमने असंख्य काल तक सहन किये हैं। सनत्कुमार चक्रवर्ती ने सोलह–सोलह वर्ष तक सात सौ रोगों को मित्र भाव से सहा था। ऐसे भी गंदा बिगड़ा हुआ, विकृत शरीर रोगादि से नाश होने ही वाला है, तय ही है तो फिर इस शरीर से रोगादि के कारणभूत अशातावेदनीय कर्मनाश होता हो तो गलत क्या है? इस अशुचिमय शरीर का यही सार्थक उपयोग है। शरीर में रोग आते हैं और आयेंगे उसके सामने कोई

For Private And Personal Use Only

उपाय नहीं हैं परन्तु रोग में भी समाधि रखना अपने हाथ में है।

एक रोग में रखी समाधि के कारण मात्र उस रोग का ही नहीं अनेक–अनेक कर्म रोगों का निकाल हो जाता है। यह फायदे का धंधा हैं। शरीर रोगग्रस्त रहे यह चिंतास्पद नही है परन्तु आत्मा रोगग्रस्त रहे यह चिंतास्पद है। यह शरीर कितना नाशवान है? दो रोटी ज्यादा खा ली जाय तो गैस हो जाता है और दो रोटी कम खाई जाये तो चक्कर आने लगते है। गर्मी से बी.पी. डाउन हो जाती है और ठंड़ लगे तो शरदी बढ़ जाती है। गुड़ खाने से गरमी करता है और शक्कर खाने से कफ का शिकार होना पड़ता है। नींद न आये तो बेचैनी लगती है और ज्यादा नींद ले तो आलसी बन जाते है। शरीर को सजाना सहलाना चलता रहता है, ठंडी में सालमपाक, मेथीपाक, गरमियों में आमरस, सुबह में मोर्निंगवॉक और शाम को इवनिंगवॉक, टहल, रोगनाशक दवाइयाँ और शक्तिवर्धक दवाइयाँ, साबून और क्रीम, टूथपेस्ट और पॉउडर, गेहने और कपड़े, तेल और मालिस, यह सब क्या है? हम शरीर के पीछे कितने पागल है इस बात का संकेत है। मल–मूत्र का संग्रह स्थान और पवित्र पदार्थों को भी अपवित्र करने के स्वभाव वाला यह शरीर इसकी एक ही श्रेष्ठता है कि यह शिवसुख प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन है। आकाश में पहुँचने के लिए हवाई जहाज और हेलिकॉप्टर है। समंदर की सफर के लिए स्टीमर और सबमरीन है। जमीन की यात्रा के लिए बुलेट ट्रेइन, मेट्रो ट्रेइन और मोटर गाडी है। पर्वतारोहण करने के लिए रोप–वे और डोली है परंतु मोक्ष तक पहुँचने के लिए मानवदेह के शिवा दूसरा कोई साधन नहीं है। इसीलिए शास्त्रकारों ने भी इस शरीर की प्रशंसा की है। जिस जमीन पर संगेमरमर बिछा हो वह जमीन शायद रहने के लिए बैठने के लिये काम लग सकती है, परंतु खेतीबाड़ी के लिए बीज बोने योग्य नहीं गिनी जाती। जो जमीन दग्ध अर्थात् जली हुई हो उस जमीन में भी बीज नहीं बोये जाते, जो जमीन उखर होती है उसमें भी बीजों का वपन नहीं हो सकता। उसी जमीन में बीज बोये जाते है, वह उसके लिए योग्य है जो, फलद्रुम हो, नर्म हो, समतल हो, झाड़झंखाड से रहित हो। देवगति संगेमरमर बिछे जमीन जैसी है। वहाँ सुख अपार है, सुख की सामग्रियाँ असीम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है, वहाँ जन्म की पीड़ा नहीं है रोग की पीड़ा नहीं है, खाने पीने की व्यापार धंधे की चिंता नहीं हैं, वृद्धत्व का ड़र नहीं है। इतनी अनुकूलताएँ होते हुए भी वहाँ दान नहीं, शील का पालन नहीं, तप की बात नहीं, न सामायिक न प्रतिक्रमण की क्रियाएँ। नरक गति जली हुई जमीन के समान है। वहाँ दुःख ही दुःख, दुःख देने की सामग्रियाँ, भयंकर ठंड और गरमी, जमीन शूलयुक्त तलवार, भाला, बरछा, छुरी सब अंदर से निंकलते है, परमाधामी की जालिम पीड़ाएँ, वहाँ पैदा होने वाले जीवों में परस्पर वैर, जन्म भी पीडा कारक और जीवन भी पीडा कारक, पलपल मरने की इच्छा, ऐसे वातावरण में धर्म की बात ही कहाँ? तिर्यंच गति ऊखड़ भूमि के समान है। पराधीनता का हिसाब नहीं है, विवेक का नामोनिशान नहीं है, घाँस–पानी सामने ही हो, भूख तृषा भी हो फिर भी खा पी नहीं सकते, क्योंकि बंधे हुए होते है। पेट दुःखता हो फिर भी हल में जूतना पड़ता है, बैलगाडी को खींचना पड़ता है, फिर अंत में कसाई की छुरी गरदन पर चलती है, कितनी परधीनताएँ है। पशु में गुण विकाश की संभवना कहाँ? धर्माराधना से विशुद्ध पुण्य बंध करने की उनके पास क्षमता कहाँ? मनुष्यगति फलद्रुम जमीन जैसी है। इसगति में विवेक भी है, आराधना करने की शक्ति भी है, यहाँ संपत्तिदान भी है, ज्ञानदान भी है, सुपात्रदान भी है, बह्मचर्य की संभावना भी है, तप और उग्रतप कर पाने की शक्ति भी है, धर्मध्यान और शुक्लध्यान भी सुलभ है। प्रचंड़ पुण्योपार्जन और कर्मनिर्जरा भी यहाँ है। यह नश्वर शरीर अनश्वर पद की प्राप्ति कराता है। यह शरीर मोक्ष का साधन है इसका मतलब यह नहीं कि उसको सम्हाल कर ही रखा जाय। शरीर धर्म करने का साधन है इसका यह मतलब नहीं है कि, इसे जरा भी तकलिफ न दें। कोयला रसोई का प्रथम साधन है तो क्या उसे सम्हालकर ही रखना? नहीं रसोई बनानी हो तो उसे चूल्हे में डालना पड़ता है। शरीर भी कोयले के स्थान पर है। आत्म शुद्धि करनी हो तो सबसे पहले उसे ही साधना की भट्टी में ड़ालना पड़ेगा। तो शरीर की आशक्ति को दूर करने के लिए शरीर की अशुचिता का चिंतन करें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

20

भक्तिर्भगवति धार्या

"भगवान में भक्ति धारण करनी चाहिए"

जैसे नदी के प्रवाह में बहती हुई चीज समुद्र तक पहुँच जाती है वैसे भक्त भी भगवान की भक्ति में बहते–बहते भगवान स्वरूप बन जाता है। मछली के लिए पानी का जितना महत्त्व है, भक्त के लिए भक्ति का उतना ही महत्त्व है। मछली को अगर पानी से बाहर निकाल दें तो वह तड़प–तड़प कर मर जाएगी, उसके लिए पानी ही जीवन है। क्योंकि उसका जनम–मरण पानी में ही होता है। यदि मछली को दुध के तालाब में डाल दो और कहो कि यह दूध है, पानी से भी ज्यादा ताकत इसमें होती है, पानी से भी अधिक कीमति होता है। बड़ा पौष्टिक होता है। अरे! पानी में क्या धरा है, उसमें क्या मजा! पानी में कितना आनंद है वह तो मछली ही जान सकती हैं वैसे भक्ति का आनंद भक्त ही जान सकते हैं। संध्या के समय जब गाय घास खाकर वापिस लौटती है, तब बछड़ा उत्सूकता से राह देखता है और ज्यों ही माँ को देखता है त्यों ही चारो पैरों से उछल पड़ता है, परन्तु वह खीले से बंधा हुआ है, ज्यों ही वह खिले से छूटता है, सीधा माँ के पास जाता है और दुग्धपान का आनंद लेता है। दुग्धपान का आंनद क्या है? (गोवालिया) गोपाल नहीं बता सकता, वह तो बछडा ही जान सकता है। वैसे भक्ति का आनंद भक्त ही जान सकता है, शब्दों में वर्णन नहीं हो सकता।

व्यायाम शरीर में रही हुई खराबी को दूर करके तन को तन्दुरस्त करता है। वैसे परमात्मा की भक्ति भी आत्मा में स्थित बुराइयों को दूर करती है। शरीर को सही खुराक नहीं मिलेगी तो शरीर कमजोर व दुर्बल हो जायेगा वैसे आत्मा को भी प्रभु भक्ति रूप पुष्ट खुराक नहीं मिलेगी तो आत्मा की स्थिति भी वैसी ही होगी।

घर में सौ (100) वॉल्ट का बल्ब लगा हो, बिजली घर में बिजली का उत्पादन भी होता हो पर यदि बिजली घर के साथ घर में लगे बल्ब का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कनेक्शन न हो तो प्रकाश देगा? नहीं, परमात्मा पॉवर हाउस तुल्य है। आत्मा को प्रकाशित करने के लिए परमात्मा से भक्ति का कनेक्शन जोड़ना अनिवार्य है, अगर तार जोड़ दिया जायेगा तो आत्मा शीघ्र प्रकाशित हो जाएगी। प्रभु–भक्ति उपसर्गों को हरने वाली, विघ्नों को हटाने वाली और चित्त की प्रसन्नता लाने वाली है, आगम शास्त्रों में सिर्फ लिखने के लिए ही नहीं लिखा है, इस वास्तविकता का हम खुद भी अनुभव कर सकते हैं। भक्ति से क्या नहीं होता यह एक सवाल है। भक्ति से भक्त खुद भगवान बन जाता है। भक्ति के द्वारा तीर्थंकर पद भी मिलता है तो ओर चीजों की तो क्या बात करें। कृष्ण और श्रेणिक महाराजा जिन्होंने प्रभु से प्रेम करते हुए क्षायिक सम्यक्त्व और तीर्थंकर नामकर्म प्राप्त कर लिया। सुलसा श्राविकाने भी प्रभु भक्ति से भविष्य में तीर्थंकर बनने का अधिकार उपलब्ध कर लिया। देवपाल भी प्रभुभक्ति से ही तीर्थंकर बनने का सौभाग्य प्राप्त करेगा। रावण ने भी प्रभु भक्ति से ही तीर्थंकर पद पाने का अवसर प्राप्त किया। नागकेतु ने प्रभु की पुष्प पुजा से केवल ज्ञान पाया। कुमारपाल राजा ने अठारह पुष्पों की पूजा से अठारह देश पाये थे।

एक महिला ने सुनार से नथनी बनाने के लिए कहा। सुनार ने एक सुन्दर सी नथनी बना दी। नथनी बहुत ही अद्भूत थी। वह महिला नथनी को पाकर नाच उठी, बहुत खुश हुई, कारण कि उसकी मनोकामना पूरी हो गई थी। उसे अभिलषित वस्तु मिल गई थी। उसने उचित पारिश्रमिक देकर सुनार का सम्मान किया। अब वह महिला हमेशा उस सुनार का गुणगान गाने लगी। एक दिन वह सुनार का गुणगान कर रही थी। एक संत ने सुना और पूछा–"किसका गुणगान कर रही हो"? वह बोलीं– यह देखो न! जिसने यह सुन्दर नथनी बनाई है, उसी सुनार का गुणगान कर रही हूँ। संत ने कहा– अरी पगली! जिसने तुझे नाक दी उसका तो तू गुणगान नहीं कर रही और नथनी बनाने वाले का गुणगान कर रही है। अरी! बावली! तू उसका गुणगान कर जिसने तुझे नाक दी है। भाग्यशालियों! यही हालत आपकी और हमारी है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्य चौबीसों घंटे शरीर परिवार की सेवा सुश्रुसा में लगा है। दिन रात संसार में रचापचा रहता है। अरे! जिसने तुझे सब कुछ दिया उसे तो धन्यवाद दे, उसके लिए तो कृतज्ञता प्रगट कर कल्याण मंदिर स्त्रोत्र में सिद्धसेन दिवाकरसुरिजी ने यही बात कही है। प्रभु मैने आपकी देशना बहुत बार सुनी है। मैने आपकी पूजा बहुत बार की है। मैंने अनेक बार आपके दर्शन किये हैं। परन्तु हे दयालु। मैंने भक्ति भावपूर्वक आपको कभी भी मेरे अंतस्तल में प्रतिष्ठित नहीं किया इसी कारण से मैं दुःखी रहा हूँ, इसी कारण से मेरे अनुष्ठान भी फलदायी नहीं बनते।

सारमेतन्मया लब्धं श्रुताब्धेरवगाहनात्।
भक्तिर्भागवती बीजं परमानन्द सम्पदाम्॥

श्री यशोविजयजी उपाध्यायजी महाराज ने ग्रंथ में लिखा है कि भगवान की भक्ति समस्त आगमों का सार है, निचोड़ है। श्रुत सागर को पढ़कर, मंथन करके मैंने उसमें से अमृत पाया है कि प्रभु भक्ति से परमानंद की प्राप्ति होती है। अतः यह बात दिल में जमा लिजिये कि परमात्मा से अपार प्रीति, श्रद्धा/आस्था, बहुमान, सेवा भक्ति और आज्ञापालन से ही हमारा आत्मकल्याण होगा, आत्मा पर लगी हुई मलिनता साफ होगी और मोक्ष के निराबाध सुख की सहजता में प्राप्ति होगी। पूज्य आचार्य श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने भक्ति मार्ग के यात्रियों के लिए चार सोपान (योग) बताये हैं। (1) प्रीती योगः परमात्मा को चाहना । (2) भक्ति योगः वफादार बनकर परमात्मा (प्रभु) को सदैव समर्पित रहना। (3) वचन योगः परमात्मा की आज्ञा को शिरसावंद्य करना। (4) असंग योगः परमात्मा के साथ एकमेक हो जाना।

(1) यह प्रेम की निशानी है कि आदमी जिसे चाहता है उसे समर्पित हो जाता है। जिसे समर्पित होता है, उसी की बात मानता है। जिनकी बातों को वह मानता है उन्हीं के साथ वह एकमेक हो सकता है और उन्हीं का वफादार बनकर रहता है। दुनियावी प्रेम का यही क्रम है। यही क्रम प्रभु के प्रेम में हैं। अपना जो दुनियावी प्रेम है उसे परमात्मा की तरफ मोड़ने की जरूरत है। इन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चारों में सबसे महत्त्वपूर्ण प्रीति है क्योंकि प्रभु–प्रीति नींव है भक्ति आदि उस पर खड़ी हुई इमारत है। प्रीति दूध के समान है। यदि प्रीति नहीं होगी तो घी कहाँ से मिलेगा? वैसे प्रीति नहीं होगी तो परमात्मा के साथ एकता कैसी होगी? भक्ति मार्ग की पहली सीढ़ी प्रभु को चाहना...... प्रभु से प्रेम जगाना। बाकि सबकुछ अपने आप हो जाएगा। परिवार के लिए आपको प्रेम है और परमात्मा से प्रेम नहीं? सारी दुनिया से आपको प्रेम है और परमात्मा से ही प्रेम नहीं? जब तक सबसे प्रेम रहेगा तब तक परमात्मा से प्रेम नहीं हो सकता। दुनिया को चाहते है इसलिए परमात्मा को नहीं चाह सकते।

प्रीति अनंती पर थकी, जे तोड़े हो ते जोड़े एह, जो संसार के प्रेम को वस्तुओं के प्रेम को तोड़ सकता है वही प्रभु के साथ प्रेम कर सकता है। परमात्मा से प्रीति यह साधना का पहला कदम है। श्री देवचन्द्रजी महाराज ने चौबीसी प्रथम स्तवन में परमात्म प्रेम की बात कही है–

ऋषभ जिणंद शुं प्रीतडी, किम कीजे हो कहो चतुर विचार।
प्रभुजी जई अलगा वस्या, तिहांकणे नवि हो कोई वचन उच्चार।।

मुझे परमात्मा से प्रेम करना है, परन्तु होगा कैसे? मेरे परमात्मा तो सात राज लोक दूर बसे हैं। उनके साथ किसी तरह की बातचीत हो नहीं रही है। फिर किस प्रकार उनसे प्रेम करें? श्री आनंदघनजी महाराज ने भी चौबीसी के प्रथम स्तवन में कहा है।

ऋषभजिनेश्वर प्रीतम माहरो रे, ओर न चाहुं रे कंत।
रीझयो साहिब संग न परिहरे रे, भांगे सादि अनंत।।

प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव मेरे प्रियतम है। अन्य किसी प्रियतम को मैं चाहता नहीं हूँ क्योंकि प्रसन्न हुऐ मेरे ये प्रियतम कभी मुझे छोड़ते नहीं है या फिर उनका वियोग भी नहीं होता। अनंतकाल तक सदैव प्रभु साथ ही साथ जबकि दुनियावी प्रियतम छोड़ देते हैं, मृत्यु होने से भी वियोग होता है। ऐसे क्षण भंगुर प्रेम के लिए जिन्दगी क्यों बरबाद की जाय? पूज्य यशोविजयजी ने

For Private And Personal Use Only

चौबीसी के प्रारम्भिक स्तवन में कहा है।

जग जीवन जग वाल हो, मरूदेवानो नंद लाल रे।

मुख दीठे सुख उपजे, दरिशन अति ही आनंद लाल रे।।

जगत के जीवन, जगत के प्रियतम मेरे प्रियतम है, जो मरूदेवी के लाल है। मुझे उनकी सुरत देखने से सुख मिलता है, और दर्शन से अपार आनंद मिलता है। देवचन्द्रजी पूज्य आनंदधनजी और पूज्य यशोविजयजी हमें स्तवन के द्वारा यही कह रहे हैं कि– परमात्मा को चाहो, दिल से चाहो, अंतःकरण से चाहो। प्रगति तभी होगी जब परमात्मा को चाहेंगे। प्रभु को चाहे बिना कोई भी अनुष्ठान तार नहीं पायेगा। आदमी के पास हृदय भी है तो वह बिना प्रेम के भी नहीं रह सकता और बगैर श्रद्धा के भी नहीं रह सकता, उसमें प्रेम भी है और श्रद्धा भी हैं परन्तु दिक्कत यह है कि उस के प्रेम पात्र और श्रद्धा के विषय भी बदलते रहते हैं। कभी माँ बाप पर कभी किसी पर तो कभी किसी पर। भक्तियोग वफादारी पूर्वक प्रभु को समर्पित रहना।

एक आदमी को कार्य सिद्ध करना था। उसे एक अनुभवी ने सलाह दी। उस अनुभवी ने गणेशजी की आराधना करने को कहा। वह आदमी गणेशजी की पूर्ति ले आया और पूजने लगा। फिर दुबारा कोइ और कार्य आ गया। दुसरे अनुभवी ने सलाह दी कि शिवजी की आराधना करो। वह आदमी शिवजी की पूजा करने लगा। फिर तीसरी बार एक कार्य आ गया, तो तीसरे अनुभवी ने सलाह दी कि हनुमानजी की आराधना करो। तो वह हनुमानजी को तेल सिन्दूर चढ़ाने लगा। यूं अलग–अलग कार्य के लिए अलग–अलग देवी देवताओं को रीझाने लगा। उसके घर में सभी देवों की लाईन लग गई, उसने योग्य और यथास्थान पर उन्हें स्थापित कर दिया। देखकर ऐसा लगता है मानो देवी देवताओं की परिचर्चा (मिटिंग) हो रही हो, एक बार भयंकर संकट आ गया। वह बचाने के लिए गणेशजी को आजिजी करने लगा। गणेशजी ने शिवजी के पास जाने को कहा। शिवजी के पास गया तो शिवजी ने हनुमानजी के पास जाने को कहा। हनुमानजी के पास गया तो हनुमानजी ने काली के

For Private And Personal Use Only

पास जाने को कहा। काली के पास गया तो काली ने दुर्गा के पास जाने को कहा। यूं एक के बाद एक स्थापित देव देवियों के पास भेजने लगे। तब सबसे अंत में आये देव के पास गया। तब उस देव ने गुस्से में कहा, दूसरों को तुने पहले याद किया और वहाँ से काम नहीं हुआ तब अन्त में मेरे पास आया। मैं तुझे नहीं बचाऊंगा। तब उस आदमी ने सभी देव देवियों से कहा– मैंने अपने घर में आप सभी को बिठाया है। फिर भी कोई बचाता नहीं है किन्तु फुटबॉल की तरह इधर से उधर धकेल रहे हो। यह ठीक नहीं हैं। तब उन सभी देवी देवताओं ने कहा– हम क्या करें। तेरा ही ठीकाना कहां हैं? तुने अपनी श्रद्धा को एक देव से दूसरे पर फेंका, वैसे हम भी तुझे यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ फेंक रहें हैं। (3) वचनयोग परमात्मा की आज्ञा को शिरसावंध करना। धर्म की व्याख्या करते हुए ज्ञानी पुरूष कहते हैं कि जिनेश्वर की आज्ञा का पालन ही परम धर्म है। **जिनाज्ञा परमोधर्मः** ।

जगत में जो धर्म की उपस्थिति है, वह जिनेश्वर परमात्मा की आज्ञा पालन से है। प्रभु की आज्ञा का पालन ही परम धर्म है। जिनाज्ञा का पालक तीर्थंकर पद पाने में समर्थ है। जिनाज्ञा का विराधक नरक निगोद के भयंकर दु:खों को प्राप्त करता है। संसार भ्रमण का मूल जिनाज्ञा की विराधना है, तथा संसार से पार उतरने का मूल जिनाज्ञा पालन है। धर्म की व्याख्या जानने के बाद उसके विपरीत अधर्म को भी जानना आवश्यक है। रोग की दवाई जानने के बाद पथ्य के सेवन व अपथ्य के त्याग का भी मार्गदर्शन आवश्यक है। कर्म अपने को लगा भयंकर रोग है। जिनेश्वर परमात्मा उस रोग निवारण हेतू धर्म बताते हैं, साथ में अपथ्य के त्याग रूप अधर्म को भी समझाते हैं। अधर्म क्या है? स्वेच्छाचार ही अधर्म है। स्वयं को जो ठीक लगे, खुद को जो पसन्द है, परहित की चिंता नहीं है। इच्छा के अधीन कर्मबन्ध होता है। स्वेच्छा में खुद का भी अहित है, तथा जिनेश्वर की इच्छा में खुद का हित है। क्योंकि जिनेश्वर की आज्ञा सर्व के लिए हितकारी है, उसमें किसी को भी पीड़ा देने का विचार नहीं

For Private And Personal Use Only

है। एक बार ढ़ब्बू को एक ऐसे मिजाजी मालिक के वहाँ नौकरी करने के दिन आ गये। मिजाजी शेठ की बात–बात में डाँटने की आदत थी। एक दिन ढ़ब्बू को धमकाते हुए शेठ ने कहा– सुनो ढ़ब्बू! इस घर में मेरी इजाजत के बिना एक तिनका भी आगे–पीछे नहीं हो सकेगा। अतः कुछ भी काम करने से पहले मेरी इजाजत लेनी जरूरी है। जो हुकम मालिक बोलकर ढ़ब्बू माथा हिलाता हुआ रसोई घर में गया और तुरन्त बाहर आ गया। क्या हुआ? शेठ ने ढ़ब्बू को तुरंत बाहर आया देखकर आदतन धमकाया। ढ़ब्बू बोला शेठजी। रसोई घर में बिल्ली दुध पी रही है, अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं उसे मार भगाउं। आज्ञाकारी ढ़ब्बू ने सिर धूनाते हुए नम्रस्वर में शेठ से कहा। उपर वाले मालिक की आज्ञाओं का अर्थघटन करते समय अपने को भी कोमनसेन्स को रखना चाहिए।

(4) असंग योगः परमात्मा के साथ एकमेक हो जाना। माँ खाना बना रही है, उसका छोटा बच्चा कमरे में घूम रहा है, खेल रहा है, वह खाना बनाती है लेकिन स्मण बच्चे की तरफ लगा रहता है, कि कहीं कमरे के बाहर तो नहीं निकल गया, वह नाम भी नहीं लेती रहती कि.......... नाम नहीं लेती रहती, लेकिन स्मरण की धार बहती रहती है। एक अंतर्बन्धन संबंध बना रहता है लेकिन काम में लगी भी है, भीतर स्मण है, बच्चा कहीं गया तो नहीं सामान तो अपने उपर नहीं गिरा लेगा। हाथ पैर तो नहीं तौड़ लेगा। ऐसा भाव बना रहता है, भक्त के हृदय में यही भाव बना रहता है, बैठो, उठो, चलो, सोओ, जागो उसका भान न भूले अहर्निश स्मरण की धारा बहती है। एकमेक हो गए, हरदम उन्हीं में खोकर रहना, काम कुछ भी भीतर उसी का स्मरण उसे भूल नहीं पाये। चमार रैदास और तुलसीदासजी परम मित्र थे। दोनों प्रभु भक्त। दोनों प्रभु के पक्के मित्र। एक दिन तुलसीदासजी रैदास के वहाँ गये। रैदास चमड़ा रंग रहे थें चमड़ा रंगते–रंगते ही उन्होंने तुलसीदासजी को गले लगा लिया। तुलसीदासजी ने उस दिन नया खेस और नई धोती पहनी थी। रैदासजी के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रंगवाले हाथों से इनके कपड़े बिगड़ गये। रैदासजी को तो कुछ पता नहीं, परन्तु तुलसीदासजी को पता था कि खेस बिगड़ गया है और धोती भी रंगवाली हो गई है, इससे वे नाराज हो गये। घर पर आये। वे धोती और खेस धोने लगे, अपितु दाग मिटा नहीं। तुलसीदासजी कंटाल गये। उन्होंने एक नौकर से कहा– जरा इन कपड़ों को धो दो..... दाग निकल जाये वैसा करना......। नौकर था अबुध–निरक्षर उसने कपड़े लिये और धोने लगा। किसी भी तरह से दाग जा नहीं रहा था। इस कारण से नौकर ने दाग पर अपनी जीभ घिसी–दाग को चूस लिया परन्तु दाग गया नहीं। पर एक चमत्कार हुआ। वह निरक्षर नौकर ज्ञानी बन गया। और ब्रह्मज्ञान प्राप्त हुआ। तुलसीदासजी ने यह चमत्कार देखा। अब तुलसीदासजी को रैदास के भक्ति रंग का महत्त्व समझ में आया। रैदास का भक्ति रंग कैसा था? वह रंग अनोखा था, उनके वहाँ गये। परन्तु रैदासजी में वैसा आनंद नहीं था, उल्लास नहीं था वे भेटे जरूर परन्तु दिल में आनंद–उमंग नहीं था। और उसी दिन से तुलसीदासजी ने वर्णभेद का त्याग किया, जाति भेद छोड़ा......... चमार क्या......... और ढेड़ क्या........... जो हरि को भजता है वह हरि का होता हैं।

नरसिंह महेता भी ऐसे ही भक्त थे, उच्चकुल और नागर ज्ञाति के थे, परन्तु वे भजन करने के लिए ढेड़वाड़ भी जाते–जहाँ बुलाये वहाँ जाते, फिर बुलाने वाला किसी भी ज्ञाति का क्यों न हो......... रैदासजी ने कहा– तेरे दर्शन ही मेरा जीवन है, तेरे दर्शन के बगैर मैं कैसे जीऊंगा?

''दरिसन तोरा जीवन मोरा।
बिन दरसन क्युं जीये चकोरा''।।

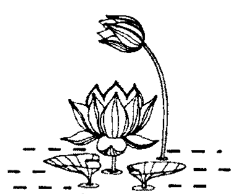

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

21

सेव्यो देशः सदा विविक्तश्च

"सदा एकान्त स्थान का सेवन करना"

उपाध्याजी महाराज कह रहे है कि एकान्त स्थानं मे रहना, अकेले में रहना परन्तु अकेले में रहना बडा ही कठीन है। अगर आपको कमरे में अकेला छोड़ दिया जाय, कहा जाय कि तीस दिन अकेले रहना है, कहेंगे अकेला नहीं रह सकता, अगर आदमी न मिले तो आदमी कुत्ता पाल लेता है, बिल्ली पाल लेता है। बम्बई चौपाटी में एक स्त्री किसी कारण से अकेली रहती है किन्तु उसने अनेक बिल्लियाँ पाल रखी है। कहने को वह अकेली है लेकिन कई बिल्लियों के साथ रहती है, इतना ही नहीं वह स्त्री बिल्लियों के रहने खाने पीने की व्यवस्था तो करती है किन्तु उनकी गन्दगी भी साफ करती है। कुत्ते और बिल्ली के साथ रह सकता है अकेला नहीं रह सकता, रेड़ियो खोल लेगा। जिस गीत को हजार बार सुन चूका है उसे फिर सुनेगा, जिस अखबार को पच्चीस बार पढ़ चूका है फिर उठा लेगा पढ़ना शुरू करेगा अकेला नहीं रह सकता। आदमी रिटायर होता है तो परेशान होता है, नौकरी छुटती है तो मुश्किल होती है, बड़ी उम्र में भी अकेला होना नहीं चाहता।

औरंगजेब ने अपने बाप को बंद करवा दिया था, आखिरी वक्त में कारागृह में बंद करवा दिया था औरंगजेब के बाप ने एक चिट्ठी भेजी कहा कि एक काम करो, यहाँ अकेले रहना बहुत मुश्किल है। इतनी कृपा करो कि तीस बच्चे भेज दो जिनको मैं पढ़ाता रहूँ। औरंगजेब ने आत्मकथा में लिखवाया है। मेरे बाप को फुर्सत से रहना जरा भी पसन्द नहीं है, तीस बच्चे बुला लिए, उनको पढ़ाना शुरू किया। उनके बीच अकड़ वापस पा ली जो एक बादशाह की होती है। तीस के बीच फिर वह बादशाह हो गया। डांट रहा है। ठीक कर रहा है। सुधार रहा है। समझा रहा है। पढ़ा रहा है। फिर से चारों तरफ चिंताएँ खड़ी कर ली। लेकिन वह अकेला नहीं रह सकता, आराम नहीं कर सकता। सुबह से हम उठते हैं दुनिया शुरू होती है। जो काम शुरू होता है, वह हमें भीड़

For Private And Personal Use Only

में ले जाता है। दिन भर की मेहनत के बाद समय मिलता है, हम अखबार पढ़ते हैं, टी.वी. देखते हैं। उस कारण एकान्त संभव नहीं हो पाता। वक्त मिलता है, मित्रों से मिलते है, नाटक, सिनेमा, हॉटल या क्लब वहाँ भी अकेले नहीं होते। थकते हैं तो सो जाते है। सुबह फिर वही दुनिया शुरू होती है। ख्याल रहे जो श्रेष्ठतम् चीजों का निर्माण हुआ वह एक एकान्त में हुआ है। भीड़ में नहीं, भीड़ ने अब तक महान् कार्य नहीं किये, जो भी महान कार्य हुए जिन्होंन किये वे एकान्त में हुए हैं भीड़ ने दुष्कर्म किये है, मारपीट की है, हत्याएँ की है, युद्ध किये है, बुरे काम किये है, खून किये है, आग लगाई है। योगी और भोगी दोनों को एकान्त चाहिए, परन्तु योगी एकान्त पाकर कर्मक्षय करता है जबकि भोगी कर्मबंधन करता है। योगी के वास्ते एकान्त अच्छा और महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि ज्ञानियों ने कहा है योगी के लिए लोकसंपर्क खतरनाक है। जो नाम चाहता है, सत्तापाना चाहता है उसके लिए तो लोकसंपर्क जरूरी है, लोक संपर्क के बिना वह वैसा नहीं कर पाएगा, परन्तु आत्मसत्ता पाने की इच्छा रखने वालों को तो लोक संपर्क/ भीड़ से हट कर रहना चाहिए। योगी और सामान्य इंसान/मनुष्य में, भारी अंतर है कि मैं लोगों से दूर रहूँ, लोग मुझसे दूर रहे तो अच्छा है, मेरे पास न आये तो अच्छा। क्योंकि मुझे इनसे क्या मतलब! मेरा रास्ता अलग और इनका रास्ता अलग, मुझे कुछ और पाना है और इनकी चाह कुछ और है, मुझे जो पाना है उसके लिए मुझे मुझमें ही खोना पड़ेगा लोगों में नहीं अतः जितना अकेले में रहूँ उतना ही अच्छा। और सामान्य इनसान चाहता है कि जितने अधिक लोग मेरे पास आये उतना ही अच्छा। फिर भी बड़े आश्चर्य कि बात है कि जो चाहता है लोग उसके पास नहीं जाते और नहीं चाहने वाले योगी के पास लोगों की भीड़ जमा होती है। हमारे बड़े गुरूजी बहुत बार कहा करते हैं कि लोकसंपर्क में लिप्त मत होओ, दूरी बनाकर रखो, लोकसंपर्क में जाने से तुम अपनी आराधना और अपनी मस्ती खो बैठोगे जो निजमस्ती का आनंद है उसमें मस्त रहो अपनी आराधना ज्ञान, ध्यान और स्वाध्याय में समय का पूरा-पूरा योगदान दो। जिस मकसद से तुमने संयम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिया है सतत् उसका खयाल रखो। दो संत थे। लोगों से कोसों दूर रहने वाले थे। एकान्त में रहकर साधना करने वाले थे। धीरे–धीरे लोगों को पता चला तो लोगों के झूंड के झूंड उनके पास आने लगे। ये चमत्कार को नमस्कार है। लोग सोचते है कि ये दोनों अच्छे साधक है अगर इनके आशीर्वाद मिल गये तो अपना काम हो जाएगा। ये दुनिया बिना स्वार्थ के कुछ नहीं करती, कहीं नहीं जाती, जब कुछ लगे कि यहाँ अपना काम बनेगा तो आधीरात भी पहुँचेगी। तो उन दोनों के पास भीड़ जमा होने लगी। लोगों की इतनी भीड़ से वे तो दुःखी–दुःखी हो गये। इस भीड़ को रोकना कैसे? दुकान में ग्राहक न आये तो लोग बोर हो जाते हैं, परन्तु योगी के वहाँ लोग आ जाये तो वे कंटालते हैं। खेल के मैदान में खिलाड़ी खेलते हैं किन्तु अगर दर्शक ही न आये तो उनको भी खेलने का मूड़ नहीं आता। परन्तु यहाँ कोई आये तो उनका मूड़ खराब होता है, वे तो माला गिनते है कि ये लोग कब यहाँ से ऊठे और जायें। योगियों के व्यक्तित्व में ही ऐसा आकर्षण होता है कि वे किसी को बुलाते नहीं है कि तुम आओ, फिर भी बिन बुलाये लोग खिंचे चले आते हैं फिर उनके मधुर व्यवहार और गुणाकर्षण के कारण बार–बार आने को मन करता है। दोनों योगियों ने लोगों की भीड़ को रोकने का एक उपाय सोचा, कि कभी ऐसा करेंगे।

एक बार कई लोगों की भीड़ जमा हुई थी तब दोनों जोर–जोर से झगड़ा करने लगे, गालियाँ बकने लगे, मारा–मारी करने लगे। उन दोनों योगियों का व्यवहार देखकर लोग सोच रहे है कि......... अपने से भी बड़ा संसार इनका है। ये लोग भी अपनी तरह ही लड़ रहे है, फिर इनमें और अपने में फर्क ही क्या हम तो फिर भी अच्छे। क्योंकि हम तो जमीन–जायदाद, माल–मिलकत, दुकान–मकान, सोना–चाँदी के लिए लड़ते हैं, जबकि ये लोग चींथड़े के लिए लड़ रहे हैं।

ये तो एक नंबर के ढोंगी है, हमें तो शान्ति का उपदेश देते हैं। धत् अब दुबारा यहाँ कभी नहीं आयेंगे। दो–पाँच दिनों में यह बात चारों तरफ फैल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गई। लोगों का आना बंद हो गया। साधना के लिए भरपुर समय मिलने लगा। उन्हे आराम हो गया और मजा आ गया। उन दोनों को किसी ने पूछा था आप अकेले–अकेले क्यों रहते हो? और इतनी छोटी सी जगह में क्यों रहते हो? तब उन्होंने कहा था। दूसरा आयेगा तो रति, अरति अर्थात् खुशी नाखुशी होगी। अगर कोई प्रिय आ गया तो खुशी होगी, आनंद होगा और अप्रिय आ गया तो अप्रीति होगी। इतनी छोटी जगह में क्यों रहते हो? उत्तर में कहा था दूसरा कोई आ न सके इसलिए, दूसरे की आवश्यकता क्या हैं? प्रभु और मैं, बात खत्म हो गई। आज मनुष्य की मनोवृत्ति में कितना बदलाव आ गया हैं? उसकी वृत्ति–प्रवृत्तियों में कितना परिवर्तन आ गया हैं? आज मनुष्य का जीव प्रभुमुखी के बजाय लोकमुखी बन गया हैं **''प्रभाते प्रभुदर्शनम्''** प्रभात में उठते ही सर्वप्रथम प्रभु के दर्शन करें। जबकि आज वह सूत्र बदल गया है। आज तो **टी. वी. दर्शनम्** हो गया है। तो क्या दूसरे को मिलना भी नहीं? बात भी नहीं करनी? दूर–दूर ही रहना? तो क्या लोकोपकार करना ही नहीं? नहीं, यह बात नहीं है। यहाँ सिर्फ साधना काल की बात है। साधना काल के दौरान भगवान महावीर भी लोगों से दूर रहे थे, परन्तु केवलज्ञान होते ही लोगों के बीच में चले आये थे। लोकोपकार ज्ञानी ही नहीं करेंगे तो कौन करेगा? मर्यादा पुरूषोत्तम राम का नाम सारी दुनिया जानती है। उन जैसा चरित्र, उन जैसा आदर्श, दुनिया के इतिहास में मिलना मुश्किल है। राम को मर्यादा पुरूषोत्तम का दर्जा क्यों दिया? वजह क्या है? राम वन गये तो बन गये। जीवन को आदर्श रूप बनाना हो तो वन जाना जरूरी होता है। भगवान महावीर, गौतम बुद्ध, श्री कृष्ण और वैष्णव परंपरा के महान संत सुखदेव के बारे में कहा जाता है, सुना है, पढ़ा है कि उन्होंने बचपन में ही जंगल की राह पकड़ ली थी। ये सारे महापुरूष अपने को पाने के लिए, अपने को तपाने के लिए अपनी खोज में, वन में गये थे एकान्त में गये थे। वन में जीवन सजता है, वन में जीवन संवरता है वन में जीवन बनता है, जो दिव्यतम् पुरूष हुए हैं, दुनिया जिनके चरणों में शिश झुकाती है, जिनके नामस्मरण के साथ अपने दिन की शुरूआत करती है वो

For Private And Personal Use Only

तमाम महानतम पुरूष वन गये, अकेले रहे थे और पूज्य बने थे। पूर्व में जो रचनाएं हुई, जो कृतियाँ बनी, जो कुछ भी अच्छा निर्मित हुआ उसका कारण एकान्त था। एकान्त मिला तो निर्माण हुआ। जो लोग खुद को उस कार्य में खपाते हैं उन्हीं को सिद्धि मिलती हैं। एकान्त में जीतना एकाग्रता पूर्वक कार्य होता है और जितना अच्छा मनचाहा होता हैं उतना सब के बीच रहकर नहीं हो पाता।

लोक संपर्क से हानि पहुँचने की अपरिपक्व हालत में ज्यादा संभावना रहती है। इसीलिए लोगों से दूर रहना ही हितावह है। जब पक्का विश्वास हो जाय लोक सम्पर्क लोगों की भीड़ से मेरा कुछ भी बिगड़ेगा नहीं तभी लोकसंपर्क करना योग्य माना गया है। इसी कारण से दशपूर्वी को जिनकल्प स्वीकारने के लिए निषेध किया है। क्योंकि जंगल में रहकर वे अकेले साधना करेंगे। उससे उन्हें अकेले को लाभ होगा, परन्तु लोगों के बीच रहकर अधिक परोपकार कर पायेंगे तो लाभ भी अधिक होगा, सम्राट के जीवन की दोपहरी बीत गई थी। जीवन उतार पर था। शक्ति दिनोंदिन कम होती जाती थी। उसके प्राण संकट में थे, मृत्यु अपने संदेश भेजने लगी थी। मनुष्य जो बोता है वही फसल उसे काटनी पड़ती है। विष के बीज बोते समय नहीं फसल काटते समय ही कष्ट देते हैं। जो लोग बीज में उस दुःख को देख लेते है, वे बोते ही नहीं। वह सम्राट भी अपनी बोई फसलों के बीच ही में खड़ा था। उनसे बचने के लिए आत्मघात तक का विचार करता था, लेकिन सम्राट होने का मोह और भविष्य में चक्रवर्ति होने की आशा, जीवन तो खो सकता था लेकिन सम्राट होना छोड़ना उसकी शक्ति के बाहर था, वह इच्छा ही तो उसका जीवन थी। एक दिन वह अपीन चिंताओं से पीछा छुड़ाने के लिए पर्वतों की हरियाली की ओर चल पड़ा। चिता से भाग सकते हैं लेकिन चिंता से कभी नहीं क्योंकि चिता बाहर और चिंता भीतर है, वह सदा साथ ही है। आप जहाँ है वहाँ है। स्वयं को परिवर्तित किये बिना छुटकारा नहीं है।

वह घोड़े पर भागा जा रहा था। अचानक बांसुरी के मधुर स्वर उसने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुने–स्वरों में ऐसा कुछ था कि वह संगीत की दिशा में अपने घोड़े को ले चला। एक पहाड़ी झरने के पास वृक्षों की छाया तले एक फकीर बांसुरी बजाकर नाच रहा था। सम्राट ने उससे कहा तू तो ऐसा आनंदित है जैसे तुझे साम्राज्य मिल गया हो। वह फकीर बोला– दुआकर कि परमात्मा मुझे साम्राज्य न दे, क्योंकि मैं सम्राट हूँ साम्राज्य मिलने से कोई सम्राट नही रह जाता है। सम्राट हैरान हुआ उससे पूछा– जरा बता तो तेरे पास क्या है? जिससे तू सम्राट है। वह बोला संपत्ति से नहीं स्वतंत्रता से व्यक्ति सम्राट होता है। मेरे पास कुछ नहीं है। शिवाय स्वयं के। मेरे पास मैं हूँ। इससे बड़ी कोई संपदा नहीं हैं। मैं सोच नहीं पाता हूँ कि मेरे पास क्या नहीं है जो सम्राट के पास है। सौंदर्य को देखने के लिए मेरे पास आँखे है। प्रेम करने के लिए मेरे पास हृदय है। प्रार्थना में प्रवेश की क्षमता है। सूरज जितनी रोशनी मुझे देता है उससे ज्यादा सम्राट को नहीं। और चांद जितनी चाँदनी मुझ पर बरसाता है उससे ज्यादा सम्राट पर नहीं। फूल जितने सम्राट के लिए खिलते हैं उतने ही मेरे लिए भी खिलते हैं। सम्राट तन भर खाता और पहनता हैं। मैं भी वही करता हूँ। फिर सम्राट के पास क्या है जो मेरे पास नहीं है? शायद साम्राज्य की चिंताएँ। उनसे भगवान बचाएँ बहुत कुछ मेरे पास जरूर है जो सम्राट के पास नहीं है। मेरा अकेलापन मेरी स्वतंन्त्रता मेरी आत्मा। मेरा आनन्द। मैं जो एकान्त में हूँ बडा आनंदित हूँ। इसीलिए सम्राट हूँ। सुनकर सम्राट बोला तू ठीक कहता है। जाओ अपने गाँव में सारी दुनिया से कह दो कि सम्राट भी यही कह रहा है। जंगल में रहने वाला फकीर भी यही कह रहा है। जंगल में रहने वाले फकीर में ये खुमारी यूं ही नहीं आई, सोना जब तपता है तब निखरता है वैसे व्यक्ति एकान्त में रहता है तो उसमें अनेक प्रकार की शक्तियाँ पैदा होती है। परन्तु कभी–कभी एकान्त भी किसी के लिए पतन का कारण बन जाता है। व्यासजी के जैमीनी नामक शिष्य थे। उसने बहुत ज्ञान प्राप्त किया है। एक बार एक ग्रन्थ बनाकर व्यासजी ने जैमीनी को पढ़ने के लिए दिया। जैमीनी के ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम जोरदार था। औत्पातिक बुद्धि है। व्यासजी ने

For Private And Personal Use Only

किताब (ग्रन्थ) में एक जगह लिखा था कि सभी के लिए एकान्त बुरी में बुरी चीज है। जैमीनी ने यह वाक्य पढ़ा तो सोचने लगा कि गुरूजी की यह बात ठीक नहीं है। गुरू की बात को उत्थापने के लिए तत्पर हुआ। गुरू को कहता है कि एकान्त बुरी चीज नहीं है इसलिए यह बात निकाल दो। गुरू ने कहा जब तक मोहनीय कर्म जायेगा नहीं वहाँ तक यह बात सभी को लागु होती है। दशवैकालिक सूत्र के आठवें अध्याय की त्रेपनवीं (53) गाथा में कहा है कि-

हत्थपाय पडिछिन्नं, कण्णनास विगप्पियं।
अविवाससयं नारिं, बंभयारि विवज्जए।।

जिस स्त्री के हाथ पाँव कटे हुए हो, कान नाक तूटी हुई हो तो ऐसी स्त्री के साथ भी ब्रह्मचारी को एकान्त में रहने का शास्त्रकारों ने निषेध किया है। अन्य जगह पर कहा हैं- ***"चित्तभित न निज्जाए"*** जैसे सूर्य के सामने दृष्टि जाने से तुरंत ही वापस खींच लेते है वैसे ही विकारी चल चित्रों पर भी नजर चली जाय तो नजर को वापिस खींच लेना। यदि पतन से बचना हो तो शास्त्र की बातों का स्वीकार करना चाहिए। साधक के लिए शास्त्रों में अनेक जगह रेड़सिग्नल दिये है। गुरू वेदव्यासजी कहते हैं कि यह बात ज्ञानी-ध्यानी, त्यागी, तपस्वी सभी को लागु हो रही है। एकान्त सचमुच बुरा है। यह वाक्य निकाल नहीं सकते। जैमीनी कहते हैं कि यह बात मेरे लिए लागु नहीं होती है। गुरू ने बहुत समझाया फिर भी गुरू की बात को स्वीकारने के लिए तैयार नही हुए। गुरू को कहते हैं कि यदि मुझमें विश्वास नहीं है तो मेरी परीक्षा लिजिए लेकिन इस वाक्य को हटा दिजिये। गुरू के पास ज्ञान है, शक्ति है, रूप परीवर्तन करने की शक्ति/कला है। गुरू ने सोचा इसे अनुभव से ज्ञान होगा। बातों से नहीं समझेगा। कुछ दिन गुजरने के बाद वर्षाऋतु आई। जैमीनी अपने आश्रम में ठहरा है। झमाझम बरसात हो रही है। चारों तरफ पानी-पानी हो गया हैं, उस समय एक रूपवती जवान स्त्री जो पानी से संपूर्ण भीग चूकी है। वह जैमीनी के आश्रम से आश्रय चाहती है। हाव-भाव नखरें करती हुई, कहती है कि मुझे मेरे पति ने घर से निकाल दिया हैं अभी इस

For Private And Personal Use Only

बरसात में कहाँ जाऊँ? आप मुझे आशरा दिजिये। यूं बात करते-करते अपना रूप भी दिखा रही है। घुंघट निकाला हुआ है इस कारण से मुँह नहीं दिख रहा है। जैमीनी ने उस स्त्री को एक कमरा दिया और कहा कि यहाँ शांति से रहो। उस स्त्री ने अंदर से कमरा बंद कर दिया। वह स्त्री अंदर से मधुर गीत गा रही है। जैमीनी ने रूप देखा था। गीत सुनते-सुनते विवेक भान भूल गये। विचार बिगड़ गये। एकांत बुरा हैं। रात्रि के समय उसी स्त्री का दरवाजा खट् खटाते हैं। वह स्त्री दरवाजा नही खोल रही है। तब दरवाजे के उपर चढ़कर खिड़की से अंदर घुसते हैं और उस स्त्री को स्पर्श करते हैं। घुंघट उठाने जाते हैं वही गुरू की सफेद दाढ़ी हाथ में आई और गुरूजी का चेहरा दिखता है। वह जैमीनी तो स्तब्ध रह गया, शरमा गया गुरूजी आप? गुरूजी ने कहा हाँ, बेटा! ड़र मत एकांत बुरी चीज है, पचास-पचास कन्याओं को छोड़कर संयम की साधना साधने वाले रथनेमि गुफा में रहे हुए थे। बिजली के चमकारे के समान राजीमती के रूप को देखकर भोग की याचना कर बैठे। यह है एकांत का परिणाम। गुरू की बात को हृदय में स्थापित नहीं की और गुरू से कहा यह वाक्य मेरे लिए नहीं है, तो कैसी हालत हो गई। जैमीनी ने कहा, गुरूदेव! क्षमा किजिये, आपकी बात का स्वीकार नहीं किया परन्तु आज अनुभव हो रहा है कि एकांत खराब में खराब चीज है। अन्य के लिए एक ही बार परन्तु मेरे लिए दो बार। आपने सच कहा था। तो कभी किसी के लिए एकान्त खतरनाक बन जाता है, पतन का निमित्त बन जाता हैं।

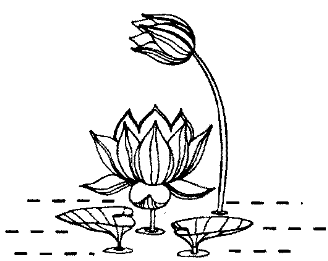

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

22

स्थातव्यं सम्यक्त्वे

"सम्यक्त्व में स्थिर रहना"

वोटर प्रुफ कपड़े पहने जाय तो व्यक्ति जल के बीच रहने पर भी भीगता नहीं है। फारय प्रुफ कपड़े पहने तो व्यक्ति आग के बीच रहने पर भी जलता नहीं है, बुलेट प्रुफ जेकेट पहना जाय तो व्यक्ति गोली लगने पर भी मरता नहीं है, बस, इसी तरह आत्मा जब निर्मल सम्यग्दर्शन के वस्त्र ओढ़ लेती है तब वह आत्मा सांसारिक सुखों में लिप्त नहीं बनती है।

समकितरत्न के प्रति रूचि जगनी चाहिए। वचन दो प्रकार के हैं। (1) तीर्थंकर परमात्मा प्ररूपित और (2) सामान्य मनुष्य द्वारा प्ररूपित। एक जिन वाणी हैं, और दूसरा जनवाणी है। तीर्थंकर परमात्मा के वचानानुसार आचरण को सम्यक्त्व कहते है। कदाचित् आचरण न भी हो सकता हो, फिर भी परमात्मा के वचनों पर श्रद्धा रखना भी सम्यक्त्व है। जिनेश्वर के वचनों से विरूद्ध और अपने मन के विचारानुसार आचरण और श्रद्धा मिथ्यात्व है। सम्यक्त्व को सम्यग्दर्शन भी कहते हैं। यह धर्म का मूल माना गया है। इसके बगैर धर्म टिक नहीं सकता। क्रोध के अनुबंध से परंपरा से ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तपादि पर विपरीत असर होता है। मर्यादितकाल के बाद समकित चला जाता है और जीव मिथ्यात्वग्रसित हो जाता है, जिस कारण से वह जिनेश्वर के मार्ग से विरूद्ध आचरण करने लगता है। उनके द्वारा दर्शित मार्ग में किसी भी प्रकार की भूल/त्रुटि नहीं है, क्योंकि वे सर्वज्ञ हैं। और उस मार्ग में पक्षपात भी नहीं है, क्योंकि वे सर्वज्ञ हैं। और मार्ग में पक्षपात भी नहीं है, क्योंकि वे वीतरागी हैं। साधना काल में जिनेश्वर के हृदय में यही भावना रहती है कि मैं सभी जीवों को शासन–रसिक बनाऊं। सब जीवों के दुःख दर्द दूर करूं, सभी जीवों को सुखी करूं, इस भावना के कारण वे हितोपदेशक भी कहलाते हैं। उनकी आज्ञा का पालन करने वाला हमेशा सुखी ही होता है। परमात्मा के वचनों पर श्रद्धा नहीं रखने वाले, अपने आपको बुद्धिमान और हुशियार

For Private And Personal Use Only

समझकर अपने ही विचारों को आचरण में लाकर सुखी होने के सपने देखते है, पर उन्हें मालुम नहीं है कि उनमें पूर्ण ज्ञान नहीं है। उन्हें मालुम नहीं है कि उनका सोचा हुआ मार्ग उन्हें भटकायेगा, दुःखी करेगा। हमारे जो भी विचार हैं, वे राग-द्वेषादि से युक्त हैं। अतः वे अधुरे है। हमारी हठता, कुमति और दुराग्रह छोड़कर जिनेश्वर के वचनों पर श्रद्धा करनी चाहिए। हम एक एक भव में भटक रहें। उसमें से छुटने का उपाय परमात्मा बताते हैं। तारक के शिवा सत्य मार्ग कोई नहीं दिखाएगा। दुनिया में स्वार्थी मतलबी और अस्थायी क्षणिक सुख देने वाले मिलते हैं, परन्तु सर्वांशतः सुखशांति का मार्ग दिखाने वाले तो तीर्थंकर के अलावा कोई नहीं बतायेगा और सम्यक्त्व प्राप्त हुए बिना वह सत्य भी नहीं लगेगा। बहुतों के भक्त बनें, कइयों के अनुयायी बने, और अनेकों के मेम्बर भी बने, किन्तु शांति नहीं मिली। क्युं? क्योंकि, जिनेश्वर का अनुयायी नहीं बना। सम्यक्त्व तो रत्न हैं। जिस भव में सम्यक्त्व मिलता है उसी भव से तीर्थंकर देवों के भवों की गिनती होती है। सम्यग्दर्शन बिना नवपूर्वी भी अज्ञानी कहा जाता है।

समकित विण नवपूरवी, अज्ञानी कहेवाय।
समकित विण संसारमां, आमतेम अथड़ाय।।

समकित बिन नवपूर्वी भी यहाँ-वहाँ भटकता है। समकित बिना का जीव झूठी कल्पनाएँ करता रहता है। एक आदमी लेटा हुआ था। उसके पेट के उपर से एक चींटी गुजर गई। और वह आदमी जोर से चिल्ला उठा बचाओं...... ...बचाओं.......... मैं मर गया....... अभी ही मैं कुचला जाऊंगा......... घर के और आस-पड़ौस के लोग इकट्ठे हो गये। ये आदमी तो सलामत हैं, तो फिर चिल्लाने का- चिखने का कारण क्या? उस आदमी ने कहा मेरे पेट के उपर से चींटी गुजर गई। तो फिर इतने से ही कुचल जाने की बात क्यों की? वह आदमी कहता है, पेट के उपर से चींटी चली गई, कल चींटा जायेगा। फिर गाय भैंस जाएंगी यूं मेरा पेट तो नेशनल हाइवे बन जाएगा, उसके बाद तो ट्रक आयेंगे और जायेंगे। तुम ही बताओं अगर ट्रक जायेंगे और आयेंगे तो मैं मर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं जाऊंगा? तीन प्रकार से आदमी दुःखी होता है। (1) दुःख आयेगा ऐसी कल्पना करके, (2) दुःख आये तब रो–रो कर पूरा करने से, (3) दुःख जाने के बाद उसे याद करके। अगर एक बार सम्यत्व प्राप्त हो जाये तो अंनत पुद्गल परावर्तन कालरूप जो संसार है वह नाश होगा। सिर्फ एक अंतर्महूर्त भी सम्यक्त्व स्पर्श कर जाय तो वह आत्मा अर्धपुद्गल परावर्तन काल में अवश्य ही सिद्ध गति को पायेगी। सम्यक्त्व की एक झलक काफी कुछ कर सकती है। क्योंकि एक बार सम्यक्त्व स्पर्श कर जाये तो, आत्मा का आज नही तो कल, अभी नहीं तो बाद में, इस जन्म में नहीं तो अगले जन्म में उसका उद्धार जरूर होगा। सम्यक्त्व के बाद मंजिल का फासला मालुम हो जाता है कि अब इतना ही रास्ता काटना है, कितने भव करेगी यह तो सर्वज्ञ ही बता सकते हैं, लेकिन संसार निस्तार का काल नियत हो जाता है। सम्यक्त्व संसार रूप सागर को चुल्लु भर बना सकता है। कई बार कई लोगों में चर्चा होती है कि फलां के घर में संभवतः धन गड़ा हुआ है– अमुक कोने में है। अगर आप ही के घर में धन गड़ा होगा तो आप उसे निकालने का प्रयत्न करोगे भी या नहीं? भाग्यशालियों! बिना परिश्रम के कुछ भी मिलने वाला नहीं हैं। शायद यह सोचें कि भाग्य में होगा तो यूं ही मिल जाएगा, किन्तु ऐसा नहीं होता। उसे पाने के लिए भी पुरूषार्थ करना होता है। ठीक उसी तरह अपने भीतर रहे हुए ज्ञान–दर्शन की शक्ति को प्रगटाने के लिए भी पुरूषार्थ/प्रयत्न आवश्यक है। इसके बगैर यह खजाना मिलने वाला नहीं हैं। कभी–कभी हम सोचते हैं कि यदि खजाना होता तो हमारे बाप–दादा क्यों नहीं निकाल लेते? क्या वे ना समझ थे कि उन्होंने कुछ भी प्रयास नहीं किया? उस घरवाली भौतिक संपदा की बात तो आप जानें किन्तु मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि इस प्रकार नासमझ बनकर हम निरन्तर अपनी अमूल्य निधि को खो रहे है। मिले हुए समय को व्यर्थ में ही खो रहे हैं। यह सोचना ही आत्म–वंचना है– धोखा है क्योंकि आपके बाप दादों ने उस खजाने को जाना है, पहचाना है, उसे प्राप्त करने की कोशिश की है और पा कर के अनन्त ज्ञानी, अनन्तदर्शी बनकर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्व–पर का कल्याण किया है। इतना प्राप्त कर लेने या निकाल लेने के बाद भी वह खजाना अखूट है, कभी रिक्त होने वाला नहीं है– हम भी उसे पा सकते हैं। चाहिए उसे पा लेने की उत्कंठा, तत्परता, प्रयास और पुरूषार्थ। अगर हम भी पूर्वजों के पथ का अनुसरण करें तो गरीब, दीन, हीन, रंक बने रहने की आवश्यक्ता नहीं रहेगी। उस मार्ग के अनुगामी बनने के लिए प्रथम सोपान के रूप में प्रमुख आवश्यकता है सम्यक्त्व की। कहा भी हैं–

एक समकित पाया बिना, जप-तप किरिया फोक।
ज्यों मुर्दो सिणगारवो, समझ कहै त्रिलोक।।

मुर्दे को शृंगार करना व्यक्ति का पागलपन और मूर्खता हैं। ऐसा करने से उसमें नए प्राणों का संचार नहीं हो सकता। वैसे ही सम्यक्त्व तो नहीं है किन्तु जप–तप खूब कर रहे हैं, बड़ी–बड़ी तपाराधना की जा रही है तो आगम शास्त्र कहते हैं कि वे सभी व्यर्थ हैं। सम्यक्त्व पाये बिना दृढ़ श्रद्धा हो नहीं सकती एवं श्रद्धा के अभाव में समस्त क्रियाएँ, आराधनाएँ राख पर लीपने के समान हैं। सम्यक्त्व यथार्थतः धर्म रूपी महल की नींव है। धर्म अगर नगर है तो सम्यक्त्व उस का प्रवेश द्वार है। धर्म यदि कोट है तो सम्यक्त्व उसका आधार है। पेड़ तो है किन्तु उसकी जड़े नहीं है या गहरी नहीं है तो उस पेड़ का जीवन क्षणजीवी है, अस्थायी है। हवा के साधारण झोंके से ही वह धराशायी हो जाएगा, वैसे ही हमारे तप त्याग की परम्परा लम्बी–चौड़ी है किन्तु सम्यक्त्व के अभाव में वे निस्सार हैं। दूकान की शोभा उसमें रहे माल–सामान से होती है और रत्नों की सुरक्षा मजबूत तिजोरी से होती है। ठीक उसी प्रकार से सम्यक्त्व ही हमारे समस्त धार्मिक जीवन की शोभा बढ़ाने वाला एवं करने वाला है। आप अपने घर में सोना–चाँदी मूल्यवान रत्नों एवं धन–सम्पदा की सुरक्षा के लिए तिजोरी आदि रखते हैं। उस कारण से चोरों आदि का भय कम रहता हैं, आप निश्चिन्त सोते है। उसी प्रकार से सांसारिक विषयवासनाएँ कषायादि चोर आपके चारों और धर्म खजाने को लूटने के लिए लगे हुये हैं किन्तु यदि आपने सम्यक्त्व की मजबूत तिजोरी प्राप्त कर ली है तो फिर ड़र कैसा? आप

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निड़र/निर्भीक होकर धर्माराधना करते रहो, कहीं से भी आपको ड़र नहीं होगा। क्योंकि सम्यक्त्व को प्राप्त करने के बाद आपके लिए मोक्ष में सीट रिजर्व हो गई। सामान्यतः मनुष्य जीवन मिलना भी दुर्लभ है। अगर पुण्य प्रभाव से मानव–भव मिल भी गया तो सम्यक्त्व की प्राप्ति होना और भी कठीन है। जिसने अन्तर्मुहूर्त मात्र के लिए भी सम्यक्त्व पा लिया, वह अवश्य ही मुक्त होगा एवं सम्यक्त्व पा लेने से वह परिमित संसारी हो जाता है। सम्यक्त्व एक अनमोल रत्न है। चिन्तामणी आदि रत्न तो भौतिक चीजें प्रदान करते हैं किन्तु यह सम्यक्त्व रूपी रत्न अनन्त आध्यात्मिक सुखों को प्राप्त करता है, ऐसे सुखों की प्राप्ति कराता है जिन्हें पाने के बाद और कुछ भी पाने की इच्छा नहीं रहती।

सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्व मित्रान्न परं हि मित्रम्।
सम्यक्त्वबन्धोर्न परो हि बन्धुः, सम्यक्त्वलाभान्न परो हि लाभः।।

सम्यक्त्व से बढ़कर और कोई रत्न नहीं, इससे बढ़कर और कोई मित्र नहीं। हमारा सर्वश्रेष्ठ बन्धु भी यही हैं और इस संसार में सबसे बड़ा लाभ भी यही है, क्योंकि यह दुर्गति के दरवाजे को बंद करने वाला और सम्पदा का द्वार उद्घाटित करने वाला है। मोक्ष मेरूपर्वत का शिखर है तो सम्यक्त्व उसका मूल है। इसके बिना यह जीव कितनी भी आराधना कर लें, फिर भी आराधक नहीं बन सकता। सम्यक्त्व के अभाव में जीव मिथ्यात्व दशा में रहकर चारित्र का उत्तम रीति के पालन करते हुए दिव्य, देवोपम, तेजोमय सुखों को पाने का अधिकारी बन सकता है, किन्तु उसके बाद पुनः संसार में लौटना पड़ता है। भवभ्रमण का अन्त नहीं हो पाता। इसलिए वीतराग देव कहते हैं कि यदि तू धर्म का आचरण न हीं कर सकता, तो कम से कम अपनी दृष्टि तो शुद्ध रख। तत्त्व का जो स्वरूप है, उसे उसी रूप में जानकर उस पर श्रद्धा कर ताकि चारित्र धर्म के करीब पहुँच सके। समकित से सही, शुद्ध दृष्टि का विकास होता है जिसकी आज के युग में अत्यन्त आवश्यकता है। आज का मनुष्य जो जैसा है, वैसा नहीं देखता और जैसा देखता है वैसा नहीं कहता। उसके देखने जानने और कहने में अन्तर रहता है क्योंकि उसकी दृष्टि सही नहीं है। आज जितने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी झगड़े, कलह या समस्याएँ हैं उनका मूलभूत कारण भी यथार्थ दृष्टि का अभाव है।

एक आदमी प्रतिदिन एक तालाब के किनारे घूमने जाया करता था। उस तालाब में एक मछली थी। वैसे तो कई मछलियाँ थी किन्तु एक मोटी मछली थी जो उस आदमी के प्रतिबिम्ब को पानी में देखती थी। एक दिन उसने देखा कि उस आदमी का सिर नीचे और पाँव उपर है। प्रतिबिम्ब में ऐसा ही दिखता है। दूसरे दिन भी मछली ने ऐसा ही देखा। जब तीसरे, चौथे, पाँचवे दिन और आगे भी ऐसा ही देखा तो उसने धारणा बना ली कि मनुष्य उस प्राणी का नाम होता है जिस के सिर नीचे और पाँव उपर होते हैं।

एक बार वह आदमी तालाब के किनारे पानी के निकट घूम रहा था कि मछली पानी की सतह पर उपर आ गई। उसने सिर उँचा किया तो आज नया ही दृष्य देखा और विस्मित हो गई। आज देखा तो आदमी का सिर उपर और पांव नीचे हैं। कुछ देर सोचा फिर विचार करती है कि मालुम पड़ता है यह आदमी आज शीर्षासन कर रहा है। न तो वह आदमी आज शीर्षासन कर रहा है और न सदा ही उसके पाँव ऊपर व सिर नीचे रहते है। यह तो उस मछली की अयथार्थ/मिथ्यादृष्टि का ही परिणाम है जो सीधे आदमी को भी उल्टा ही देख रही है। यह हालत केवल उस मछली की ही नहीं है। ऐसी हालत आज हम सभी की हो रही है, जो वस्तु के यथार्थ स्वरूप को नहीं जान कर मिथ्यात्वदशा के कारण, उल्टे स्वरूप को देखकर उसे ही सही मान रहे हैं। यह भ्रमणा तभी तक रहती है जब तक हम सम्यक्त्व न पा लें। समकित पा लेने पर जो वस्तु जिस रूप में हैं उसी रूप में देखती है जैसी वह है। समकित का स्वरूप समझाते हुए वीर प्रभु ने उत्तराध्ययन सूत्र के अट्ठाइसवें अध्ययन में कहा है।

तहियाणं तु भावाणं, सब्भावे उवएसणं।
भावेणं सद्द संतस्स सम्मतं तं वियाहियं।।

जीव–अजीव आदि तत्त्वों के विषय में गुरूजनों का जो उपदेश है उसे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वभाव से या अन्तःकरण से मानते हुए, उस पर विशिष्ट श्रद्धा रखते हुए मोहनीय कर्म के क्षय से जो अभिरूचि पैदा होती है, वह सम्यक्त्व है। संक्षिप्त में कहें तो ***"यथार्थ तत्त्वश्रद्धा सम्यक्त्वम्"*** तत्त्व और उनके स्वरूप पर सम्यक् श्रद्धा ही सम्यक्त्व है, यही आत्मोन्नति की प्रथम भूमिका है। मन से मैं वीतराग देव को ही ध्याऊँगा, अन्य देव को नहीं और काया से श्रीवीतराग देव को ही नमस्कार करूंगा अन्य देव को नहीं। जब ऐसा संकल्प करते है तो श्रद्धा दृढ़ क्यों नहीं होगी? क्यों फुटबॉल की गेंद बनकर इधर से उधर दूसरे से तीसरे के पास भटक रहे हो। सम्यक्त्व दृष्टि को प्रकाश से भर देता है, जीवन मार्ग को प्रकाशित कर देता है। वह अंधकार से प्रकाश में गमन करने का संकेत करता है। दृष्टि के इस प्रकाश को ही आप प्राप्त करें इसके अभाव में सारे प्रकाश अंधकार-रूप ही हैं। आपके पास दीपक का प्रकाश है, बिजली का भी प्रकाश है, सूर्य और चन्द्र का प्रकाश भी है किन्तु आंखों का प्रकाश नहीं है तो इन सारे प्रकाशों की क्या कीमत? आंखों का प्रकाश सारे प्रकाशों को ग्रहण करता हैं, उसके होने पर ही सूर्य चन्द्र के प्रकाश का मूल्य हैं। उसके अभाव में सब कुछ सूना-सूना है। निकट में पड़ी हुई चीज भी नहीं दिखाई पड़ती। ठीक उसी प्रकार गुरूओं के द्वारा दिया गया तत्त्वज्ञान का प्रकाश या शास्त्रीय वचनों से प्राप्त गुरूओं के द्वारा दिया गया तत्त्वज्ञान का प्रकाश या शास्त्रीय वचनों से प्राप्त प्रकाश आदि का मूल्य तभी है जब सम्यक्त्व की आंख खुली हो। भगवान महावीर के वचन भी हमारा उद्धार नहीं कर सकते यदि सम्यक्त्व नहीं है। सम्यक्त्व सभी प्रकाशों का प्रकाशक है। सम्यक्त्व का विरोधी शब्द है मिथ्यात्त्व। यह मिथ्यात्व हमें संसार से बांधता है जबकि सम्यक्त्व हमें उससे मुक्त करता है। अगर बन्धन से मुक्त होना है तो सम्यक्त्व का सहारा लिजिये। मृत्यु से बचाने वाला, बार-बार के जन्म-मरण से छुटकारा दिलाने वाला और कोई तत्त्व या पदार्थ नहीं है, शिवाय सम्यक्त्व के। हम अपने हृदय को टटोले एवं देखे कि वहाँ स्म्यक्त्व का वास है या नहीं? ज्ञानियों ने इस पहचान के लिए

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी कुछ तरीके बताये हैं जिनसे हम जान सकते हैं कि हम सम्यक्त्वी हैं या नही? अगर आपके दिल में शत्रु और मित्र के प्रति समभाव है, जय पराजय में भी सुख दु:ख नहीं मानते हैं, और संसार की नश्वरता जानकर आपका मन उससे विरक्त रहता है, संसार को जेल समझता है और छुटने के लिए अकुलाता है तो समझिये कि सम्यक्त्व का कुछ अंश आपने पाया है। संसार में अनेक प्रकार के आरम्भ–समारम्भ के कार्य होते हैं, जिन्हें जानकर आपका मन दु:खी होता है और संक्लेश पाते हुए जीवों को देखकर आप करूणा से द्रवित हो जाते है एवं उस वक्त आप संक्लिष्ट भावों का अनुभव नहीं करते है वरन् इर्ष्या, द्वेष आदि से रहित होकर दु:ख निवारण के लिए तत्पर बनते है तो समझिए कि सम्यक्त्व के लिए आपकी मनोभूमि उर्वरा है एवं जिन वचनों के प्रति अनुराग बढ़ने वाला है। इससे विपरीत स्थिति आपको दुर्गति में ड़ालने वाली है। धर्म के प्रति आपकी रूचि नहीं है, धार्मिक लोगों का आप उपहास करते है और भली बात भी आपको कटू लगती है। ठीक उसी प्रकार कि ज्वरग्रस्त व्यक्ति को दूध सदृश मधुर पदार्थ भी कड़वा लगता हैं, आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में रोग की चिकित्सा करने के दो तरीके हैं (1) रोगों का शोधन किया जाता हैं। (2) रोग का उपशमन किया जाता है। प्रथम तरीके में रोग का कारण जानकर उसका निदान किया जाता है ताकि पुन: वह रोग उत्पन्न ही न हो। दूसरी पद्धति में रोगों का उपशम न किया जाता हैं। समय पाकर कुछ विषमताओं के कारण वे रोग पुन: प्रगट हो सकते हैं। आपको भी मिथ्यात्व का जो रोग लगा है उसका शंसोधन किजिए। अगर केवल उपशमन ही किया तो याद रखिये ग्यारहवें गुणस्थानक से पुन: नीचे आना पड़ेगा। इस प्रकार शम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और (आस्था) आस्तिक्यता रूप पांचों लक्षणों से अपनी पहचान करिए। ***"नत्थि चरित सम्मत्तविहूण"*** सम्यक्त्व के बिना चारित्र भी नहीं है। यद्यपि मोक्ष की प्राप्ति के लिए चारित्र अनिवार्य आवश्यकता है, किन्तु सम्यक्त्व उससे भी पहले आवश्यक है।

सम्यक्त्व में दृढ़ रहना जरूरी है। समकित पा लेने पर जीव उसे पुन:

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुरक्षित नहीं रख पाता। उसे मलिन बना लेता है या उससे भ्रष्ट हो जाता है। वर्तमान युग की आधुनिकता को देखकर कभी–कभी हमें जिनेश्वर देव के वचनों में शंका होने लगती है। जो सत्य हमारी ज्ञान सीमा से परे है, उसे न मानकर केवल प्रत्यक्ष जगत् को ही हम सत्य मानने लगते हैं। ऐसा करने से हमारा सम्यक्त्व असुरक्षित हो जाता है।

शास्त्रकारों ने कहा है। *तमेव सच्चं णिसंकं, जं जिणेहिं भासियं।*

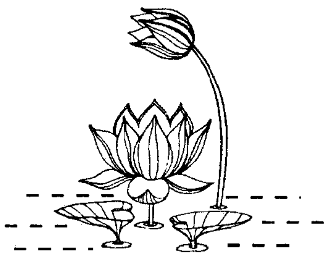

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

23

विश्वास्यो न प्रमादरिपुः

"प्रमादरूपी शत्रु का भरोसा मत करो"

प्रत्येक मनुष्य को जिन्दगी में आगे बढ़ने की इच्छा तो प्रबल होती है, परन्तु उसे प्रगति करने से अटकाने वाले अनेक दोष जिम्मेदार है। ये दोष उसकी जिन्दगी में बम्प बनकर बीच में आते हैं। उन अनेक दोषों में से एक दोष है........ विलंबवृत्ति। इस विलंबवृत्ति के कारण ही अच्छे-अच्छे भी सफलता और सिद्धि से वंचित रह जाते हैं। जहां विलंब आयेगा वहाँ आलस आये बिना नहीं रह सकती। विलंब और आलस में अच्छी पटती है। आलस आने के बाद सुस्ती घर कर जाती है। सुस्ती के आश्लेशण में एक बार जकड़ जाने के बाद मन आसानी से छुट नहीं सकता है। इससे उसकी विकास यात्रा को पेरालिसीस लग जाता है। विलंबवृत्ति धारक लोगों का प्यारों मे प्यारा शब्द है .. .. कल। ऐसे लोगों के अधिक कार्य तो कल की खींटी पर ही टंगे रहते है। काम को कल पर टालना मतलब उसे टूटे-फूटे माल सामान रखने के तलघर में धकेल दिया ऐसा कहा जा सकता है। कल मतलब अकर्मण्यता काम नहीं करने की वृत्ति। किसी ने विलंब की असुर के साथ तुलना की है। असुर यानी राक्षस। जैसे बकासुर आदमियों को निगल जाता हैं वैसे विलंबासुर अब तक कितने ही लोगों के उज्वल भविष्य को निगल गया है। विलंबासुर का साथी कालासुर। विलंबासुर आदमी को कालासुर की ओर धकेल देता है कालासुर के मुँह में कितनी ही सुंदर योजनाएँ समाप्त हो गई है। कबीर ने मजेदार बात कही है........ **"दो कल के बीच काल है, हो शके तो आज संभाल"** हमें एक काम अवश्य करना चाहिए, नहीं करने योग्य काम को विलंब में रखना चाहिए और करने योग काम को आज पर ही लेना चाहिए। जीवन में सफल बनने के लिए सतत/निरंतर काम करते रहो। आज का काम कल पर कभी मत टालो। क्योंकि कल कभी आता नहीं है। उपनिषद् का एक मजेदार वाक्य है। ***उत्तिष्ठत, जाग्रत*........**यहाँ इस वाक्य में पहले उठो और बाद में जागने को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहा हैं, पहले जागो ऐसा नहीं कहा। प्रश्न होगा कि पहले जागना कि पहले उठना? उपनिषद् के ऋषि को मालुम है....... पहले जागने को कहुँगा तो, फिर सो जाएगा, अतः पहले उठो........ पहले बिछौने से खड़ा हो जा, बिस्तर को छोड़ दें। बाद में लगभग पुनः सोने का मन नहीं होगा। तत्पश्चात् जागो। जागना अर्थात् जीना। केवल श्वासोच्छ्वास चले वह जीना नहीं है, आदमी जाग्रती में रहे उसका नाम जीना है। प्रमाद, आलस, सुस्ती, अनुत्साह ये सब पर्यायवाची शब्द है। पूज्य यशोविजयजी महाराज ने प्रमाद को शत्रु कहा है, सिर्फ उन्होंने ही नहीं प्राचीनकाल से शास्त्रकार प्रमाद को शत्रु कहते आये है: **"प्रमाद एव मनुष्याणां, शरीरस्थो महारिपुः"** शत्रु पास में बैठा हो तो किसी को भी अच्छा नहीं लगता। कभी निकट में बैठा हो तो मन में यही होगा कि कब ये यहाँ से उठे! वह चला जाय तभी शान्ति होती है। किन्तु आश्चर्य की बात है। प्रमाद अपने में पड़ा है फिर भी हम आनन्दित हैं। चाहते हैं कि अधिक देर रहे तो अच्छा है। जिसकी मौजुदगी में आनंद आये उसे शत्रु कैसे कह सकते है? यह प्रच्छन्न शत्रु है। प्रगट शत्रु फिर भी अच्छा, किन्तु ऐसा शत्रु खतरनाक है! बाहर से मीठा अन्दर से दुष्ट! प्रमाद अगर शत्रु है तो अप्रमाद, (उद्यम) मित्र है। प्रमाद अच्छा लगता है फिर भी शत्रु है और अप्रमाद अच्छा नहीं लगाता फिर भी मित्र है। कभी-कभी शब्दजाल हमें मूर्ख बना जाते है। जैसे "हम तो आराम कर रहे हैं। आलस शब्द फिर भी कानों में चुभता है, परन्तु आराम शब्द बहुत अच्छा लगता है। आलस्य हमारा शत्रु है। आलस्य के कारण ही हम कभी-कभी करने योग्य कार्य भी नहीं कर पाते हैं। आलस्य के कारण ही हम पीछे रह जाते हैं। आलस्य के कारण ही जो हासिल करना चाहते थे, जिसमें कामयाब होना चाहते थे, जिस में सफलता अर्जित करना चाहते थे, वह नहीं कर पाते हैं। जब कभी हमारे सामने कोई काम आ जाय तो बैठे न रहे, सोये न रहे, होता है, चलता हैं, न बोलें अपितु उस कार्य में अपने को लगा दो। यह शत्रु बड़ा ही चालाक है, कार्य को बाद में करने के भरोसे पे छोडने के लिए कहता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। अभी नहीं बाद में, आज नहीं कल कर लेना, जल्दि क्या है? आलसी मनुष्य की ये सब से गंदी आदत है कि बाद में करेंगे, कल करेंगे या होता है चलता है। बाप ने आलसी बेटे को समझाते हुए कहा कि बेटा! अब से मैं तेरे लिए ऐसी व्यवस्था और सुविधा कर दूंगा कि तू बटन दबायेगा और सब चीजें तेरे सामने हाजिर हो जाएगी, बटन दबायेगा तो पानी आ जायेगा। बटन दबायेगा तो कपड़े आ जाएँगे। बटन दबायेगा तो बाथरूम आ जाएगा। आलसी ढब्बू ने कहा– परन्तु बटन दबाएगा कौन? आलसी मनुष्य आध्यात्मिक क्षैत्र मे तो ठीक दुनियावी क्षेत्र में भी कुछ नहीं कर पाता है, सिर्फ जनसंख्या में ही उनकी गिनती होती है। बैठे–बैठे केवल टाइम पास करते है। हराम का खाते हैं। भोजन तीन प्रकार के हैं– (1) काम भोजन (2) प्रभु भोजन और (3) हराम भोजन। जो मेहनत करके, काम–काज करके, मेहनत–मजदूरी करके खाया जाता है। वह काम भोजन है। अपंग, अनाथ, लूला, असमर्थ, असहाय अथवा कमजोर जो खाते हैं वह राम भोजन। और शक्ति होने पर भी, काम किये बिना, धर्म प्रवृत्ति किये बिना जो बैठे–बैठे खाते हैं वह हराम भोजन है। यद्यपि वह अपने पुण्य का खाता है, इस कारण से हराम भोजन नहीं कहा जा सकता फिर भी लोग उसके आलस्य को देखकर ऐसा ही बोलेंगे। स्वभावतः मनुष्य को आलस बहुत प्रिय है, पड़े रहना उसे अच्छा लगता है। काम से जितना बचा जाय उतना बचता है। कामचोरी करता रहता है। जब कुछ काम नहीं था तब हम बेकार है हमें काम चाहिए ऐसा चिल्लाने वाला आदमी काम मिलते ही कामचोर हो जाता हैं।

ऐसा लगता है कि इन सब यंत्रों का आविष्कार मनुष्य की आलस से ही हुआ है। पैदल चलने की आलस के कारण मोटर गाड़ियों का, गिनने की आलस के कारण केलकुलेटर का, लिखने की आलस के कारण प्रेस का, ताजा खाना पकाने की आलस के कारण फ्रिज का, कपड़े धोने की आलस के कारण वोशिंग मशीन का जन्म हुआ है। यंत्रों का आविष्कार चाहे किसी भी कारण से

For Private And Personal Use Only

हुआ हो, परन्तु अभी ये सारे यंत्र आदमी की आलस का पोषण कर रहे हैं, और इन यंत्रों के कारण पूर्व की अपेक्षा वर्तमान समय में मनुष्य अधिक आलसी और पराधीन बन गया है। प्रमाद यानी आलस, लौकिक दृष्टि से आलस का अर्थ कर रहा है। लोग कहते है प्रमाद यानी प्रवृत्ति का अभाव। जैन दर्शन कहता है लगातार प्रवृत्ति में भी प्रमाद हो सकता है। प्रमाद में रहने पर आदमी आत्मा की आवाज को नहीं सुन पाता और अन्तर्मुखता विकसित नहीं कर सकता। ऐसे प्रमादी आदमी से तो भेड़ बकरियाँ अच्छी हैं, जो गड़रिये की आवाज सुनकर खाना-पीना छोड़कर उधर ही तुरन्त दौड़ पड़ती हैं, किन्तु मनुष्य इतना लापरवाह है कि वह प्रमाद के वशीभूत होकर आहार-विहार में, संसार के प्रपंचों में ही पड़ा रहता है। अपने भीतर देखने का मौका ही नहीं निकाल पाता। तथागत बुद्ध ने अपने भक्तों को उपदेश देते हुए कहा था कि "संसार की सभी चीजें बनी हैं, इसलिए बिगड़ने वाली है, नष्ट होने वाली है अतः तुम लक्ष्य की प्राप्ति में प्रमाद मत करना। क्योंकि प्रमाद आदमी की जीवित मृत्यु है। प्रभु महावीर ने भी कहा था। "**समयं गोयम मा पमायए**" हे गौतम! तुम समय मात्र का भी प्रमाद मत करो। उसे तो "**भारण्डपक्खीव चरेऽपमत्ते**" के द्वारा भारण्ड़ पक्षी के समान अप्रमत्त जीवन जीने के लिए कहा है ताकि वह सावधान चित्त होकर साधना के क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ता रह सके। प्रमादी को चारों तरफ से भय है, अप्रमादी को कहीं से भी नहीं। जीवन प्रमाद में ही पूरा न हो जाय, यदि प्रमाद में जीवन पूरा हुआ तो फिर चौरासी का चक्कर तैयार है।

"**पमायं कम्मनाहंसु अप्पमायं तहाऽवरं**" प्रमाद, कर्म का आश्रव (आगमन) है और अप्रमाद संवर (रोकना) है। प्रमाद के रहने तक व्यक्ति बाल अज्ञानी ही रहता है जबकि प्रमाद के नहीं होने से मनुष्य पंडित होता है। कर्मबंध का बहुत बड़ा कारण प्रमाद ही है। इसलिए परमात्मा महावीर ने अपने अमर सन्देश में जगाते हुए कहा हैं- "**तम्हा जागरमाणा विधुणय, पराणय कम्म**" अर्थात् सतत जागृत रहकर पूर्वार्जित कर्मों को नष्ट करो। नीतिकारों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ने प्रभाद के पाँच प्रकार कहे हैं–

मज्जं, विसय, कसाया, निद्दा, विकहाय पंचमी भणिया।
एए पंच पमाया, जीवं पाडेन्ति संसारे ॥

(1) मद, (2) विषय, (3) कषाय, (4) निद्रा और (5) विकथा ये पाँच प्रकार के प्रमाद हैं जो इस जीव को संसार में परिभ्रमण कराते हैं, इससे मुक्त नही होने देतें इनमें से एक–एक प्रमाद भयंकर है, यदि पाँचों ही एक आदमी में इकट्ठे हो जायें तो फिर उस आदमी की दुर्गति का कहना ही क्या? (1) सबसे अधिक खतरनाक है मद/अभिमान। मद से व्यक्ति इतना मतवाला बन जाता है कि खुद भगवान भी सन्मार्ग पर नहीं ला सकते। आगमों में आठ प्रकार के मद कहे गये हैं। **ज्ञानं पूजा, कुलं जाति, बलमृद्धिं, तपो वपुः''**। (1) ज्ञानमद (2) पूजामद (3) कुलमद (4) जातिमद (5) बलमद (6) ऋद्धिमद (7) तपमद और (8) रूपमद। ये आठोंमद विवेक बुद्धि की शून्यता में उत्पन्न होते हैं एवं आत्मदर्शन में बाधक बनते हैं, अतः इन सभी प्रकार के मदों से हमें बचना चाहिए, तभी अपना कल्याण संभव है। यह मद/अभिमान मनुष्य के लिए दुःखों का सबसे बड़ा कारण है।

एक बार एक संत किसी राजा के महल में भिक्षार्थ पहुँचें। राजा उन्हें देखकर गद्गद् हो गया और कहा कि संत प्रवर! मैं आज बहुत खुश हूँ अतः आप जो भी मांगे वह अपनी सर्वप्रिय वस्तु भी देने को तैयार हूँ। इस पर मुनि ने कहा– राजन्......... जो आपकी सर्वाधिक प्रिय वस्तु हो, वह आप ही सोचकर दे दिजिये। तब राजा ने राज्यकोष देना चाहा, किन्तु मुनि ने कहा– राजन्! यह तो जनता/प्रजा की वस्तु है, आप की नहीं है, अपनी ही कोई वस्तु दिजिये। तब राजा ने राजमुकुट, राजमहलादि सब कुछ देना चाहा। यहाँ तक कि अपना शरीर तक दे देना चाहा किन्तु मुनि ने कहा– राजन्! इन पर तो आपके परिवार वालों का अधिकार है। यदि आप देना ही चाहते हैं तो आपकी सर्वप्रिय वस्तु है, अपना गर्व या अहंकार, वही दे दीजिए। मुनि के ऐसा कहने पर राजा की आंखे खुल गई और वह अहंकार का दान कर बोझ मुक्त और बन्धन रहित

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुआ। हमें भी यदि निर्बन्धन होना हो तो अहंकार छोड़ना होगा। (2) विषय–सेवन, विषय वासनाओं में पड़कर कीड़े, मकोडों की तरह कुल बुलाते रहना। विषय–वासना से इस जीव की कभी तृप्ति होती नहीं है, फिर इस संसार का अन्त कैसे हो? घी की आहुति देने से आग बढ़ती है, बुझती नहीं। वैसे विषय भोगों से तृप्ति नहीं होती, अपितु अतृप्ती बढ़ती है। विषय वासनायें मनुष्य को सत्य से हटा देती है जिससे मनुष्य परभव का विस्मरण कर जाता है। ***"विषया विश्ववंचका:"*** विषय प्रारंभ में रमणीय लगते है उनका परिणाम दुःखदायी होता है इसलिए दशवैकालिक सूत्र में प्रभु फरमाते हैं। **''विसएसुमणन्नेसु पेमं नामिनिवेसए''**। मनोरंजक विषयों से प्रेम न करें, उनमें उलझें नहीं। जो इन विषयो में प्रविष्ट नहीं हुए हैं वे ही स्थितिप्रज्ञ हैं। (3) **''संसारस्स उ मूलं कम्मं, तस्स वि हुंति य कसाया''**। संसार का मूल कर्म है और कर्म का मूल कषाय है। निशीध भाष्य में यह बात कही गई है।

जं अज्जियं चरित्तं, देसूणाए वि पुव्वकोडीए।
तं पि कसाइयमेत्तो नासेइ, नरो मुहुत्तेणं।।

किसी ने देशोनकोटि पूर्व की साधना करके जो चरित्र अर्जित किया था, वह केवल अन्तर्मुहूर्त भर के कषाय से नष्ट हो जाता है क्योंकि अकषाय ही चरित्र है। अतः कषाय मुक्ति को ही वास्तविक मुक्ति माना है। (4) निद्रा, प्रमाद का चौथा प्रकार है निद्रा, जो हमेशा प्रभुस्मरण में धर्म साधना में बाधा उपस्थित करती है। ऐसा कहा जाता है कि कुंभ कर्ण जो महानिद्रालु था, राम के बाणों से आहत होकर मर गया तब उसकी पत्नी विधवा हो गई और विलाप करने लगी। उसने राम की सेवा में उपस्थित होकर दीनता प्रगट की। तब राम ने उसे दिलासा/सान्त्वना देते हुए वरदान दिया कि तुम सभाओं में उपस्थित होकर कथा पुराणादि सुनों और अपना जीवन सफल बनाओ। ऐसा मालुम होता है कि तभी से यह निद्रा देवी प्रत्येक धर्म सभा में सबसे पहले आ उपस्थित होती है और आप लोगों को आनन्दित करती है। **सुत्ता अमुणी, मुणिणो सया**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जागरंति। अमुनि सदा सोते रहते हैं एवं जो जागते रहते है वे मुनि होते हैं। इस निद्रा-पिशाचिनी को जीतकर धर्म साधना में तत्पर बनों अन्यथा विषय-कषाय रूप जेबकतरे सभी कुछ ले भागेंगे, सब कुछ लूट लेंगे, और आप हाथ मलते रह जाओगे। यह संसार सराय है, यहाँ सम्यक्त्व रूपी माल लेकर आये हो। अगर यहाँ निद्रा में पड़े रहे तो विषय-कषायादि चोर माल लूट ले जायेंगे फिर पछताना पड़ेगा। हम जैसे आपको चेता रहे है फिर भी न चेतो तो आपकी मरजी। गुरू क्या कर सकते हैं यदि आप में ही चूक हैं। चूक हमें हानि पहुँचाये उससे पहले जाग जाना ही बेहतर हैं। (5) विकथा, पाँचवा और अन्तिम प्रमाद है विकथाओं में रस लेना। विकथा के चार प्रकार हैं। (1) स्त्रीकथा, (2) देशकथा, (3) भोजनकथा और (4) राजकथा। जब इन कथाओं में आप चले जाओ तो समझना कि मैं प्रमाद मैं हूँ। जब गप्पे लगा रहे हो तब समझना कि: मैं प्रमाद में हूँ, हमारी बातों के विषय अधिकतर इन चारों में से कोई एक होता है। जब फिल्म देखो, टी.वी. देखो, सौन्दर्य स्पर्धा के समाचार सुनो, शादी विषयक बात करो तब समझना कि मैं प्रमाद में हूँ। व्यापार के सम्बन्ध में क्रिकेट और फुटबॉल के सम्बन्ध में जब चर्चा कर रहे हो तो समझना कि मैं प्रमाद में हूँ। खाने-पीने की चीजों के विषय में चर्चा करना, कौनसी आइटम कैसे बनती है उस विषय में किताब पढ़ना, होटल के विषय में पूछना, भोजन कथा है। देश विदेश के सम्बन्ध में, राजनीति के सम्बन्ध में युद्ध-लड़ाई आदि के सम्बन्ध में जब सोचते हैं तो समझना मैं प्रदाम में हूँ। ये पाँचों ही प्रमाद आत्मोन्नति में बाधक है इसलिए अपने आप को सम्हालों और पाँचों ही प्रकार के प्रमाद को छोड़ो। प्रमाद अत्यन्त खतरनाक है। प्रमाद के वशीभूत होकर चौदह पूर्वधर महर्षियों का भी पतन हो गया है, और वे नरक व निगादे में चले गए हैं। इसी प्रमाद के कारण अनेक आत्माएँ संयम जीवन से भ्रष्ट बनी है। फूल स्पीड़ में गाड़ी दौड़ाने वाला व्यक्ति थोड़े समय में ही लम्बा रास्ता तय कर लेता हैं, परन्तु कुछ क्षणों की झपकी ले लेवें, तो बैठे हुए सवारियों को घर पहुँचाने की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बजाय, परलोक पहुँचा देता है। बस, वैसे ही साधना–मार्ग में, जरा सा भी प्रमाद अच्छा नहीं है। युद्ध के वातावरण में सैनिक को हमेशा सावधान रहना पड़ता हैं, बस इसी तरह मोह के हमलों में हमें सावधान रहना चाहिए। जरा सोचियें, दौड़ में कुछ ही कदमों की सुस्ती/प्रमाद ही व्यक्ति को मेड़ल अथवा इनाम से वंचित रखता है, तो आत्म साधना के लिए ही मिले इस मानव जीवन की अमूल्य क्षणों को प्रमाद में खो देंगे तो उसका परिणाम क्या आएगा?

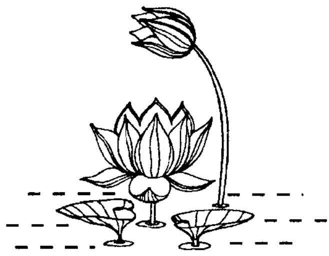

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

24

ध्येया आत्मबोधनिष्ठा

"आत्मज्ञान की निष्ठा का ध्येय रखना"

हर व्यापारी स्वयं के आय–व्यय, हिसाब–किताब का लेखा जोखा निकालता है, परन्तु यह कैसा दुर्भाग्य है कि वह खुद के कृत्यों का हिसाब–किताब नहीं निकालता है। उसके बहीखाते में कुछ गड़बड़ी हो जाएगी तो वह उसे अनेक बार देखेगा, उसके बारे में सोचेगा परन्तु आत्मा के हिसाब–किताब के प्रति इतना लापरवाह है कि एकाध बार भी अपनी आत्मा के हिसाब किताब को नहीं देखता, मगर इतना अवश्य याद रखना कि अगर धन की कमाई के हिसाब–किताब में जरा सी गलती हो गई तो चलेगा। परन्तु यदि आत्मा का हिसाब–किताब बिगड़ गया तो कितने ही भव बिगड़ जायेंगे। इसलिए मैं आपसे कह रहा हूँ कि अपनी आत्मा का भी हिसाब–किताब देखा करो, अगर आत्मा का लेखा–जोखा मिल गया, शुद्ध हो गया तो आप पावन हो जाओगे। अब तक अनंत तीर्थंकरों ने यही बात कही हैं कि आत्मा सच्चिदानंदमय है। अजर हैं, अमर हैं और अविनाशी हैं। लेकिन संसारी आत्मा की यह कैसी दयनीय स्थिति? अहो! अविनाशी अजर अमर आत्मा की यह कैसी दुर्दशा? यह प्रतिक्षण अनेक यतनाओं का भोग बन रही हैं। कभी जन्म की पीड़ा भोगती हैं, तो कभी वृद्धावस्था से जर्जरित बन जाती है। प्रश्न होता हैं सच्चिदानंदमय आत्मा की ऐसी हालत क्यों? कारण एक ही है, इस सच्चिदानंदमयी आत्मा ने पर घर को खुद का मान लिया है और उस पर घर में अपना अधिकार/स्वामित्व मान लिया है। कोई अनजान व्यक्ति किसी अपरिचित व्यक्ति के घर में घूस जाय तो उसकी क्या हालत होती हैं? और इसके साथ ही उस अज्ञात घर में अपना स्वामित्व मान ले तो? किसी अनजान घर में बिना पूछे घुसना अपराध ही है। अनजान घर में खुद का स्वामित्व मान कर बैठ जाना भयंकर अपराध है। इसी तरह से हमें इस सच्चाई को समझना है। यह देह आत्मा का घर नहीं है। आत्मा का घर तो मोक्ष ही है। इस देह में

For Private And Personal Use Only

अपना स्वामित्व मान लेना कितना बड़ा अपराध हैं? दुनिया में भी किसी अन्य की वस्तु पर अपनी मालकियत करने वाले व्यक्ति को कारागृह की सजा होती हैं। तो फिर जो शरीर अपना नहीं है, उस शरीर को अपना मान लेना, कितना बड़ा अपराध होगा? यह अपराध प्रत्येक भव में करते आये हैं और इस भूल की सजा हर भव में भोगते आए हैं। शास्त्रिय परिभाषा में इसे बहिरात्मदशा कहते हैं। देह में आत्मबुद्धि, बहिरात्म दशा का लक्षण है। यहाँ आत्मा का महत्त्व कम हो गया है, क्योंकि उसने मन, वचन, काया से सम्बन्ध जोड़ रखा है । पहला सम्बन्ध शरीर से जोड़ रखा है। शरीर मेरा है, मैं शरीर रूप हूँ। यह मानने के बाद उस ने अन्यों के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने शुरू कर दिए। धीरे–धीरे वह सम्बन्ध वचन के साथ जुड गया और आगे यह सम्बन्ध मन के साथ भी जुड़ गया। ज्ञानी कहते हैं कि जब तक आत्मा और मन का सम्बन्ध न टूटेगा आत्मा बहिरात्मा में ही जीती रहेगी, उसका सम्बन्ध संसार के साथ जुडा रहेगा, आत्मा का सम्बन्ध आत्मा के साथ नहीं जुड़ पाएगा। इसका कारण यह है कि उसकी सारी क्रियाएँ मनोनुकूल होती रहेंगी, वह स्थिति बहिरात्मपन कहलाती है। मन फिर छँटनी शुरू करेगा। कहाँ फूल और कहाँ शूल, कहाँ सुगंध और कहां दुर्गंध। जब तक मन का सम्बन्ध जुड़ा रहेगा, तब तक कानों को अच्छे शब्द सुहाएँगे, आंखों को अच्छे दृष्य अच्छे लगेंगे। जिह्वा को अच्छे स्वाद भायेंगे और शरीर को कोमल स्पर्श सुहाएगा, क्योंकि हमारा बाहर का सम्बन्ध मन से जुड़ा है। मन में ही जी रहे है। ज्ञानियों ने कहा आत्मा की तीन स्थितियाँ है। पहली है बहिरात्मा जो व्यक्ति संसार में जी रहा है, मन के परिणामों के लिए जी रहा है। अंतरात्मा वह है जो शरीर से छुट गई है, वचन से छुट गयी है तथा मन से छुटने का प्रयत्न कर रही है। वह आत्मा में प्रवेश कर रही है। मन, वचन, काया इन तीनों को समाप्त कर जो आत्मा पर अरोहण कर रहा है, दरअसल वही आत्मा के स्वरूप को जान पाया है। तीन दशाएं है (1) व्यक्ति कीचड़ में पैदा हुआ है और वहीं मर गया। (2) आदमी पैदा तो कीचड़ में हुआ है मगर कीचड़ से उपर उठ गया है जैसे कीचड़ से कमल ऊपर उठ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाता है। वह अंतरात्मा है। वह संसार में पैदा हुआ है, मगर संसार से उपर उठा हुआ है। (3) तीसरी दशा जब आदमी कीचड़ से अलग हो जाता है। उस दशा का नाम है परमात्मा। हम कौनसी दशा में जी रहे हैं, हम खुद को तोलें। पुंडरिक और कंडरिक दोनों भाई थे। दोनों को चारित्र लेने की इच्छा हुई। अंततः कंडरिक ने पुंडरिक को समझाकर प्रबल वैराग्य से दीक्षा ली। हजार वर्ष तक संयम जीवन का अद्‌भूत पालन किया। कड़े और उग्र तप करके शरीर को कृश बना दिया। शरीर रोगों का घर बन गया। पुंडरिक आग्रह करके गुरू की आज्ञा से भाई महाराज को अपने राज्य में ले आया। शरीर को व्यवस्थित/ठीकठाक करने के लिए प्रतिदिन स्निग्ध भोजन दिया जाने लगा। शरीर तो ठीक हो गया परन्तु आत्मा बिगड़ गई।

आत्मा केन्द्र बिन्दु में थी वहाँ अब शरीर केन्द्र स्थान में हो गया। उन्हें अब साधुता में नही सांसारिक सुखों में आनंद आने लगा। वर्षों तक साधु जीवन में रहे थे उसका त्याग कर दिया, अंत में मरकर उनकी आत्मा सातवीं नरक में चली गई। ऊँचे स्थान में रहने पर भी नीचे स्थान आये तो उन्हें नीचे स्थान में जाना पडा। कंडरिक मुनि को भाई पुंडरिक ने बहुत समझाया फिर भी वे नहीं माने तब, कंड़रिक को राज्य सौंपकर खुद संयम के मार्ग पर चल पड़े। सुकुमार शरीर होने से वे संयम जीवन की प्रतिकूलताओं को अधिक नहीं सह पाये, किन्तु साधना के केन्द्र स्थान में "शरीर" नहीं था परन्तु "आत्मा" थी केवल तीन ही दिन की साधना करके पुंडरिक कालधर्म प्राप्त कर अनुत्तर विमान में चले गये।

बहिरात्मदशा के कारण कंडरिक मुनि का पतन हुआ और उनकी दुर्गति हुई जबकि अंतरात्मदशा के कारण पुंडरिक मुनि का देवलोक में जाना हुआ। किसी ने एक युवक से पूछा– तुम क्या करते हो? उसने कहा– जी मैं पढ़ता हूँ। फिर पूछा– पढ़ते क्यों हो? उसने कहा– पास होने के लिए। पूछने वाले ने पूछा– पास क्यों होना चाहते हो? उसने कहा प्रमाण पत्र पाने के लिए। पूछने वाला पूछता ही जा रहा है। प्रश्नकार ने पूछा– प्रमाण पत्र क्यों चाहते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हो? युवक ने कहा– नौकरी के लिए। प्रश्नकर्ता ने फिर पूछा–नौकरी क्यों चाहते हो? युवक ने कहा पैसा कमाने के लिए। आपसे भी अगर पूछा जाय कि आपके जीवन का ध्येय क्या है? आप इतनी भाग दौड़ क्यों कर रहे हो? कोई आपसे ऐसा ही सवाल करे तो आप क्या कहोगे? आप यही कहोगे कि दौड़ धूप नहीं करेंगे तो पैसा कहाँ से आएगा? प्रश्नकर्ता ने उस युवक से फिर पूछा– पैसा क्यों चाहते हो? उसने कहा– खाने के लिए। प्रश्नकर्ता ने एक बार फिर पूछा– खाना क्यों चाहते हो? उसने कहा– जीने के लिए। आपसे भी पूछा जाय कि खाना क्यों खाते हो? तो आप भी यही जवाब दोगे कि खाएंगे नहीं तो जीएंगे कैसे? अतः जीने के लिए ही खाते हैं (कई लोग तो सिर्फ खाने के लिए ही जीते हैं) प्रश्नधारा अभी रूकी नहीं है। प्रश्नकर्ता ने पूछा– फिर जीना क्यों चाहते हो? उसने कहा– क्योंकि मैं आत्महत्या करना नहीं चाहता इसलिए जी रहा हूँ। लोग कहते है कि हममें मरने की हिम्मत नहीं है इसीलिए जी रहे हैं। लड़के को अगला प्रश्न पूछा– आत्महत्या क्यों नहीं करना चाहते हो? उसने कहा– धर्म करने के लिए। प्रश्नकार ने अगला प्रश्न पूछा– धर्म क्यों करना चाहते हो? वह लड़का उत्तर नहीं दे पाया वहीं ठहर गया। अब मैं ही आप से पूछ रहा हूँ कि आप धर्म क्यों कर रहे हो? मोक्ष के लिए ही न! और एक प्रश्न पूछ लेता हूँ– मोक्ष क्यों चाहते हो? यहाँ संसार में आपको क्या कमी है? हरा भरा संसार है, लाडी, गाड़ी और वाड़ी सब कुछ ही तो है। सवारी करने के लिए हवाई जहाज है, रेलगाड़ी है, मोटरगाड़ी है, दुपहिया गाड़ी है। रहने के लिए घर मकान है। सोने के लिए पलंग–बिस्तर है। पहनने के लिए कपड़ा–लता भी है। घूमने के लिए हिलस्टेशन, बाग–बगीचे हैं। खाने के लिए घर तो है ही इसके अलावा हॉटल भी है। सेवा करने वाले नौकर भी है। यहाँ संसार में जो है, मोक्ष में नहीं है। वहां खाने पीने के लिए मिठाईयाँ नहीं है। सरबत भी नहीं है, फिर वहां जाकर करोगे क्या? तो मेरा प्रश्न है आप मोक्ष में क्यों जाना चाहते हो? आप कहोगे जन्म, जरा मृत्यु आदि से छुटने के लिए मोक्ष चाहते हैं। किन्तु आपका यह जवाब सबके दिमाग में बैठे वैसा नहीं है। क्योंकि कइयों को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जन्मादि दुःखरूप, कष्टरूप लगते नहीं है। फिर एक बार अंतिम प्रश्न पूछ रहा हूँ। आप मोक्ष क्यों चाहते हो? जन्म जरा मृत्य से छुटकारा पाने के लिए। जन्म जरा मृत्य से छुटकारा क्यों चाहते हो? है कोई जवाब आपके पास? इसका जवाब है– हम मोक्ष में इसलिए जाना चाहते हैं कि वहां जाने से हमारी मूलभूत पाँच इच्छाएँ परिपूर्ण हो जाती है।

सभी मनुष्यों की मूलभूत पाँच इच्छाएँ है। (1) अनंत काल तक जिन्दा रहने की इच्छा, (2) दुनिया का सर्वस्व जाने लेने की इच्छा, (3) कभी जाये ही नही ऐसे सुख की इच्छा, (4) किसी के अधीन नहीं अपितु स्वतंत्र रहने की इच्छा, (5) सभी को अपने अधीन रखने की इच्छा। क्या आप को अनंत काल तक जीवित रहने की इच्छा है? क्या आपको दुनिया का सबकुछ जान लेने की इच्छा है? क्या आप को कभी न जाये ऐसा सुख पाने की इच्छा है? क्या आपको स्वतंत्र रहने की इच्छा है? क्या आपको लोगों को अपने वश में रखने की इच्छा है? तो क्या ये पाँचों ही इच्छाएँ पूरी हो सकती है? हाँ पूरी तो, हो सकती है लेकिन यहाँ संसार में पूरी नहीं हो सकती।

(1) यहाँ संसार में तो जनम–मरण के फेरे चालु ही रहते है। ज्यादा से ज्यादा तेत्तीस सागरोपम की आयु होती है, इससे अधिक नहीं। इससे ज्यादा कहीं नहीं, जन्म लेते रहो। मरते रहो। अनंतकाल तक यहाँ जीते रहने की कोई व्यवस्था नहीं है। हमें मरना अच्छा नहीं लगता, परन्तु फिर भी बार–बार मरना पड़ता है। मरना अच्छा नहीं लगता क्योंकि अमरता आत्मा का स्वाभाव हैं और अमरता मोक्ष में ही मिल सकती है। (2) सर्वस्व जाने लेने की हमारी तीव्र इच्छा है........ तभी तो पढ़ते रहते है, पूछते रहते है, सुनते रहते हैं, चर्चा गोष्ठियाँ करते रहते हैं। पर क्या केवल पढ़ने से कोई सर्वज्ञ हुआ है? सर्वज्ञ बनने के लिए वीतरागता चाहिए। वीतरागभाव आने के बाद ही केवल ज्ञान होता है। जो मोक्षगामी जीव होते है, उन्हें ही केवल ज्ञान होता, मोक्ष बिना सब–कुछ जान लेने की इच्छा कभी पूर्ण हो सके वैसा नहीं है। (3) सांसारिक सुख कभी न जाये वैसे है क्या? ज्ञानियों की दृष्टि से सांसारिक सुख को, सुख नहीं कहा

For Private And Personal Use Only

जायेगा। यह तो दुःख का ही दूसरा नाम है। सांसारिक सुख को सुख कहना यह सुख शब्द की तौहीन है। फिर भी यह कहा जाने वाला सांसारिक सुख कब तक टिकेगा? पुण्य रहेगा तो मृत्यु तक टिकेगा, किन्तु बाद में? या तो आप सुख को छोड़ जाओगे या सुख आपको छोड़ चलेगा, चाहे कुछ भी हो सुख का वियोग तय है। हमें अविनाशी सुख चाहिए, कभी न जाए वैसा सुख चाहिए। लेकिन संसार के समस्त सुख विनाशी है। मोक्ष सुख एक बार मिलने के बाद जाता नहीं है, तभी तो अविनाशी है। ऐसा सुख मोक्ष के अलावा कहीं नहीं मिल सकता हैं। (4) किसी के अधीन होकर जीने की हमारी इच्छा नहीं है। परन्तु संसार में तो पराधीनता ही पराधीनता है! विद्यार्थी को शिक्षक की, पुत्र को माँ–बाप की, नौकर को शेठ की, सेवक को राजा की, राजा को प्रजा की, सैनिक को सेनापति की, बीमार को डॉक्टर की, यूं सभी को किसी न किसी की गुलामी/पराधीनता स्वीकार नी ही पड़ती है। और कोई पराधीनता न सही परन्तु कर्म की गुलामी तो है ही। इस गुलामी से कोई भी मुक्त नहीं है। चक्रवर्ती बड़े शहंशाह भी मुक्त नहीं है, चक्रवर्ती भी आखिर कर्माधीन है। कर्मरूठे तो श्रेणिक राजा को भी बेटा कारागृह में डालता है। श्री कृष्ण को भी पानी के लिए जंगल में तड़पना पडता है। राम को भी वनवास जाना पड़ता है। आदिनाथ भगवान को भी चार सौ दिन तक भूखा रहना पड़ता है। इनसे मुक्त होने का एक ही उपाय है। मोक्ष, सभी को परेशान करने वाली कर्मसत्ता सिद्धों का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती है। (5) सब मेरे अधीन रहे ऐसी इच्छा जरूर है, परन्तु घर में बेटे भी अधीन नहीं रहते तो औरों की तो बात ही क्या करे। हाँ समस्त जगत मोक्ष में स्थित सिद्ध भगवंतो के अधीन है। इस तरह हमारी पाँचों ही इच्छाएँ मोक्ष में जाये बगैर पूरी ही नहीं हो सकती। मोक्ष में क्यों जाना चाहते हो? ऐसा कोई पूछे तो कहना कि पाँच प्रकार की इच्छाएँ मोक्ष में ही पूरी हो सकती है इसलिए मोक्ष में जाना चाहता हूँ। आत्मा सुखमय है इस कारण से सुख की इच्छा होगी ही। आत्मज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई ज्ञान नहीं। **आत्मलाभात् परो लाभो नास्तीति मुनयो विदुः** । आत्मज्ञान रूप ध्येय को नजर

For Private And Personal Use Only

के सामने ही रखकर जीया जाय तो, अपना इसी क्षण में परिवर्तन हो सकता है। तो आत्मज्ञान के ध्येय को हमेशा नजर के सामने ही रखना।

ध्येय विस्मरण नहीं होना चाहिए। मैं आप से पूछ रहा हूँ कि आपका ध्येय क्या है? आप क्या हासिल करना चाहते है? आपने सामने लक्ष्य क्या रखा है? पद, प्रतिष्ठा, पैसा, कीर्ति यही तो हमारा ध्येय है। आत्मज्ञान चाहता कौन है? तीर्थ में, मंदिर में, उपाश्रय में, प्रवचन या प्रतिक्रमण में ऊंचा होता है, पर ज्यों ही घर लौटते है हमारा ध्येय बदल जाता है। धर्मस्थलों में होते है वहाँ तक स्वभाव दशा मैं और घर संसार में आते ही विभावदशा में चले आते हैं।

एक बार पतंगों और बरसाती कीड़ों में परस्पर दोस्ती हो गई। बरसाती कीड़ों ने कहा कि भाई, पतंगों। आपकी और हमारी जाति एक ही है अतः आप हमें भी अपना लिजिये। हम आप से मेलजोल चाहते हैं। अलगाव नहीं चाहते, इसलिए हमें भी आप अपने में मिला लिजिए। तब पतंगों के सरदार ने कहा– भाई। बात तो ठीक है, किन्तु कुछ देर सब्र करो, समय पर विचार कर लें। संध्या के समय जब दीपक जलने का समय हुआ तो पतंगों ने कहा– जरा देख आओ तो, शहर में रोशनी हुई या नहीं? बरसाती कीड़े भागे–भागे गए और थोडी देर में ही लौटकर आ गए। कहा कि हम देख आए हैं कि शहर में रोशनी हो गई है। तब पतंगों के मुखिया ने कहा– बस तुम्हें देख लिया, तुम्हें हमारी जाति में नहीं मिलाया जा सकता। क्योंकि रोशनी की ओर गया हुआ पतंगा लौटकर आता ही नहीं है, वहीं एकाकार हो जाता है। जब तक आत्मभाव में विसर्जन नहीं होता है वहाँ तक मोक्ष लक्ष्य की बात ही कहाँ उठती है। आत्मप्रभु की शरण में लीन होने का मतलब है स्वयं प्रभु बन जाना। मैं आप ही से पूछता हूँ कि आप भगवान की शरण चाहते हो या भागवान (धनवान) की? यहाँ बैठे हो इसलिए शायद कह दो कि हम तो भगवान की शरण चाहते है। किन्तु भगवान या भागवान बनने का विकल्प जब आपके सामने रख दिया जाय तो आप भागवान बनना ही पसन्द करोंगे।

इन दोनों शब्दों में केवल एक मात्रा का ही फर्क है किन्तु अर्थ में बहुत

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बड़ा फर्क है। भगवान की अपेक्षा भागवान बनना ही सभी पसन्द करेंगे। हम प्राय: यही सोचा करते है कि कहीं कोई ऐसा साधन मिल जाए। जिससे जल्दी ही भागवान बन जाऊं, सभी की समृद्धि मुझे मिल जाय। किन्तु आज भगवान बनना या भगवान की शरण में जाना कोई नहीं चाहता। अगर भगवान या मोक्ष में रूचि होती तो भागवान बनने की इच्छा ही नहीं होती। अपने ध्येय को सदैव याद रखो, क्योंकि ध्येय हट जाएगा तो हमारे चलने की दिशा भी बदल जाएगी।

एक मुसाफिर रेल गाड़ी से जा रहा था। टी.सी. आया और टिकट मांगा, तो उस मुसाफिर ने टिकट निकालने के लिए अपने जेब में हाथ डाला उस जेब में टिकट नही मिला तो दूसरे और तीसरे जेब में देखा किन्तु टिकट मिला नहीं। वह ढूंढ़ने लगा टी.सी. अन्यों से टिकट देखने लगा। इधर वह मुसाफिर बड़ा परेशान हुआ, सारा सामान बैग वगेरह खोलकर टिकट ढूंढ़ने लगा। पसीना–पसीना हो गया। तब टि.सी. को यह भरोसा हुआ कि आदमी सज्जन दिख रहा है। वृद्ध भी है, कपड़े भी व्यवस्थित है, बड़ी–बड़ी मुछें और दाढी भी है। तो उसने कहा रहने दिजिये आप परेशान मत होइए टिकट की जरूरत नहीं है। मुझे विश्वास है कि आपने टिकट लिया है। तब उस वृद्ध मुसाफिर ने कहा– आपको टिकट की जरूरत नहीं है लेकिन मुझे तो जरूरत है न, तब टी.सी. ने आश्चर्य से पूछा आपको क्यों जरूरत है? तब उस बूढ़े मुसाफिर ने कहा– किस स्टेशन पर मुझे उतरना है वह तो उस टिकट में ही लिखा हुआ है। मुझे स्टेशन का नाम याद नहीं है।

तो आपसे कहता हूँ अपने ध्येय और लक्ष्य को कभी बिसारना मत, हमेशा याद रखना तभी आप अपने लक्ष्य को हासिल कर सकोंगे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(25)

सर्वत्र एव आगमः पुरस्कार्यः

"सभी जगह आगम को आगे रखना"

चक्षु के चार प्रकार है– (1) चर्म चक्षु (2) अवधि चक्षु (3) केवल चक्षु और (4) शास्त्र चक्षु।

(1) चर्म चक्षु, चउरिन्द्रिय व पंचेन्द्रिय को मिली बाहय दर्शन की शक्ति, जिसकी प्राप्ति भी अति दुष्कर है, क्योंकि एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और तेइन्द्रिय अवस्था में चक्षु होते नहीं है। तो बाहय नेत्रों द्वारा दर्शन/देखने की शक्ति भी जीव के आत्म–प्रदेशों की ही शक्ति हैं।

(2) अवधि चक्षु, पंचाचार पालन से मिली शक्ति, जिससे लोक के अनेक भागों का ज्ञान होता हैं।

(3) केवल चक्षु, जिससे त्रिलोक की समस्त वस्तुओं के समस्त पर्यायों को देखने की शक्ति प्राप्त होती है।

(4) शास्त्र चक्षु, केवली कथित साधनों को जानने का एक मात्र साधन है, शास्त्र। यह केवल ज्ञान का ही अंश हैं। केवली कथित वचनों को शास्त्र चक्षु द्वारा जान सकते है।

सीमन्धर स्वामीजी के मुख से इन्द्र ने जो निगोद का सूक्ष्मस्वरूप जाना। वही सुक्ष्म–स्वरूप भरत क्षेत्र में रहे कालिकाचार्य के मुख से जानकर इन्द्र को आश्चर्य हुआ। अरिहन्त परमात्मा के समान निगोद के सूक्ष्म–स्वरूप का वर्णन कालिकाचार्य शास्त्र चक्षु के आधार पर ही बता सके थे। सूक्ष्म निगोद के जीव चौदह राजलोक के सम्पूर्ण क्षेत्र में ठूंस–ठूंस कर भरे हुए है। देवों को अवधि ज्ञान की आंख होती है। सिद्धों को केवलज्ञान की आंख होती है। साधारण मुनष्यों को चमड़े की आंख होती है, परन्तु मुनियों को शास्त्र की आंख होती है। "**साधवः शास्त्रचक्षुषः**"। पुण्य, पाप, आत्मा, परमात्मा, इहलोक, परलोक, मोक्ष इत्यादि पदार्थों पर निर्णय कैसे करना? ये सभी अतीन्द्रिय पदार्थ है, जो चर्मचक्षु से दिखते नहीं है। अतीन्द्रिय पदार्थों का निर्णय हम जैसे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छद्मस्थ नहीं कर सकते। इसीलिए कहा साधकों के लिए शास्त्र ही आधार है। दुनिया में दृष्टिगत प्राणि–सृष्टि को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं। (1) संज्ञा प्रधान (2) प्रज्ञा प्रधान (3) आज्ञा प्रधान। वृक्ष की जड़ें पानी वाले भाग की तरफ मुडी हुई होती है, और उसी तरफ रफ्तार से आगे बढ़ती हैं। एक वनस्पति का पौधा आता है जिसका नाम है छुई मूई अगर उसके पत्तों को छुआ जाय तो वे डर/भय के कारण संकुचित हो जाते हैं। जमीन में धन गड़ा हुआ हो तो कई वनस्पतियाँ उसके इर्द–गिर्द जड़ें फैला कर रहती है। जहाँ धन गडा हो वहाँ आसपास में अधिकांस समय प्रायः हरि वनस्पति ऊगी हुई रहती है, इसका मूल कारण लोभ संज्ञा है। वनस्पति में शब्द ग्रहण की शक्ति भी होती हैं, अगर पौधों के निकट में संगीत बजता हो तो वे पौधे किसी और दिशा में न झूककर जिस ओर संगीत बज रहा था उसी दिशा में झूक जाते हैं। कुछेक वनस्पतियाँ नवयौवना स्त्री के पाँव की आहट से पल्लवित हो उठती है यह मैथुन संज्ञा का संकेत है। (2) प्रज्ञा प्रधान, अधिकांश संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव अपनी प्रज्ञा/बुद्धि के अनुसार प्रवृत्ति करते हैं, जिनाज्ञानुसार नहीं। जो बात अपनी बुद्धि में बैठ जाय, तदनुसार ही प्रवृत्ति और निवृत्ति करते रहते हैं। दुनिया में ऐसे प्रज्ञा प्रधान लोग बहुत है, जो धर्म के विषय में, चक्षु अगोचर पदार्थों के बारे में अपनी मति के अनुसार चलने वाले होते हैं। जिन वचन के उपर विश्वास, श्रद्धा व आस्था के अभाव के कारण वे धर्म के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के तर्क–कुतर्क करते हैं। वनस्पति सब्जी आदि को काटते हैं परन्तु उसमें जीव तो दिखते नहीं है। कच्चे पानी में जीव तो दिखते नहीं है फिर भी कहते हैं कि उसमें असंख्य जीव है, अतः इसमें असंख्य जीव है ऐसा मानना गलत है। स्वर्ग नरक यहाँ ही है, और कोई लोक नहीं है अतः पुण्य पाप का फल यहाँ ही मिलता है। मोक्ष किसने देखा है। मोक्ष जैसी कोई चीज नहीं है। ये बुद्धिमान गिने जाने वाले लोगों की बुद्धि के प्रदर्शनं है। (3) आज्ञा प्रधान जीव, सर्वज्ञ परमात्मा के शासन (जिन शासन) की प्राप्ति को अतीव दुर्लभ माना गया है। बाहय दृष्टि से सर्वज्ञ के शासन को पा लेने पर भी सर्वज्ञ कथित

For Private And Personal Use Only

शास्त्र सिद्धांत (जिनागम) पर संपूर्ण श्रद्धा उत्पन्न होना अत्यन्त ही कठीन है। मोक्ष मार्ग के साधक साधु भगवंत एवं श्रावक के लिए तो शास्त्र/आगम ही चक्षु है, उसी का आधार लेकर उन्हें मोक्ष मार्ग में यात्रा करनी होती है। क्या सभी शास्त्र केवली रचित है? नहीं, सर्वज्ञ कथित मोक्ष मार्ग का अनुगमन करने वाले परमज्ञानी, परमगीतार्थ, श्रृतधर भवभीरू आचार्यो के द्वारा उल्लेखित/निर्दिष्ट शास्त्र भी प्रमाणित हैं, क्योंकि उन्होंने जिन ग्रन्थों और शास्त्रों को बनाया उनमें सर्वज्ञ के वचनों को नजर समक्ष रखकर ही आत्माओं के हितार्थ बनाया है। अतः पूर्वाचार्यों गीतार्थों के द्वारा रचित ग्रन्थ–शास्त्र भी उतने ही प्रमाणित माने जाते हैं, जितने कि सर्वज्ञ एवं श्रतधरों से प्रमाणित माने जाते हैं। साधुओं के लिए रोजाना पाँच प्रहर तक स्वाध्याय करने की आज्ञा है। पाँच प्रहर यानी लगभग पंद्रह घंटे, चौबीस घंटों में से पंद्रह घंटे स्वाध्याय करने का विधान है। बिना स्वाध्याय के शास्त्रों के रहस्यों को समझा नहीं जा सकता।

शारीरिक व्याधि दूर करने शरीर को स्वस्थ और स्फुर्तिला रखने के लिए अनेक प्रकार के व्यायाम एवं योगासन है, जिससे शरीर निरोगी स्वस्थ और स्फुर्तिला, चुस्तिला रहता है, वैसे साधुओं/साधकों की आत्मशुद्धि के लिए, आत्मोन्नति के लिए आगम शास्त्र है। जिसके अध्ययन से बुद्धि विकसित होती है। विचार पवित्र रहते हैं। मानसिक शान्ति मिलती हैं। विकारों का शमन होता है, और मन की चंचलता दूर होती है। ये आगम शास्त्र चिन्तामणी रत्न के समान है, जो दुश्चिन्ताओं का हरण करते हैं। आगम शास्त्रों को पढ़ो जरूर, मगर मन घड़ंत–अपने मनोनुकूल अर्थ मत निकालो वर्ना तैरने की कला से अनभिज्ञ आदमी पानी में कुदने पर डूब मरता है, वैसे ही आगम शास्त्रों को पढ़ने के बाबत भी है। तैरना नहीं जानने वाला अगर पानी में कुदता है तो वह अकेला ही डूबता है किन्तु आगम ग्रन्थ को नहीं जानने और नहीं समझने वाला जब उन्हें पढ़ता है तो गलत अर्थ निकाल कर खुद तो डुबता ही है लेकिन साथ में अन्यों को भी डूबोता है। हाँ, जो जानकार है उनके सान्निध्य में रहकर शास्त्र

For Private And Personal Use Only

का पठन–पाठन व तत्त्वाभ्यास कर सकते हो। तीर्थंकर परमात्मा द्वारा निर्दिष्ट आगम या आज्ञा हृदय में होने पर, वास्तव में तीर्थंकर परमात्मा ही हृदय में है। क्योंकि उस आगम अथवा आज्ञा के प्रणेता तीर्थंकर परमात्मा ही है। उस आगम और आज्ञा को हृदय में स्थापित करने से अवश्य ही सभी प्रकार की अर्थ सिद्धि होती है। आगम का बहुमान, वास्तव में तीर्थंकर परमात्मा का ही बहुमान है। शास्त्रों के आधार पर ही हमें प्रत्यक्ष और परोक्ष पदार्थों के वास्तविक स्वरूप का भान होता है। इसलिए साधकों को शास्त्र अध्ययन में प्रयत्नशील रहना चाहिए। जिस के दिल में जिनेश्वर प्रणित आगम शास्त्रों के प्रति आदर बहुमान नहीं है, उसकी सभी धर्म क्रियाएँ निष्फल हैं, व्यर्थ हैं। आगम शास्त्रों के प्रति अपने हृदय में रहे अपूर्व बहुमान भाव को व्यक्त करते हुए श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने कहा है।

कथं अम्हारिसा पाणा, दुसमकाल दुसिया।
हा अणाहा कहं हुंतो, जइ न हुंतो जिणागमो।।

दुषमकाल से दूषित इस पंचमकाल में अगर मुझे जिनागमों की प्राप्ति नहीं होती तो हमारे जैसे अनाथों की क्या हालत होती? प्रकांड, विद्वान और प्रौढ़ प्रतिभासंपन्न सूरि पुरंदर श्रीमद् हरिभद्रसूरिश्वरजी महाराज जिनागमों की प्राप्ति में अपने को सनाथ कह रहे हैं, और शास्त्र बिना अनाथ कह रहे हैं। उनके इन उद्‌गारों से हम समझ सकते हैं कि जिनागमों से उनकी मति कैसी हो गई होगी? हेमचन्द्रसूरिजी महाराज को कलिकाल सर्वज्ञ पद कैसे मिला था? वे उस काल में रहे सभी शास्त्रों के जानकार थे, उस कारण से कलिकाल सर्वज्ञ का बिरूद मिला था। वर्तमान युग में ऐसे कलिकाल सर्वज्ञ की जरूरत है। इसी अध्यात्मसार ग्रन्थ के निर्माता आज से करीब तीन सौ वर्ष पूर्व हुए महामहोपाध्याय श्री यशोविजयजी की ज्ञान प्रतिभा का तो क्या कहना! एक पंडित ने देश भर के पंडितो को जीतकर जब काशी में प्रवेश किया तब काशी के पंडित ड़र के मारे थर–थर कांपने लगे थे। आए हुए पंडित के साथ वाद–विवाद करने के लिए कोई भी पंडित तैयार नहीं हुआ, सब ड़रे हुए थे तब

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस न्यायोपाध्याय ने उस पंड़ित को ललकारा था, वाद हुआ और उसमें पंडित को परास्त भी किया। तब काशी के भट्टाचार्यों ने मिलकर, उस दिन इस महाज्ञानी को "न्याय विशारद" की पदवी दी थी। भगवान अभी हम पर दो प्रकार से उपकार कर रहे है। आगम और मूर्ति से। इन दोनो में मंत्र और मूर्ति रूप में साक्षात् भगवान ही है।

मन्त्रमूर्तिं समादाय, देवदेवः स्वयं जिनः।
सर्वज्ञः सर्वगः, सोऽयं साक्षात् व्यवस्थितः।।

मंत्र और मूर्ति के रूप में साक्षात् भगवान ही बिराजमान है। पंड़ित वीर विजयजी कह रहे हैं। मोह के विष को उतारने के लिए प्रमुख रूप में दो ही साधन बताये है। (1) जिनागम और (2) जिनप्रतिमा इन दोनों में जिनागम प्रथम है। क्योंकि विधि, आचार, आशातना आदि का विवेक ज्ञान से ही मिलता है। "**विषम काल जिन बिंब जिनागम, भवियण कुं आधारा**" इस काल में ये दोनों हमें भव सागर से बाहर निकलने के लिए स्टीमर के समान है। मूर्ति भक्तिपूर्ण जीवन के लिए है और आगम ज्ञानपूर्ण जीवन के लिए हैं। जहाँ कहीं भी श्रेष्ठ है, वह सब जिनागमरूपि समुद्र में से उछले हुए बिंदु ही है। पुज्य सिद्धसेनदिवाकरसूरिजी के शब्द भी इस विषय में स्मरण के योग्य हैं। मूर्ति के दर्शन में जैसे आनंद आता है, वह आनंद जैसे कर्म निर्जरा का कारण है वैसे किताबें पढ़ते हूए भी आनंद आता है वह आनंद भी कर्म निर्जरा का कारण बनता है। तो आनंद देने वाली दो चीजें हैं प्रतिमा और पुस्तक (शास्त्र) हम अखबार पढ़ सकते हैं, हम साप्ताहिक और मासिक मैगजिन पढ़ सकते है उसे पढ़ने का समय हमारे पास है परन्तु दुःख की बात है कि अच्छी किताबें हम नहीं पढ़ सकते उन्हे पढ़ने का समय हमारे पास नहीं है।

एक आदमी किताब बेचने निकला था। वह शब्दकोश बेच रहा था, गृहिणी से कहने लगा। कि शब्द कोश जरूर खरीद लें क्योंकि बहुत ही अच्छा हैं। बच्चों को बहुत काम लगेगा। गृहिणी टाल रही थी, मुझे खरीदना नहीं है। कोई दलील न चली तो उसने कहा कि देखते नहीं वह टेबल पर हमारे

For Private And Personal Use Only

शब्दकोश रखा हुआ है। अतः हमें कोई जरूरत नहीं है। वह आदमी हँसने लगा मुझे धोखा मत दो वह शब्दकोश नहीं है। वह धर्मग्रन्थ हैं, गृहिणी ने कहा कि, तुमने कैसे पहचाना वह धर्मग्रन्थ है? उसने कहा उस पर जमी हुई धूल से पता चल जाता है कि वह क्या है, उस पर इतनी धूल जमी हुई है कि कोई उठाता नहीं, कोई उठाता तो इतनी धूल नहीं जम सकती थी। ये हालत है धार्मिक किताबों की। कलाकार के हाथ अनगढ़ वस्तुओं को पकड़ते हैं और अपने उपकरणों के सहारे उन्हे नयानभिराम सुन्दरता से भर देते हैं। कुम्हार मिट्टी से सुन्दर मटके बना लेता है। मूर्तिकार पत्थर के टूकड़े को देव प्रतिमा में परिणत कर देता है। गायक बांस के टूकड़े से बंसी की ध्वनी·निनादित कर देता है। धातु का टूकड़ा स्वर्णकार के हथौड़े की चौट खाकर आकर्षक आभूषण बन जाता है। जीवन भी एक अनगढ़ तत्त्व है। इसे संवारने वाला सद्ज्ञान और सद्साहित्य है। गंदगी से भरे व्यक्ति को अपने मैल को धोने के लिए सरोवर तो है, पर वह सरोवर की खोज ही न करे तो दोष किसका? सरोवर का नहीं। रोग दूर करने के लिए चिकित्सा तो है, पर रोगी उसे उपलब्ध ही न करे तो दोष किसका? चिकित्सा का नहीं। धूप से परेशान, आकुल–व्याकुल व्यक्ति को धूप से बचने के लिए वृक्षादि स्थान तो हैं पर वह वृक्ष की खोज ही न करे तो दोष किसका? वृक्ष का नहीं। वैसे जन्म जन्मान्तर से त्रस्त हम जैसों को आगम शास्त्रों का, सद्साहित्य का समुद्र तो है पर हम ही न ढूंढ़े न पढ़े तो दोष किसका? आगम ग्रन्थ, साहित्य का नहीं। साहित्य मानव जीवन की अनुपन संपत्ति है। साहित्य ही अतीत को वर्तमान से और वर्तमान को भावि से मिलाता है। अतीत में मानव ने जो चिन्तन मनन किया वह हमें वर्तमान जीवन में विरासत में मिला है, और वर्तमान में जो चिन्तन करता है वह भाविपीढ़ी को प्राप्त होगा।

सद्साहित्य ने अनेक लोगों में प्रेरणा दीप लजाएं है। निराश, हताशों में उत्साह का संचार किया है। साहित्य में जो ताकत है वह तोप, गोला, बन्दूक, तलवार में नहीं है। क्योंकि साहित्य मानव के हृदय को ही बदल देता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। नादिरशाह जब दिल्ली में कत्लेआम कर रहा था, उस समय दिल्ली के बादशाह आलम के हाथ–पाँव फूल गए थे। नादिर के क्रोध से ड़र के मारे नर–नारी थरथरा रहे थे, जल, भूनकर खाक हो रहे थे। उनकी क्रोधाग्नि को शान्त करने की किसी में सामर्थ्य नहीं थी। जो भी नादिर के सामने जाता वह तलवार के घाट उतार दिया जाता था। दिल्ली में खून की नदी बह रही थी। नादिर के सेनापति भी इस कृत्य से दंग थे पर किसी में सामर्थ्य/हिम्मत नहीं थी कि उसके खिलाफ एक शब्द भी कोई बोल सके। तब दिल्ली के राजा का मंत्री जो साहित्यिक था, जब उसने हत्या कांड़ का दृष्य देखा तो उसका दिल रो पड़ा। वह अपनी जान हथेली में लिए नादिर के पास पहुँचा और उसने कहा! आपके प्रेम रूपि तलवार ने किसी को जीवित नहीं छोड़ा अब तो आपके लिए एक ही उपाय है कि आप मूर्दों को फिर जीवित कर दें और उन्हें पुनः मारना प्रारम्भ करें।

कसे न मांद की दीगर ब तेगे नाब कुशी,
मगर कि जिन्दगी कुनी खल्का रा बाज कुशी।।

कहते हैं कि यह शेर सुनते ही नादिर के विचार बदल गए और उसने उसी समय हत्याकांड़ बंद करवा दिया। साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य समाज के विचारों का सही प्रतिबिम्ब है। साहित्य युवावस्था में मार्ग दर्शक है, वृद्धावस्था में आनन्ददायक है, बचपन में मनोरंजन है। वह एक अद्भूत शिक्षक है। शिक्षक थप्पड़ मारता है, कठोर शब्दों में फटकारता है और पैसे भी लेता है। पर यह न मारता है न कठोर शब्दों में फटकारता है न पैसे ही लेता है, परन्तु शिक्षक की तरह सीखाता है, उपदेश देता है, शिक्षा देता है। साहित्य के लिए आस्टिन फिलिप्स ने कहा था, कपड़े भले ही पुराने पहनो, पर किताबें नवीन–नवीन खरीदो। लॉर्ड मेकोलेने ने कहा यदि मुझे कोई सम्राट बनने के लिए कहे, और साथ ही यह शर्त भी रखे कि तुम पुस्तकें (साहित्य) नहीं पढ़ सकोगे तो मैं राज्य को ठुकरा दूंगा और गरीब बनकर भी पुस्तकें पढूंगा। लोग फर्निचर से घर सजाते हैं। मेरा कहना है आप सत्साहित्य से घर को सजाएँ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यदि आपका घर सत्साहित्य से सजा हुआ है, भले ही आप कुछ नहीं जानते हैं, पढ़े लिखें खास नहीं हैं, फिर भी आने वाले लोग साहित्य को देखकर आपको पढ़े लिखे विद्वान समझेंगे। वह साहित्य मूर्खता को ढांकता है। घर में आने वाले लोग पढ़ेंगे तो आपको लाभ ही है।

फारस में सन् 938 में एक वजीर था। उसके पास एक लाख सत्तर हजार किताबें थी, जिन्हें वह सदा अपने साथ ही रखा करता था। जब वह युद्ध के मैदान में जाता तब भी किताबें साथ ही रखता। किताबों को इधर से उधर ले जाने के लिए चार सौ ऊँट थे, और इतनी व्यवस्थित रखी जाती थी कि आवश्यकता होती उसी समय वह निकाली जाती थी। बुद्धिमान मनुष्य हमेशा सत्साहित्य से प्रेम करते हैं। अक्षर दो प्रकार के हैं। (1) संज्ञाक्षर और (2) व्यंजनाक्षर । जो लिखे जाते है वे संज्ञाक्षर हैं तथ जो मुख से उच्चरित किये जाते हे वे, व्यंजनाक्षर है। तीर्थंकर परमात्मा की वाणी भी व्यंजनाक्षर रूप बनती है तभी दूसरों को बोध होता है। पाँच ज्ञान में अपेक्षा से श्रुतज्ञान ही अधिक कीमत्ति है। क्योंकि श्रुतज्ञान के बिना केवलज्ञान सम्भव नहीं है। परमात्मा भी केवल ज्ञान के बाद देशना देने के लिए श्रुतज्ञान का ही उपयोग करते हैं। केवलज्ञान का मूल श्रुतज्ञान है। वर्णमाला के सभी अक्षरों का उच्चारण परमात्मा के मुख से होने के कारण सभी अक्षर पूजनीय है। गणधर भगवन्त भी इस ब्राह्मीलिपि को **"नमो बंभी लिविए"** कह कर प्रणाम करते है। इस वर्णमाला का उपयोग आज तक समस्त तीर्थंकर परमात्माओं ने किया है। वर्णमाला का प्रत्येक अक्षर ज्ञानमय है। श्रुतज्ञान की भक्ति से ही अन्त में केवल ज्ञान की प्राप्ति होती है।

हरिभद्रसूरीश्वरजी महाराज सद्ज्ञान के महान उपासक थे। वे दिन भर ग्रन्थ सृजन में लगे रहते थे, संध्या के समय भी लिखते रहते थे। रात्रि के समय भी वे सृजन यात्रा जारी रखना चाहते थे, परंतु रोशनी के अभाव में लेखन संभव नहीं था। गुरूभक्त लल्लिग ने गरूदेव की समस्या जान ली, उसने उपाश्रय में अत्यन्त ही कीमति मणि रख दिया। उसके अचित प्रकाश में हरिभद्र

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूरीश्वरजी महाराज ने अपना साहित्य सृजन जारी रखा। वे सारे ग्रन्थ आज उपलब्द नहीं है परन्तु जो कुछ विद्यमान है, वे सब ग्रन्थ जिनशासन का अमूल्य खजाना है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्र सूरिश्वरजी महाराज ने अपने जीवन काल में साढे तीन करोड़ श्लोक प्रमाण प्राकृत संस्कृत धर्मग्रन्थों का सृजन किया था। श्रृतधर महर्षि श्री उमास्वातिजी महाराज ने अपने जीवन काल के दौरान पाँच सौ ग्रन्थों का सृजन किया था। कलिकाल में श्रृतकेवली समान उपाध्याय श्री यशोविजयजी महाराज ने अपने जीवन काल के दौरान सैंकडों संस्कृत तथा बालभोग्य शैली में गुर्जर साहित्य का सृजन किया था।

कुमारपाल महाराजा ने अपने जीवन काल दरम्यान इक्कीस ज्ञान भंडारों की स्थापना की थी। मांडवगढ़ के मंत्रीश्वर पेथड़शाह ने धर्मघोष सूरीश्वरजी महाराज साहब के मुख से ग्याहर अंगों का विधि पूर्वक श्रवण किया था और भगवती सूत्र में जितनी बार गोयम शब्द आया उतनी ही बार सुवर्ण मुद्रा द्वारा श्रुत की पूजा की थी, इस तरह उन्होंने छत्तीस हजार सुवर्णमुद्राओं से पूजन करते हुए भगवती सूत्र का श्रवण किया था। ज्ञानी कहते है कि श्रद्धापूर्वक, सदभाव पूर्वक श्रुतज्ञान की भक्ति हो तो वह केवल ज्ञान प्रदान करने में सक्षम हैं।

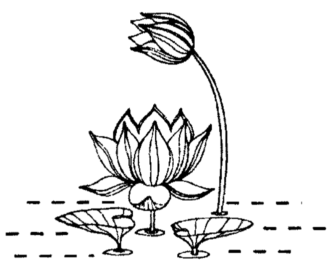

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

26

त्यक्तव्याः कुविकल्पाः

"कुविकल्पों का त्याग करना"

जीव तन से ज्यादा कर्म बांधता है या मन से? ज्ञानी पुरूष कहते है, जीव तन से भी ज्यादा मन से कर्मबंध करता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है प्रसन्नचन्द्र राजर्षि। मन के विचार, ये तो साँप, सीढ़ी के खेल के समान है। कुविककल्प के साप के साथ जाकर रूक जाये तो सातवीं नरक तक पहुंचा सकते है। और सुविकल्प/सुविचार की सीढ़ी के पास पहुँचकर ठहर जाये तो मोक्ष में भी पहुँचा सकते है। अनंतकालीन संस्कार ऐसे घर कर गये कि जिस कारण से शुभविचार से भी कुविचार में मन को ज्यादा मजा आता है। स्वयंभूरमण समुद्र में जन्मा हुआ, एक हजार योजन शरीर की लम्बाई वाला, एक करोड़ पूर्व आयुष्यवाला, असंज्ञी (मन बिना का) मत्स्य अपनी जिन्दगी में लाखों, करोड़ो, अबजो मछलियाँ खाने पर भी मर कर पहली नरक में ही जाता है, जबकि उसी मछली की आंख की भौंह में जन्मा हुआ, अतर्मुहूर्त के आयुष्यवाला, चावल के दाने जितने शरीर वाला गर्भज मत्स्य मर कर सातवीं नरक में जाता है। इसका कारण क्या? इसका कारण गर्भज मत्स्य के मन में चलने वाले क्रूर विचारों मन बिना की बड़ी मछली के पेट में गई हुई हजारों मछलियों में से कितनीक मछलियाँ जब जिन्दा ही बाहर आती है, तब यह गर्भज मत्स्य सोचता है,........... यह भी कितना मूर्ख है, अगर इसकी जगह पर मैं होंऊं तो एक को भी जाने नहीं दूँ।

अपनी जिन्दगी में एक भी मछली नहीं मारने पर भी मन के अशुभ विचार/कुविकल्प उसे दुर्गति में धकेल देते है। हम भी अपनी जिन्दगी में कितनी ही बार ऐसे क्रूर विचारों में चले जाते हैं। फलां की जगह पर अगर मैंने व्यापार संभाला होता तो लाखों रूपये बना लेता। अमूक की जगह पर मैं होता तो उस दिन मैं उसे मार ही ड़ालता। फलां की जगह पर मैंने रसोड़ा संभाला होता तो लोग रसोई का बखान करके थक जाते। पाप नहीं करने पर भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुविकल्पों के कारण जीव पापी बनता है। सावधान! सावधान! सावधान! इसी प्रकार जो रातदिन धन, स्त्री या भोग सामग्री की प्राप्ति के लिए मन से बुरी-बुरी कुलांचे भरता रहता हैं, उसके पल्ले तो एक भी पदार्थ का भोग नहीं पड़ता, फिर भी वह केवल मन के बुरे विचारों के कारण नरक का मेहमान बन जाता हैं। उसकी यह विडम्बना भोजन किये बिना ही हुए अजीर्ण के समान है। विचारों से ही कर्मबंध करके दुर्गति के मेहमान मत बनों। विराग से राग की और योग से भोग की ओर, उपासना से वासना की ओर तथा शील से अशील की और प्रवृत्ति करते हुए मन को जान कर कहना पड़ता है कि मन का स्वभाव गधे और भैंस के समान ही है। गधे को अच्छी तरह से नहलाओं धुलाओ परन्तु ज्यों ही वह राख को देखता है तो वह उसमें लोटने लगता है। इसी प्रकार मन को संतों की पवित्र वाणी में नहलाओं, प्रभु की भक्ति में नहलाओं तो भी वह ज्यों ही वासना रूपी राख को देखता है, उसमें लोटने लगता है। भैंस को कितना ही साफ स्वच्छ रखो परन्तु ज्योंहि वह किचड़युक्त पानी को देखती है तो उसमें बैठ जाती है। इसी प्रकार मन को सामायिक प्रतिक्रमण की पवित्र क्रिया में नहलाओं तो भी वह ज्योंही कषायरूपी कीचड़ को देखती है, तो उसमें बैठ जाती है। मन की ऐसी दुर्प्रवृत्तियों के कारण आत्मा का अधःपतन होता है। वासनाओं, कषायों की राख और किचड़ का मटमैलापन मन पर ऐसे संस्कार बना देता है कि उपदेश रूप जल भी उसे धो नहीं पाते, इसका सीधा तथा प्रत्यक्ष प्रभाव आत्मा की स्थिति पर पड़ता है, इसीलिए मन को ऐसी कुप्रवृत्तियों में युक्त मत होने दो। आसमान में सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र व तारे चलते रहते हैं किन्तु आसमान पर इनका दाग नहीं रहता। आसमान में पानी से भरे बादल छा जाते हैं, वहाँ से बरसते भी हैं किन्तु आसमान उनके जल से कभी भीगता नहीं। आसमान में इतने सारे पक्षी उडते रहते है किन्तु उनके पंखों का एक भी निशान आसमान पर नहीं रहता। पानी में हजारों मछलियाँ एवं अन्य जलचर घूमते रहते है किन्तु जल में उनके पाँवों के निशान नहीं रहते। वैसे ही मन में अनेक प्रकार के विकल्प आएँ-जाएँ किन्तु उनका कोई दाग न रहे। राग और

For Private And Personal Use Only

द्वेष, प्रतिकूल और अनुकूल सभी परिस्थितियों में बेदाग रहो, बेअसर रहो, एक भाव रहो। यही तो महत्त्वपूर्ण है। आत्म साधना के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए चित्त की स्थिरता अत्यावश्यक है। जिसका चित्त अस्थिर है, वह साधना मार्ग में कभी भी प्रगति नहीं कर सकता है।

एक बालक किसी एक घर की डोर बैल बजाना चाह रहा था, परन्तु उसका हाथ वहाँ तक पहुँच नहीं पा रहा था। वह कुदकर (उछलकर) बैल बजाने की कोशिश कर रहा था। तभी वहाँ से एक बुजूर्ग आदमी निकलते है। तब उस बालक ने उनसे कहा– अंकल! बैल बजवा दो न! बुजूर्ग ने उसे ऊपर उठाया, तब उसने बैल बजाई, किन्तु दरवाजा खुले उससे पहले ही वह बालक वहाँ से भाग गया कि चलो मैं भाग जाता हूँ। कहीं कोई देख न लें। यहाँ उस बुजूर्ग की क्या हालत हुई होगी आप सोच सकते है। वैसे ही मन तो संकल्प–विकल्प करके भाग जाएगा, किन्तु आत्मा की क्या हालत होगी आप सोच सकते हैं। कुविचार–कुविकल्प मनुष्य के विनाश का कारण बनते हैं, क्योंकि सतत् या बार–बार कुविचारों के सेवन से आदमी आज नहीं तो कल कुकर्म में प्रवृत्त हो जाता है। आज जो कुकर्म, कुप्रवृत्ति में दिख रहा है, उसने बिते हुए कल में जरूर से कुविचार किये होंगे, और जो आज कुविचारी और कुविकल्पी है, कल अवश्य ही कुकर्म का सेवन करेगा। आज जो अच्छे कर्म कर रहा है उसने कल अच्छे विचार कियें होंगे और आज जो सुविचार कर रहा है वह कल जरूर से सत्कार्य करेगा। सुविचारों के विषय में हम सभी दरिद्र है। उससे भी अधिक दुःखद बात तो यह है कि वह दरिद्रता हमें खटकती नहीं है। गंदे और फटे हुए कपडों से हमें शर्म आती है, जैसे तैसे घर में रहना भी हमें अच्छा नही लगता। ऐसे–वैसे चप्पल भी हमें अच्छे नहीं लगते हैं, परन्तु जैसे–तैसे विचारों से, नहीं तो हमें शर्म आती है और सुविचारों के लिए प्रयत्न भी नहीं करते हैं। अच्छे–कपड़े, अच्छा घर, अच्छे चप्पल आदि की तरह अच्छे विचारों की भी सुन्दरता है। सुविचार हमारा परम मित्र है,क्योंकि यह ऐसा साथी है जो कभी धोखा नहीं देता, आपका कभी अहित नहीं करेगा। सुविचारों

For Private And Personal Use Only

से आदमी के विचार और उच्चार स्वयमेव समृद्ध बन जाते हैं। वह जो कुछ भी करेगा सोच कर ही करेगा। वह जो बोलेगा सोचकर ही बोलेगा। उसके विचार और आचार में संयम होगा। बोले गये और लिखे गये श्रेष्ठ शब्दों से भी सुविचारों की ताकत कई गुना ज्यादा होती है। दुर्विचार दुर्गति को निमंत्रण देते है। घर में रहा कचरा ज्यादा से ज्यादा घर ही गंदा करेगा और घर तक ही सीमित रहेगा, कपड़ों को लगा मैल भी कपड़ें ही बिगाड़ेगा और कपड़ों तक ही सीमित रहेगा, परन्तु ये दुर्विचार इस जीवन को तो कलंकित करेंगे ही साथ ही साथ आने वाले भव को भी बिगाड़ेंगे। दुर्विचार आत्मा के पतन का कारण बनते हैं।

शेख चिल्ली की कहानियों से सभी परिचित है, उन कहानियों को सुनकर हमें बड़ी हँसी आती हैं। लेकिन हमारा मन भी शेखचिल्ली के समान है, बल्कि उससे भी खतरनाक विचार करता रहता है, मन में भयंकर संकल्प विकल्प चलते रहते है। हर व्यक्ति मन से ही बड़े–बड़े मंसूबे बांधता रहता है। जो कभी पूरे भी न हो सके ऐसे–ऐसे ख्वाब देखता है। हम रास्ते से गुजर रहे है बीच में कोई दुश्मन मिल गया अथवा किसी से झगड़ा हो गया, रास्ते से दोनों चले भी गये, अपना–अपना काम भी करने लगे, लेकिन विचार उसी के आ रहे है। उसने मुझे इस तरह कह दिया, गाली दी। चलो, बोला तो कोई बात नहीं किन्तु उसने मुझे थप्पड़ भी मारी। अगर लोग बीच में नहीं आते तो उस गधे की अक्कल ठीकाने ला देता, मार–मार के उसकी तो हड्डियाँ तोड़ देता। आज तो वह लोगों के कारण बच गया, लेकिन अब कहीं मिला तो उसे जिन्दा नहीं छोडूंगा। शिक्षक विद्यार्थी को डाँटता है तो दूसरा विद्यार्थी खुश होता है, कि यह हमेशा मुझे परेशान किये रहता था, आज तो मजा आ गया। जिसको शिक्षक ने डाँटा है वह भी मन ही मन शिक्षक पर क्रोध करेगा, उसके विचारों में तुफान आ जाएगा, इच्छा होगी कि अभी शिक्षक का गला घौंट दूँ। बड़े भाई और छोटे भाई में भी यही होता है। तो हर बुरी घटना में संकल्प–विकल्प शुरू हो जाते हैं। हम जितना शुभ करके आत्मा का हित नहीं करते उतना सिर्फ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अशुभ विचारों से अहित कर लेते हैं।

एक शेठ अपने श्रेष्ठ नसल के घोड़े पर सवार होकर पहरेदार के साथ अन्यत्र जा रहे थे। बीच में ही रात हो जाने से किसी एक गाँव में ठहर गये। सेठ धर्मशाला में सोये। पहरेदार को घोड़े की रखवाली के लिए बाहर बिठाया और साथ ही सूचना भी दी कि तू सो मत जाना। घोड़े को कोई ले न जाय, ख्याल रखना। पहरेदार ने भली-भाँति ख्याल रखने का वचन दिया। परन्तु घोड़ा कीमती होने से शेठ को विश्वास नहीं है। इसलिए पहरेदार पर भरोसा नहीं आ रहा है, इस कारण से नींद नहीं आ रही है। जरा सी आंख लगी। किन्तु अचानक फिर घोड़े के ख्याल में नींद उड़ गई। एक प्रहर बीत चूका था। पहरेदार घोड़े की रखवाली करता है या नहीं? देखने के लिए बाहर आया। पहलेदार को पूछाः तुम्हें नींद तो नहीं आयी न! जी नहीं! चिंता में निंद कैसी? सेठ ने पूछा किस बात की चिंता है? सेठ के मन में शंका हुई, कहीं घोड़े की तो बात नहीं होगी! पहरेदार ने कहाः गहरी चिंता में हूँ। सेठ ने शंका से पूछ लिया। घोडा तो ठीक है न! पहरेदार बोला, साहब घोड़े की बात मत पूछो! तब शेठ से रहा नहीं गया, क्या कोई घोड़े को ले गया? पहरेदार ने कहा, शेठजी घोड़े को कुछ नहीं हुआ है। मैं यहां उसी के लिए तो जाग रहा हूँ। शेठ ने पूछा तो चिंता क्या है? पहरेदार ने कहा, मैं सोच रहा हूँ कि इश्वर ने दुनिया बनाई। हम तो कुछ भी बनाते हैं, तो जमीन पर रखते हैं, ईश्वर गजब शक्तिमान है, कि सूर्य, चंदा, ग्रह-नक्षत्र और सितारों को बना कर के आसमान में लटका दिये। शेठ हाँ लेकिन इसमें चिंता की क्या बात है? पहरेदार मुझे इस बात की चिंता है कि अभी तो ईश्वर जागृत हैं, सूरजादि को पकड़कर बैठे हैं किन्तु उन्हें नींद आ जाएगी तो क्या होगा? पहरेदार घोड़े के लिए जाग रहा था। लेकिन वह तो इश्वर की नींद तक पहुँच गया। शेठ ने सोचा यह भी जोरदार विचारक/चिंतक है, अगर ऐसे विचार करता रहेगा तो, नींद नहीं आएगी और घोडे की रखवाली भी अच्छी तरह से होगी। शेठ बोला समस्या तो बडी विकट

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। इस पर सोचकर समाधान ढूंढ़ना। समाधान मिलने पर मुझे भी बताना। और हाँ घोड़े का ध्यान रखना। मैं अन्दर सो रहा हूँ। अरे बाबा! आप निश्चिंत होकर सो जाईए मैं जागने और ध्यान रखने वाला बैठा हूँ न। शेठ भीतर जाकर सो गये। कुछ देर नींद आई दूसरे प्रहर में फिर नींद उड़ गई। घोड़े की चिंता से बाहर आए। देखा तो, पहरेदार जाग रहा है। शेठ ने पूछा, क्या सब ठीक है न। घोड़ा.............. पहरेदार ने कहा घोड़ा तो ठीक है उसकी चिंता छोड़ो। शेठ ने पूछा तो फिर क्या सोच रहे हो? कुछ समाधान मिला? पहरेदार बोला, उसका तो समाधान नहीं मिला, दुसरी समस्या पैदा हो गई, ईश्वर ने जब खुदाई करके बड़ी–बड़ी नदियाँ बनाई, तो इतनी सारी मिट्टी कहाँ डाली? मान लिया कि उससे पहाड़ बनाये होंगे। किन्तु समुद्र की मिट्टी कहाँ डाली होगी? शेठ ने कहा प्रश्न अच्छा है, सोच करके सुबह में मुझे भी बताना और घोड़े का ध्यान रखना। शेठ भीतर जाकर फिर सो गये। घोड़े की चिंता में तीसरे प्रहर के अंत में फिर नींद उड गई वह बाहर आया। देखा, पहरेदार जागता हुआ कुछ सोच रहा है। शेठ खुश हो गये। पूछा अब क्या सोच रहे हो? समाधान मिल गया? पहरेदार ने कहा, नहीं जी! किन्तु एक और उलझन पैदा हो गई। ईश्वर ने जब दुनिया बनाई होगी तब पहले पेड़ बनाये होंगे या बीज? बीज में से वृक्ष हुआ या वृक्ष में से बीज? शेठ ने कहा बड़ी भारी शंका है, समाधान ढूंढना मिल जाय तो सुबह मुझे भी बताना। शेठ तो यही चाहता था कि पहरेदार संकल्प विकल्प करता रहे जिससे कि उसे नींद न आये, शेठ ने कहा ठीक मैं सो रहा हूँ घोड़े का ध्यान रखना। शैठ फिर सो गये। सवेरा हुआ शेठ घोड़े की चिंता में बाहर आए। देखा, पहरेदार सो रहा था। सेठ ने जगाया और कहा तुम सो क्यों गये? घोड़ा कहाँ हैं? पहरेदार बोल सारी रात विकल्पों में बीत गई अभी–अभी ही आंखें लग गई थी। गलती हो गई। कोई घोड़ा ले गया लगता है। शेठ क्रोधित हो उठे। तभी उसने कहा, शेठजी एक नयी समस्या आन पडी है। यह सुनकर शेठ का दिमाग खराब हो गया। अब तेरी समस्या जहन्नम में जाय।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेरा घोडा गया उसकी फिक्र कर। पहरेदार ने कहा शेठजी! अब घोड़ा गया, वापस आने वाला नहीं है। चिंता घोड़े की मत करो, चिंता तो यह करो कि अब आप सामान कैसे उठाओंगे। कहना यही है कि संकल्पों विकल्पों में नींद भी उड़ जाती है और जिन्दगी भी पूरी हो जाती है और कीमती घोड़े की तरह आत्मा कहीं किसी भव में खो जाती है। कुविकल्प साधना मार्ग में सबसे बड़ा विघ्न है। कुविकल्प आर्थात् कुविचार। कुसंग और कुसाहित्य की तरह कुविचार भी खतरनाक है। मैं तो कहता हूँ कुसंग कुसाहित्य से भी खतरनाक है क्योंकि कुसंग और कुसाहित्य तभी खतरनाक बनते है। हममें कुविचार पैदा होते हो। कुविचार ही पैदा न हो तो वे कुछ नहीं बिगाड़ सकते। लेकिन संग और साहित्य की उपेक्षा मत करना क्योंकि विचार उन्हीं के संग से बनते है। विचारों के अनुसार ही आचार बनता है। कुविचारों को नियंत्रण में रखने के लिए कई सुविचार चाहिए, ऐसा नहीं है। एक ही सुविचार........ हृदय की गहराई तक पहुँचा हुआ, सारे कुविचारों को मार भगाता है। क्योंकि एक चम्मच दहीं लीटर दो लीटर दुध को दहीं बना देता है। वैसे एक सुविचार कुविचारों को सुविचारों में बदल देता है। बाहरी रूप से पता नहीं चलता कि कौन क्या सोच रहा है, वह तो खुद ही जान सकता है। बाहरी क्रिया से तो लगता है कि यह आदमी ध्यान धर रहा है किन्तु भीतर तो कुविकल्पों का तुफान चल रहा होता है। ऐसे ध्यान का कोई मूल्य नहीं होता, वह ध्यान नहीं होता अपितु दुर्ध्यान होता है। कुविकल्प के सम्बन्ध में कल्पसूत्र में एक दृष्टान्त आता है।

कोंकण/कुंकण देश के एक वणिक ने वृद्धावस्था में दीक्षा ली थी। एक दिन उस नये मुनि ने ईरियावही से कायोत्सर्ग में अधिक देर लगा दी। जब उसने कुछ देर बाद कायोत्सर्ग पारा, तब गुरू ने पूछा कि, इतनी देर ध्यान करके तुमने क्या चिन्तन किया? वह बोला– स्वामिन्! जीव–दया का चिन्तन किया। गुरू ने पूछा जीव–दया का चिन्तन किस प्रकार का? वह बोला– भगवन्! पहले गृहस्थावस्था में खेत में उगे हुए वृक्ष, झाड़–झंखाड़ आदि को

For Private And Personal Use Only

उखेड़ कर मैं खेत बोता था, तब अच्छे धान्य पैदा होते थे। अब यदि मेरे लडके निश्चिंत रह कर खेत में घास–तृण आदि नहीं उखाडेंगे तो धान्य पैदा नहीं होने से उन बेचारों का क्या हाल होगा? गुरू ने कहा कि है महानुभाव। तुमने यह दुर्ध्यान किया है, ध्यान नहीं। हमें ऐसा चिन्तन नहीं करना चाहिए। गुरू के कहने पर उस मुनि ने **मिच्छामि दुक्कडम्** दिया।

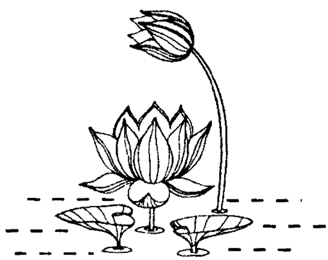

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

27

स्थैर्यं वृद्धानुवृत्त्या च

"वृद्ध पुरूषों का अनुसरण करना"

एक अकेली बुढ़िया अन्य गाँव जा रही थी। सांज होने को आयी। बीच में भयानक जंगल आया, फिर भी बुढ़िया ड़री नहीं। क्योंकि उसे अपनी पुत्री के वहाँ जाने की बड़ी इच्छा थी। उतने में सामने से एक बाघ आ धमका। वह तो बुढ़िया पर छलांग मारकर झपटने के लिए तत्पर हो गया, किन्तु बुढ़िया हुशियार निकली। कहने लगी, बाघ भाई! बाघ भाई! अभी मुझमें क्या धरा है? हड्डियाँ और चमड़ी इसमें तुम्हें क्या मिलेगा और तुम क्या तो खाओगे। मेरी बात सुनो। मुझे मेरी बेटी के वहाँ जाने दो, रोटी-चपाती खाने दो, सिरा, पुडी, जलेबी, रसगुल्ले खाने दो मुझे मोटी तगड़ी हो जाने दो, फिर मुझे खा लेना। बाघ ने भी सोचा बुढ़िया की बात तो ठीक है, फिर भी बाध ने कहा कि अगर तुम नहीं आयी तो? क्यों नहीं आऊँगी? मेरा गाँव और घर इसी रास्तें से है न? अतः मैं जरूर आऊँगी। बाघ को बुढ़िया की बातों पर विश्वास हो गया, और उसे जाने दिया।

बाघ ने जाती हुई बुढ़िया से कहा, खुब माल-पानी खाकर मोटी तगड़ी होकर आना, मैं यहीं हूँ और तुम्हारा इन्तजार करूंगा। हाँ..... हाँ...... यहाँ ही रहो। लेकिन बुढ़िया फिर लौटी? ना..... ना...... वह तो वादा करके गई सो गई। वह बुढ़िया दूरदर्शिता के कारण बाघ के पंजे से छिटक गई।

बूढ़े बड़े अनुभवी होते है। वे मुश्किलों में रास्ता निकालना जानते हैं। उनके विचार योग्य और परिपक्व होते है। उनके विचारों में दूरदर्शिता होती है। उनके विचार संकुचितता से परे होते हैं। वे जो कुछ भी करते है, सभी के लिए करते हैं। वृद्ध पुरूषों के पास अनुभव का एक खजाना होता है। कदाचित् हो सकता है उनके पास बड़ी-बड़ी डिग्रियाँ न भी हो तो भी अपने अनुभव के आधार से वे भारी समस्या का भी सही समाधान कर देते हैं। यहाँ वृद्ध से तात्पर्य बूढ़े व्यक्ति से नहीं हैं। वृद्ध अर्थात् परिपक्व बुद्धि। जिनके पास सोचने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समझने की शक्ति हैं। जो किसी घटना को गहराई से सोच सकता है। किसी कार्य का प्रारंभ करने से पूर्व ही जो उसके दीर्घ परिणाम तक का विचार कर सकता हैं, ऐसे बुद्धिशाली और विवेकी पुरूषों को वृद्ध कहा गया है, शारीरिक दृष्टि से तो "बीस से चालीस पेंतालिस" वर्ष का व्यक्ति जवान कहलाता है, और "पचास सांठ" वर्ष के बाद का व्यक्ति वृद्ध कहलाता है। परन्तु यह तो युवा शरीर व वृद्ध शरीर की स्थूल व्याख्या हुई। सचमुच जवान तो वह है जिसमें कार्य करने के प्रति निष्ठा है। जिसमें आत्म विश्वास है वह जवान है। जो निर्भय है वह जवान है। जो आशा से भरा है वह जवान है। परन्तु जिसमें कार्य के प्रति किसी प्रकार की निष्ठा नहीं है, वह शरीर से जवान होते हुए भी वृद्ध/बूढ़ा ही है। जिसमें आत्मविश्वास का अभाव है वह नौजवान होते हुए भी बूढ़ा ही है। जो छोटी-मोटी कठीनाईयों से ड़रकर भाग जाता है वह पच्चीस तीस वर्ष का होते हुए भी वृद्ध ही है। जो एकदम निराशा और हताशा से भरा हुआ है, जिसमें कार्य करने का कोई उत्साह नहीं है, जिसे कार्य करने से पहले ही निष्फलता दिखती है, वह जवान शरीर में भी वृद्ध ही है। शरीर से कोई आदमी हमेशा जवान नहीं रह सकता है। उम्र-उम्र का काम करती है। शरीर के वृद्धत्व को रोकना किसी के बस की बात नहीं है। मन से जवान बने रहना तो किसी के भी बस की बात है न! आज कई जवान बूढ़े जैसे दिखाई देते हैं। जिन के पास मनोबल का सर्वथा अभाव है। वे छोटी-छोटी जरा-जरा सी कठिनाईयों से कमजोर व कायर हो जाते हैं। वैसी जवानी का क्या मतलब। जवान तो वह है जिसमें शौर्य है, उत्साह है, निष्ठा है, आत्मविश्वास है, जो दृढ़ मनोबली है। भौतिक दुनिया में भी सफलता पाने के लिए दिल की जवानी जरूरी है तो फिर आध्यात्मिक जगत् में सफलता प्राप्त करने के लिए तो वह जवानी और भी जरूरी है। जवान आदमी तो शायद खट्टा भी हो सकता हैं, तीखा भी हो सकता है किन्तु वृद्ध तो मीठा ही होता है। कच्चे आम खट्टे होतें हैं, परन्तु पके हुए आम तो मीठे ही होते है न? आदमी भी बड़ा होता है तो मीठा बनता है। जब वह मीठा बनता है तभी वह कुटुम्ब परिवार में आदरणीय और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माननीय बनता है। वृद्धलोग आदरणीय होते है, अनुसरणीय होते हैं।

एक राजा था उसके राज्य में कई बूढ़े और कुछेक जवान मंत्री थे, युवान मंत्रियों के मन में बूढ़े मंत्रियों के प्रति इर्ष्या थी। युवा मंत्रियों ने मिलकर राजा को शिकायत की कि बूढ़े मंत्री अब राज्य की देखभाल नहीं कर सकते क्योंकि वे बूढ़े हो गये है, अतः उन्हें निवृत्त कर देना चाहिए। राजा ने भी सभी वृद्धों को निकाल बाहर करने का निर्णय किया। बड़े लोग अपनी बुद्धि से कम दूसरों की बुद्धि से ज्यादा चलते हैं। और जहाँ दूसरों की बुद्धि से बिना सोचे समझे चला जाता हैं वहाँ मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। एक बूढ़े प्रधान मंत्री ने कहा आपकी बात ठीक है, परन्तु कल आप एक ऐसा प्रश्न पूछना, और उनके जवाब से बूढ़ों का निर्णय और मूल्य समझ में आये तो आपने निर्णय किया है उस पर पुनः विचार करना। बूढ़ा मंत्री बडा ही हुशियार, दीर्घअनुभवी और अतिबुद्धिशाली था अतः उसने सोचा अपनी बुद्धिमत्ता का उपयोग युवा मंत्रियों के सामने करना ही चाहिए। राजा ने दूसरे दिन की सभा में पूछा– यदि कोई व्यक्ति मेरी दाढ़ी खींचे तो उसे क्या सजा करनी चाहिए? या कोई व्यक्ति मुझे लात मारे तो उसे क्या सजा करनी चाहिए? प्रश्न सुनते ही सबसे पहले युवा मंत्री बोल उठे राजन! उस व्यक्ति का तत्काल शिरोच्छेद कर देना चाहिए। लोगों ने भी मृत्यु–दंड की सजा कहीं। फिर राजा ने अपने सबसे वृद्ध मंत्री को बुलाकर यही प्रश्न पूछा, उन्होंने कहा– राजन्! हम सोचकर जवाब देंगे। फिर सभी वृद्ध मंत्रियों ने विचारविमर्श किया और निर्णय लिया कि उसे सजा नहीं अपितु इनाम देना चाहिए सारी सभा स्तब्ध रह गयी कि ये बूढ़ा मंत्री क्या कह रहा है? राजा का जो अपमान करे उसे इनाम देने की बात कह रहा है! सचमुच इसकी तो सठिया गई है। बूढ़े मंत्री ने बात आगे बढाई और खुलासा किया आपको लात मारने की और दाढ़ी खींचने की किसकी हिम्मत है? या तो आपका लाडला राजकुंवर आपको लात मार सकता है या रानी लात मार सकती है, आपका छोटा राजकुमार ही आपकी दाढ़ी खींच सकता है। क्या कोई और खींच सकता है? तो वे दोनों इनाम के ही अधिकारी हुए न! अतः

For Private And Personal Use Only

आपकी दाढ़ी खींचने वाले को ज्यादा प्यार करना चाहिए। अपने से विपरीत जवाब सुनकर युवामंत्री सोच में पड़ गए। राजा भी खुश हो गए, किन्तु राजा ने अपनी गोद में बैठे हुए राजकुमार की तरफ ईशारा कर विशेषकर के युवा मंत्रियों से कहा, बोलो! मेरी दाढ़ी खींचने वाले राजकुमार का तुम्हारे मतानुसार तो शिरोच्छेद होना चाहिए न! मृत्यु दंड की सजा देनी चाहिए न। युवा मंत्री और सभाजन शर्मिन्दा हो गए। बूढ़े मंत्रियों को सेवा-निवृत्त करने की बात का निर्णय बदलना पड़ा। बूढ़े लोग तो चलता-फिरता पुस्तकालय है। जिस ज्ञान को पाने में वर्ष के वर्ष लग जाते है। वह ज्ञान एक ही वाक्य से देने की क्षमता उन वृद्धों में होती है। पचास-सांठ वर्षों का अनुभव! इतने वर्षों का ज्ञान संग्रह। इतने वर्षों की परिपक्वता, इन सबका लाभ उनके अनुसरण से हम पा सकते हैं। कुछ कबूतर आकाश मार्ग से उड़ते हुए आगे बढ़ रहे थे। अचानक उन्होंने जंगल में जमीन पर बिखरे हुए दाने देखें। उन्हें देखते ही वे कबूतर ललचा गए, किन्तु एक अनुभवी वयोवृद्ध कबूतर ने कहा, इन दानों में लुभाने जैसा नहीं है, शायद किसी शिकारी ने हमें जाल में फँसाने के लिए ये दाने ड़ाले होंगे। अतः इनसे दूर रहने में ही लाभ है। हम सभी के लिए वहाँ न जाना ही हितकर है। किन्तु उस वयोवृद्ध कबूतर की बात/सलाह किसी ने नहीं मानी, आखिर उसे छोड़कर अन्य कबूतर नीचे उतरे और तत्क्षण वे जाल में फँस गए। शिकारी ने आकर उन सभी कबूतरों को पकड़ लिया। जब कि वह वृद्ध कबूतर अकेला बच गया। देखा! वृद्ध कबूतर की बात/सलाह का अस्वीकार करने का परिणाम क्या आया। अज्ञात प्रदेश/जगह से गुजरते समय या तो हम अपने साथ में पथ-प्रदर्शक रखते है अथवा उनके द्वारा दिये गये निर्देशन के अनुसार आगे बढ़ते है। वन से भी यौवन का वन खतरनाक है। वन में भूला-भटका आदमी अगर मार्ग भूल जाये तो भी जहाँ-तहाँ, यहाँ-वहाँ भटक कर पुनः अपने स्थान पर आ सकता हैं, किन्तु यौवन में अगर भटक जाय तो उसका यह भटकाव उसके लिए खतरनाक ही बन जाएगा। अतः वृद्धों और सत्पुरूषों का मार्गदर्शन और अनुसरण जरूरी है। वृद्धों और सज्जनों का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनुसरण कौन कर सकता है? जिसके जीवन में नम्रता है, जो विनम्र है, वही दूसरों की अच्छी बात को वृद्धों की हितशिक्षा को ग्रहण कर सकता है, किन्तु जो स्वच्छंदी, स्वेच्छाचारी है, वह व्यक्ति वृद्धों– सज्जनों की बात कभी नहीं मानेगा। बडों के प्रति जिसके दिल में आदरभाव नहीं है, उसे उनकी हितकर बातें पसंद कैसे पड़ेगी? वृद्ध, सज्जन और विवेकी पुरूषों का आसरा हमारी डूबती नैया को बचा सकता है। इसलिए जिन्दगी में समय–समय पर वृद्ध पुरूषों का समागम और प्रसंग–प्रसंग पर उनकी सलाह भी अवश्य लेनी चाहिए। जीवन पथ पर कई बार ऐसी विकट परस्थितियाँ खड़ी हो जाती हैं, जिसमें से रास्ता निकालपाना बडा ही कठीन हो जाता है। ऐसे समय में बुजूर्गों की सलाह बहुत काम आती है।

एक बार एक नामी चित्रकार को राज ने अपना खुबसूरत चित्र बनाने की आज्ञा की। हालांकि चित्रकार खूब हुशियार था, फिर भी उसके सामने एक समस्या खड़ी थी राजा एक आंख से काणा था। काणे राजा का सुंदरतम चित्र कैसे तैयार किया जा सकता है? चित्रकार के सामने विकट समस्या थी। चित्रकार ने बहुत विचार किया अलग–अलग दृष्टिकोण से सोचा किंतु उसे कोई भी उपाय नहीं मिला। आखिर में वह चित्रकार अपनें पिता के पास पहुँचा। उसने जाकर पिता के सामने अपनी समस्या रख दी। चित्रकार के पिता वृद्ध थे, बुद्धिशाली थे और विवेकी भी थे। तत्काल उन्होंनें सलाह देते हुए कहा बेटा– तूं बाण छोड़ते हुए राजा का चित्र बना दे। क्योंकि निशाना ताकते समय व्यक्ति अपनी एक आंख बंद कर देता हैं, अतः चित्र में राजा का वह नजारा चित्रित कर दे जिसमें राजा तीर चला रहा है। पिता की इस सुयोग्य सलाह से वह खुश....... खुश हो गया। उस चित्रकार ने वैसा ही चित्र बनाया। अपना खूबसूरत/सुन्दर चित्र देखकर राजा भी बहुत खुश हुआ। और राजा ने उस चित्रकार को बहुत बड़ा पारितोष दिया। ये हैं, वृद्ध की बुद्धि का चमत्कार। वृद्ध बाप ने ऐसी युक्ति दिखाई कि जिससे वह इनाम पा गया। परिपक्व बुद्धिवाले वृद्ध पुरूष का अनुसरण करने से व्यक्ति अनेक प्रकार की पाप

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रवृत्तियाँ और अहित से अपने आपको बचा लेता हैं। कई बार सही वक्त पर मिली हुई नेक सलाह हमें भयंकर अनर्थ से बचा लेती है। वृद्धों के अनुसरण से व्यक्ति पापों से छुटता है और सध्धर्म में गतिमान बनता है। वृद्धावस्था की खूब प्रशंसा की है।

वृद्धावस्था बर्फ से भी ठंडी है, जब कि जवानी अग्नि से भी गर्म है। वृद्धावस्था अकलमंद और समझदार है जब कि जवानी दिवानी होती है। वृद्धावस्था देखती है और सोचती है जब कि जवानी देखती है और बेचैन बन जाती है। वृद्धावस्था में स्थिरता होती है जबकि जवानी में चंचलता होती है। वृद्धावस्था में गम्भीरता होती है जबकि जवानी में उद्दंड़ता होती है। कल्पसूत्र में वृद्ध की दूरदर्शिता की एक कहानी आती है।

एक बार अनेक व्यापरी अनेक प्रकार के किरियाने गाड़ियों में भर कर धन कमाने के लिए परदेश जाने को घर से निकले। मार्ग में उन्होंने एक अटवी/जंगल में प्रवेश किया। वहाँ उन्हें तेज प्यास लगी, परन्तु खोज करने पर भी उन्हें वहाँ पर जलाशय न मिला। पानी की खोज करते हुए उन्होंने चार बांबियाँ देखी। एक बांबी को फोड़ने पर उसमें खूब पानी निकला। उन सब ने अपनी प्यास बुझाई और मार्ग के लिए जलपात्र भी भर लिये। उनमें से एक वृद्ध वणिक बोला कि– भाइयों! हमारा काम हो गया चलों, अब दूसरी बांबी फोड़ने की जरूरत नहीं है। निषेध करने पर भी उन्होंने दूसरी बांबी फोड़ डाली। उसमें से उन्हें बहुत सा स्वर्ण/सोना प्राप्त हुआ। वृद्ध के निवारण करने के बावजूद उन्होंने तीसरा शिखर (बांबी) फोड़ा, उसमें से बहुत सारे रत्न निकले। अब फिर वृद्ध वणिक ने जोर देकर कहा कि भाइयों। अब रहने भी दीजिए हम जो चाहते थे हमें मिल चूका है। अब हमें यहाँ से आगे चलना चाहिए। उस वृद्ध वणिक के रोकने पर ध्यान न देकर उन्होंने चौथे शिखर को भी फोड़ डाला। उसमें से एक दृष्टि विष सर्प निकला। उसने अपनी क्रुर दृष्टि द्वारा सब को मौत के घाट उतार दिया, जो उनमें हितोपदेशक वृद्ध था वह न्यायवान था, अतः किसी समीपवर्ती देवता ने उसे अपने स्थान पर रख कर बचा लिया। वृद्धों की बातों में

For Private And Personal Use Only

तथ्य होता है, गहराई होती हैं, दूरगामी परिणाम की सोच होती है। उम्र की वृद्धि के साथ यदि परिपक्वता न आये, स्वाभाव में कोमलता न आये, व्यवहार में वात्सल्य न आये, आचरण में शुद्धता न आये तो ऐसे वृद्ध किसी के प्रियपात्र नहीं बनते है। अतः अपने जीवन में उम्र वृद्धि के

साथ–साथ सद्गुणों की भी वृद्धि होनी चाहिए। जिस आदमी ने मन, वचन, काया, बुद्धि को सदा सत्कार्यों में ही प्रवृत्तशील रखा है, वह उम्र बढ़ने के साथ अधिक परिपक्व, शांत और परिपक्व होता जायेगा। बिन पूछे वह सलाह भी नहीं देगा, क्योंकि वह समझता है। जिसे हरकोई देना चाहता है और जिसे कोई लेना नहीं चाहता उस चीज का नाम है सलाह। गाड़ी रूक जाएगी तब की बात तब। सलाह मांगने आयेंगे तो दे दूंगा। ऐसे वृद्धपुरूष अनुसरणीय है, आदरणीय है। वृद्ध पुरूषों को खास कहना है कि कभी बिन मांगे सलाह मत देना, मौन रहोगे तो आपका सम्मान बढ़ेगा। बकबक करने की आदत से दूर ही रहना। बूढ़े हो गये इसका मतलब यह नहीं कि हर बात में बोलते रहो, सलाह देते रहो। आपका गौरव इसी में है कि सामने से सलाह मत दो। बड़ों का आदर करने का और सलाह मांगने का छोटों का फर्ज है, दोनों ही अपने फर्ज को निभाएँ तो जीवन जहर नहीं बन सकता। ग्रीस के बहुत बड़े चितंक हो गए, सोक्रेटिस बड़े बातुनी दिनभर शहर में घूमना और लोगों से तरह–तरह की सुख–दुःख की बातें करनी, एक दिन घूमते–घूमते एक वृद्ध के पास पहुँचे, बचपन से लगाकर वृद्धावस्था पर्यंत की बहुत सी बातें पूछ डाली। बूढ़े ने भी खुले दिल से बहुत सी बातें करी। सोक्रेटिस ने कहा– आपका अब तक का जीवन तो बहुत अच्छा गुजरा परन्तु अब वृद्धावस्था में कैसे जी रहे हो– जरा मुझको भी बताइए। मैं भी तो जानुं। बूढ़े ने कहा– जिदंगी भर जो धन–दौलत, माल–मिलकत, कीर्ति जो कुछ भी पैदा किया था अब लड़के जैसा कहें वैसा कर लेता हूँ, जहाँ बिठाये वहाँ बैठता हूँ, जो खिलाये वो खा लेता हूँ, पोतों से खेलता हूँ। उनके काम में जरा भी दखलंदाजी नहीं करता हूँ। उनके कार्यों में जरा भी रोकटोक नहीं करता हूँ। घर के बाबत बीच में नहीं आता हूँ, लड़के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भूल करे तब भी कुछ नहीं कहता हूँ, किन्तु सलाह लेने आये तो जिंदगी के अनुभवों का निचोड़ दे देता हूँ। परन्तु मेरी सलाह के अनुसार वे लोग चलते हैं या नहीं वह नही देखता हूँ। घर में छोटे–बड़े सबसे प्रेम रखता हूँ और आनंद में रहता हूँ। पिछली उम्र में जीवन जीने की यह जडी बुट्टी है। घर में परस्पर एकता और सहकार हो तो जीवन मधुर बनता है। वृद्ध ही अगर कुछ न कुछ आगे पीछे करते रहेंगे तो घर के लोगों का उनके प्रति आदर कहां से रहेगा। घर के वृद्धों का ऐसा जीवन भी हो कि जिससे आने वाली पीढ़ी उनका अनुसरण कहते हुए गौरव महसूस करें।

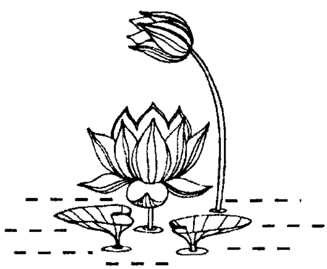

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

28

साक्षात्कार्यं तत्त्वम्

"आत्म तत्त्व का साक्षात्कार करना"

टॉकीज में फिल्म बतालते समय अन्य सभी लाईटें बदं कर दी जाती है। उस समय पर्दे पर बाहर का प्रकाश पड़ता हो तो पर्दे पर ऊभरी आकृतियाँ मंद हो जाती है। इसी प्रकार आत्मा के मूलभूत स्वरूप को पहचानने के लिए बाहय दृष्टि को बंद करना पड़ता है। बाहय दृष्टि को बंद करे तो एकाग्रता व स्थिरता पूर्वक आत्मा के स्वभाव को जान पहंचान सकते हैं।

आत्मा को जानने के लिए बाहय-दुनिया पर से दृष्टि को हटाना अनिवार्य हैं, जब तक बाहय जगत् में दौड़ रहेगी, तब तक आत्मा की अंतरंग दुनिया से अज्ञात ही रहेंगे। जो व्यक्ति सागर से मोती प्राप्त करना चाहता है, वह यदि सागर के किनारे पर ही घूमता रहे या सागर की लहरों पर ही तैरता हुआ ही मोतियों को ढूंढ़ता रहे तो उसे कभी मोती नहीं मिल सकते। मोतियों की प्राप्ति के लिए उसे गोताखोर बनकर सागर की लहरों के साथ जूझते हुए उसके तल तक जाना पड़ेगा तभी वह मोतियों को प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति आत्मा को पाना चाहता है वह यदि सागर के किनारे घूमने की तरह या लहरों पर तैरने की तरह केवल बाहय जगत् व अपने शरीर पर ही ध्यान देता रहे तो वह कभी आत्मा को नहीं पा सकेगा। आत्मा को तो वह तभी पा सकेगा कि जब वह गोताखोर की तरह किनारों और लहरो को छोड़कर मन की या आत्मा की गहराई में गोते लगाए। सागर में ही नहीं हर मनुष्य के भीतर भी अमृत तत्त्व छिपा है किन्तु हम उस अमृत से अनजान है। जैसे देवों और दानवों ने समुद्र मन्थन के बाद अमृत प्राप्त किया था वैसे ही हम भी आत्म मन्थन के बाद अमृत पा सकते हैं। देखना! मन्थन से घबराना मत, श्रमित बन इस कार्य को छोड़ मत देना। अपने अमृत तत्त्व को पाये बिना हम यूँ ही मर गए तो समझना कि मिट्टी में से पैदा हुए और मिट्टी ही रहे। अगर अमृत तत्त्व को पा लिया तो मिट्टी से पैदा होकर सुवर्ण बन गए। उस अमृत को पाने से पहले इन बातों को सदैव याद रखो। अरणि नामक काष्ठ के कण-कण में आग छिपी

For Private And Personal Use Only

हुई है, किन्तु वह अदृष्य होती है, यदि उसे प्रगट करना हो तो घर्षण जरूरी है। घर्षण के बिना उसमें छिपी आग प्रगट नहीं होती। दहीं के कण-कण में नवनीत छिपा हुआ है, यदि उसे प्रगट करना हो तो मन्थन जरूरी है, मन्थन के बिना दहीं में छिपा हुआ नवनीत प्रगट नहीं होता। इसी प्रकार हमारे तन में भी आत्म-तत्त्व छिपा हुआ है। यदि उसे प्रगट करना हो तो साधना आराधना जरूरी है, साधना के बिना वह प्रगट नहीं होती। सूर्य का प्रकाश तो अपने आप में अनूठा अद्भुत और अद्वितीय ही होता है। अतः हजारों-हजारों मशालें जलें तो भी वे एक सूर्य के प्रकाश की बराबरी कभी नहीं कर सकती। चन्द्रमा की चाँदनी भी अपने आप में अनूठी, अद्भूत और अद्वितीय होती है। अतः आसमान में हजारों-हजारों सितारे/तारे टिमटिमाएँ तो भी वे चन्द्रमा की चाँदनी की बराबरी नहीं कर सकते। सागर की विशालता भी अपने आप में, अनूठी, अद्भूत और अद्वितीय ही होती है। अतः हजारों-हजारों जलधाराएँ भी मिले तो भी वे सागर की विशालता की बराबरी नहीं कर सकती। इसी प्रकार आत्मा का स्वरूप भी अपने आप में अद्भूत, अनूठा और अद्वितीय होता है। अतः हजारों-हजारों भौतिक वस्तुएँ इकट्ठी की जाएँ तो भी वे आत्मा के स्वरूप की बराबरी नहीं कर सकती।

अत्तावगमो नज्जई, सयमेव गुणेहिं किं बहु भणसि?
सूरूदओ लक्खिज्जई न तु सवहनिवहेणं।।

आत्मावबोध कुलक ग्रन्थ में पूज्य आचार्य श्री जयशेखरसूरिजी महाराज ने कहा है। आत्मावबोध हुआ है या नहीं उसका प्रमाण बोलने से नहीं होता है, परन्तु उसके गुणों के अनुभव से होता है। दुनिया के सभी विषयों पर भाषण करके शायद उस विषय में जानकारी प्रगट की जा सकती है, परन्तु आत्मस्वरूप की जानकारी बहुत बोलने से हुई हो ऐसा नहीं कह सकते। अंधा व्यक्ति रंगों का वर्णन कर सकता है फिर भी उसे उसकी अनुभूति नहीं है। जब कि देखने वाले मनुष्य को उसके रंगों की साक्षात् अनुभूति हो जाती है। इसलिए उसे वर्णन की जरूरत नहीं है। मतलब कि जो अनुभवों के स्तर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(आधार) पर प्रगटता है, वह शब्दों के वर्णन से प्राप्त नहीं होता। इसलिए तो कहा जाता है सौ शब्दों से एक चित्र अधिक असरकारक होता है। बहुत बार जिस वस्तु को समझे भी न हो, उस वस्तु को समझाने के लिए शब्दों की सरिता बहती है जबकि वह खुद ही नहीं समझ पाया है। आत्मावबोध भी गुणों से अनुभूत होता है। शब्दों से नहीं। शेठ ने नौकर से कहा, जरा बाहर जाकर देख तो, सूर्योदय हुआ या नहीं? तब नौकर कंदील (लालटेन) लेकर बाहर निकला। शेठ ने पूछा– कंदील क्यों लिया? तब नौकर कहता है कंदील के उजाले में देखने के लिए कि सूर्योदय हुआ है या नहीं। नौकर को पता नहीं है कि सूर्योदय कंदील से देखने की चीज नहीं है। अगर सूर्य का प्रकाश फैला हो, और अंधकर गया हो तो समझ लेना कि सूर्योदय हो चूका है। वैसे आत्मावबोध शब्दों के कंदील से बताना नहीं होता। अगर गुण प्रगट हुए हो और दोंषों का नाश हुआ हो, तो समझ लेना कि आत्मावबोध हुआ है। निगोद अवस्था में से व्यवहार राशि में आये, वहाँ से पुण्य का स्टोक बढ़ने से एकेन्द्रिय बने, किन्तु एकेन्द्रिय अवस्था में ऐसी कोई शक्ति नहीं थी कि आत्मतत्त्व की पहचान कर सके। द्विन्द्रिय में ऐसी कोई बुद्धि नहीं मिली थी कि आत्मशुद्धि कर सके। तेइन्द्रिय अवस्था में ऐसी कोई तेजस्वीता प्राप्त नहीं हुई थी कि त्रितत्त्व और त्रिरत्न की आराधना कर सके। चउरिन्द्रिय अवस्था में आये वहाँ ऐसी कोई चतुराई नहीं थी कि चतुरगति से छुटकारा पा सके। परन्तु अब घोल पाषाणवत् नदी के पत्थर की तरह रेंगते–रेंगते (खिसकते) गोलाकृति को पाया, अकामनिर्जरा करते–करते पंचेन्द्रिय अवस्था में आया। पंचेन्द्रिय में भी मानवभव, उत्तमकुल, जैनधर्म पाया, कैसा अनमोल अवसर प्राप्त हुआ। इस अवसर को पाकर अंतरद्वार खोलने के लिए, आत्मावबोध पाने के लिए कठीन साधना किजिए। क्योंकि आत्मा जैन दर्शन का केन्द्र–बिन्दु है। आत्मा की धुरी पर ही जैन दर्शन का चक्र गतिमान है। दुनिया में सबसे ज्यादा महत्त्व परमात्मा का है, किन्तु भगवान महावीर परमात्मा के कारण आत्मा के मूल्य को कम नहीं मानते। परमात्मा आत्मा का ही उज्जवल और संपूर्ण रूप है। आत्मा के दो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रतिबिंब हैं, मुक्त आत्मा और संसारी आत्मा। मुक्त वह है जो सम्पूर्ण है और संसारी वह है जो बँटा–बिखरा है, बंधा जकड़ा है। एक सूत्र है, "**अप्पा सो परमप्पा**" आत्मा ही परमात्मा है। आत्मा वह तत्त्व हैं जो जीवन का जनक है। आखिर उसी के चलते तो हमारे भीतर जीवन के स्वर सुनाई देते हैं। भले ही इसके रंग–रूप न हों, अरंग हो, अरूप हो, तेल–बाती न हो, फिर भी जीवन की ज्योतिर्मयता इसी के कारण है। आचार्य श्री मानतुंगसूरीजी महाराज की भाषा में–

निर्धूम वर्तिरपवर्जित तैलपुरः
कृत्सनं जगत्त्रयमिदं प्रगटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरूतां चलिता चलाना
दीपोपरस्त्वसि नाथ जगत्प्रकाशः।।

तुम वह दीपक हो जिसमें न तेल है, न धुआँ है, न बाती है। फिर भी तीनों लोक में सम्भावना तो तुम्हारी ही है। तुम ही आलोक हो और तुमसे ही तीनों लोक आलोकित है। जैन दर्शन आत्मवादी-दर्शन है। जैन धर्म में वह दर्शन मान्य नहीं है जिसमें आत्मा न हो और वह ग्रन्थ भी मान्य नहीं है जिसमें आत्मा को आत्मा के रूप में स्वीकार न किया गया हो, जैन दर्शन का एक मात्र आधार आत्मा है। सामायिक, प्रतिक्रमण, पूजा, पाठ, त्याग, तपस्या अथवा कोई भी क्रिया काण्ड क्यों न हो, हर क्रिया अपने आप में व्यक्ति को आत्मा से जोड़ने के लिए ही है। वे सारी क्रियाएँ ही मान्य है जो आत्मा के साथ जुड़ती हों। भगवान महावीर कहते हैं कि जो आत्मदशा, आत्मतत्त्व तथा आत्मा की शक्ति को स्वीकार नहीं करता वह मिथ्यात्वदशा में जी रहा है। भगवान महावीर ने ईश्वर के तीन विभाजन किए है– (1) सिद्ध ईश्वर (2) मुक्त ईश्वर और (3) बद्ध ईश्वर। पहले का नाम उन्होंने रखा सिद्ध ईश्वर। सिद्ध ईश्वर वह है जो संसार के बंधन से मुक्त हो गया तथा जिसके कर्म समाप्त हो चूके हैं, जन्म–जरा, मृत्यु मिट चूकी है, उनका नाम उन्होंने दिया सिद्ध ईश्वर। दूसरा ईश्वर वह है, जो संसार में तो है मगर उसके बंधनों से मुक्त है, जिसके घाती कर्मों के बंधन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समाप्त हो गए, जो कैवल्य--दशा में जी रहा है, भगवान महावीर की भाषा में वह अरिहंत है, केवली है। तीसरा बद्ध ईश्वर उसे माना जिसके भीतर ईश्वर की शक्ति तो है, आत्मा तो है, मुक्त नहीं हो पायी, संसार से उसका जुड़ाव अभी शेष है। वह बद्ध ईश्वर है, जो अभी तक संसार से जुड़ा है, लेकिन संसार से बंधा होने मात्र से उसकी ईश्वरता, परमात्म शक्ति समाप्त नहीं हो गई। परमात्म शक्ति तो वैसी ही है। हाँ! वह थोडी दब जरूर गई है। उसकी आंतरिक शक्ति, उसका प्रकाश तो अभी शेष है। सांसारिक जीवों के दीपक बुझे हुए नहीं है। मगर बदकिस्मती यह है कि वह ढ़की हुई है, उसका प्रकाश दब गया है और वह बाहर नहीं आ पा रहा है। कोई दीप जल रहा हो और उसे ढ़क दिया जाए तो उसका प्रकाश समाप्त थोड़े ही हो जाएगा। उसका प्रकाश ढ़क्कन तक सीमित हो जाएगा। आदमी कहता है कि आत्मा है तो उसे दिखायी जाए। आत्मा को दिखाया नहीं जा सकता, उसे महसूस किया जा सकता है, उसकी शक्ति को जरूर दिखाया जा सकता है। कोई आदमी यह कहता है कि मैं आत्मा को देखना चाहता हूँ तो वह बड़ी भूल कर रहा है। आत्मा क्या देखने और छूने की चीज है? वह तो सिर्फ महसूस करने की चीज है। आत्मा देखी कैसे जाएगी? कौन देखेगा आत्मा को? आत्मा को सिर्फ महसूस किया जा सकता है क्योंकि आत्मा का रूप रंग, रूप आकार नहीं होता। आत्मा है, यह अनुभूति जिसने कर ली, वह तो सारे संसार में आत्मा ही आत्मा देख रहा है। जिसने आत्मप्रतीती कर ली वही साधक है। उसके लिए सारा संसार आत्मामय होगा। आप कितना भी देखने की कोशिश करो सिर्फ बाहरी भटकाव ही होगा, प्रतीती हो सकती है, दर्शन नहीं।

एक गाँव का किशान अपना बैलगाड़ा लेकर शहर में आया। एक मोड़ पर दूसरी ओर से आ रही टाटा सुमो उससे भिड़ गई। नतीजा! टाटा सुमो को काफी नुक्सान पहुँचा। उसमें बैठे लोगों को चोटें आई। इधर बैलगाड़ा वाला अपनी धुन में आगे बढ़ गया। टाटा सुमो वाले ने बेल गाडे वाले पर केस किया। न्यायधिश ने पूछा : जब तुमने टाटा सुमो को देख लिया तो हाथ से रूकने का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इशारा क्यों नहीं किया? बैलगाड़ी वाला बोला, हुजूर! टाटा सुमो वाले को मेरा बैलगाड़ा ही नजर नहीं आया तो मेरा हाथ क्या नजर आता, तभी तो गाड़े से आकर भीड़ गया। हमारी भी यही दशा हो रही है। हाथ को देखने का प्रयास कर रहे हैं, बड़ा गाड़ा नजर नहीं आ रहा है। कहते हैं, आत्म–दर्शन नहीं होता, आत्म–प्रतीति नहीं होती, आत्मानुभूति नहीं होती। आत्मा का अवलोकन नहीं होता। कहाँ ढूँढ़ रहे हो? क्या ढूंढ़ रहे हो? अपनी आत्मा तो अपने पास ही है। अपनी शक्ति अपने भीतर है। उसका न तो कोई नाम है, न उसे छुआ जा सकता है और न उसे किसी को बताया जा सकता है, उसका कोई रूप नहीं हैं।

हम अपने आपको तन से ऊपर उठाएँ, विचारों से ऊपर उठाए, मन से ऊपर उठाएँ, वह पंच परमेष्ठि, परमात्म स्वरूप तत्त्व स्वयं हमारे अंदर ही है, जरा उसका अवलोकन करो, अपने आपको निहारो, मन के पार, तन के पार और वचन के पार। आत्मा है यह भी कहने की जरूरत नहीं है। "है" इसके लिए कहा जाता है, जो कभी नहीं थी और अब है, बाद में नहीं रहेगी। इसलिए आत्मा की व्याख्या नहीं की जा सकती जो कल नहीं थी, आज है और कल नहीं रहेगी। जैसे यह भवन। कल नहीं था, आज है और हो सकता है कल न रहे। जब ईंट से ईंट अलग होगी तो इसे बिखरना ही होगा। इसी तरह आत्मा है। आत्मा की क्या व्याख्या करें। उसका तो न नाम है, न रूप है, न रस, गन्ध, स्पर्श कुछ भी नहीं हैं। आत्मा बस आत्मा है, शक्ति है, ऊर्जा है।

गीता बहन ने सीता बहन से कहा, मेरा बेटा दोस्तों के साथ खेलने जाता है तो इतना गंदा होकर आता है कि मैं साबुन से इतना घिसती हूँ, इतना घिसती हूँ कि साबु की पूरी बट्टी पूरी हो जाय तब जाकर कहीं पहचान में आता है। तब सीता बहन ने कहा, मूझे तो इससे भी बड़ी मुश्किल है। मेरा बेटा उसके बारह दोस्तों के साथ खेलते–खेलते इतना गंदा हो जाता है इतना मेला–घेला हो जाता है कि मैं बारह को घिस–घिस कर साफ करूं, तब मुश्किल से मेरा बेटा पहचान में आता है, फिर घर पे लाना पड़ता है। अपनी भी हालत इसी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकार की है पुद्गल रमणता की प्रवृत्ति वाली अपनी आत्मा अनादिकाल से पुद्गल के साथ पुद्गल में खेलते-खेलते ऐसे तो पुद्गलमय हो गयी है कि जरा भी पहचान में नहीं आती। जनम-जनम से देहादि रूप में जकड़े हुए पुद्गल में मैं पने की बुद्धि है, अंत में मृत्यु के समय जब उन्हें छोड़ना होता है तब ऐसा लगता है कि यह तो मैं नहीं थी। फिर दूसरे और तीसरे सभी भवों में मैं पने की ही बुद्धि होती है फिर वही निराशा।

भगवान महावीर के सान्निध्य में स्थित श्रेणिक महाराजा ने देखा, दूर एक मैदान में एक आदमी बार-बार आकाश में उड़ता है और तुरन्त जमीन पर पटक/गिर जाता है। फिर खड़ा होकर उड़ता है, तुरन्त गिर जाता है। श्रेणिक महाराजा ने इसका कारण पूछा, कि भगवन् वह आदमी जरा सा उड़ कर बार-बार नीचे क्यों गिर जाता है? भगवान ने कहा, श्रेणिक! वह विद्याधर है। परन्तु अपनी विद्या का एक शब्द भूल गया है। उस कारण से विद्या पढ़कर/बोलकर आकाश में थोड़ा उडता है, परन्तु भूला हुआ शब्द याद नहीं आने से विद्या खंड़ित होने से फिर जमीन पर आ गिरता है। यह सुनकर बुद्धिनिधान अभयकुमार उस विद्याधर के पास गए। विद्याधर से कहा, अगर तुम मुझे अपनी आकाशगामिनी विद्या सुनाओं, तो उसमें तुम जो शब्द भूल गये हो, वह बता दूँ। विद्याधर आकाशगामिनी विद्या के सारे पद बोल गया। एक पद छूट जाता था... अभय कुमार ने पदानुसारी लब्धि से तुरन्त वह पद बताया। उस पद को बोलते ही विद्याधर आकाश मार्ग में उड़ने लगा। अनंतकाल से अपनी भी विद्याधर जैसी ही स्थिति है। हम सिर्फ "आत्मा" इस पद को या इस पद के स्वरूप को ही भूल गए है। ओर तो सब जानते हैं, समझते हैं तभी तो बार-बार देवगति रूप उर्ध्वगति करके फिर दुर्गति रूप जमीन पर पटक जाते है। अगर आत्मा की समझ (ज्ञान) आ जाय तो, हम तुरन्त शुभभावों और शुद्धगति के आकाश में उड़ने लग जाएं। आँखों पर पट्टी बांधकर नीय्त व्यक्ति को पकड़ने का एक खेल खेला जाता है, पकड़ में न आये वहाँ तक घूमते/भटकते रहने का, ओर सभी चीजें पकड़कर आये। वह नहीं माना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाता, गलत होने से घूमते रहना पड़ता है.......बस! कर्मसत्ता ने भी अज्ञानदशा या मोहदशा की पट्टी बांधकर हमें चौदह राजलोक में चौरसी लाख योनिमय, चारगतिमय इस संसार में भटकने के लिए छोड़ा है। उसकी शर्त है कि अपने सच्चे स्वरूप को खोजना है, वह न मिले वहाँ तक भटकना पडेगा, इतना ही नहीं, जितनी बार मिथ्या पदार्थ में, "यह मै... यह मैं" ऐसा मानेगा, उतनी ही बार तुं सजापात्र बनेगा ऐसे देखा जाय तो इस खेल में जीत जाना सरल है, क्योंकि मैं अपने स्वरूप में ही हूँ। मतलब कि वह सतत् अपने साथ अपने में ही है उसको पकड़लो तो खेल पुरा हुआ, भटकना बंद हुआ।

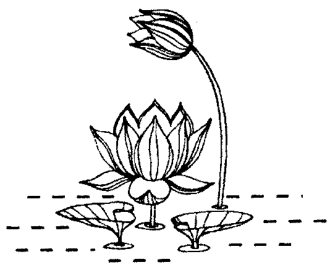

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

29

चिद्रूपानन्द मे दुरैभाव्यम्

"ज्ञानानंद से मस्त होकर रहना"

इस लोक में अनन्त जीव हैं। सबकी कामनाएँ, इच्छाएँ, आकांक्षाएँ जरूरतें भी भिन्न–भिन्न होती है, इस कारण से उनकी सोच उनका प्रयास और आविष्कार अलग–अलग होते हैं। जैसे कि कोई उड़ता हुआ भँवरा मधुर पराग से भरे किसी खिले हुए पुष्प को ढुंढ़ता है। उड़ता हुआ परवाना जगमगाती ज्योति से भरे किसी दीप को ढूंढ़ता है।

उड़ता हुआ हंस मुक्ताओं से भरे किसी जलाशय को ढूंढ़ता हैं। जाती हुई भैंस किसी किचड़ वाला ड़बरा देखती हैं। घूमता हुआ सुवर किसी गंदीनाली को ढूंढ़ता है। घूमता हुआ गधा किसी राख/खाक को देखता है। घूमता हुआ कुत्ता किन्हीं हड्डियों को देखता है। वैसे ही मैं आप से कह रहा हूँ कि आप भी ढूंढ़ों किसी आनन्द और ज्ञान से भरी हुई आत्मा को। दुष्ट आत्मा को नहीं यदि आप आनन्दी और ज्ञानी आत्मा का सामीप्य पा लोगे तो आप भी आत्मानन्दि बन जाओगे, आप भी कृतकृत्य हो जाओगे। यदि दुष्ट आत्मा का सामीप्य पाओगे तो घूमते रह जाओगे।

कबीर घुमक्कड़ थे। मस्ताना, मस्तमौला थे। उन्होंने घूम–घूमकर जगह–जगह अपनी अनुभूतियाँ बाँटी। कबीर घूमे, खूब घूमे और घूम–घूमकर सारे समाज में वाणी का अमृत बाँटा, वाणी बाँटकर सारे समाज में अलख जगाई, फिर उनकी वाणी जन मानस में घर कर गई और फिर जन–जीवन में प्रकाश का काम कर गई। वे बिलकुल फक्कड़ थे, और फकीर ही फक्कड़ होते हैं। जो किसी की परवाह न करे वही तो फक्कड है, जो किसी की चापलूसी न करे वही तो फक्कड़ है। वे ही तो अपनी निजी मस्ती में रहने वाले होते है।

कबीरा खड़ा बाजार में, लिए मुराड़ा हाथ।
जो घर जाले आपना, चले हमारे संग।।

कबीर हाथ में मशाल लेकर बाजार में खड़े है, लोगों से कह रहे हैं कि जो अपने घर को छोड़ सकता है, जो अपने घर को भी जलाने की हिम्मत

For Private And Personal Use Only

रखता है, वही हमारे साथ चल सकता है, यह है फकीर की मस्ती। कबीर के ही समकालीन एक जैन योगी पुरूष हुए हैं– आनन्दघनजी। आत्म–साधना और आत्म–आराधना की दृष्टि से योगीराज आनन्दघनजी का व्यक्तित्व अनोखा है। आनन्दघनजी ने ऐसे समय में जन्म लिया था जब यतिवर्ग का बोल बाला था, बाह्रयाडम्बर की प्रबलता थी। लोग केवल बाहर के क्रियाकलापों को ही धर्म मानते थे। ऐसे युग में आनन्दघनजी ऐसे साधक हुए जिन्होंने अपनी मर्यादाओं का निमार्ण खुद किया। आनन्दघनजी कभी अलख जोगी, अलख निरंजन की रट लगाते तो कभी जंगल में जाकर बैठ जाते। कभी पेड़ के नीचे तो कभी खूले आकाश के नीचे आसन जमा लेते। कभी–कभी श्मशान में भी चले जाते थे। निजानंद की मस्ती में मस्ताना योगीश्री आनन्दघनजी एक गाँव में प्रतिदिन प्रवचन करते थे। नगर शेठ हरदिन सुनने आते थे। एक दिन नगर शेठ समय पर नहीं पहुँचे, देर से पहुँचे थे। प्रवचन शुरू हो गया था। नगर शेठ बोला– महाराज! आपको पता है यह उपाश्रय किसने बनवाया है? आपको पता है इस गाँव में सबसे ज्यादा धनवान कौन है? आपको पता है मेरे आने से पहले प्रवचन शुरू नहीं होता? आज प्रवचन क्यों शुरू कर दिया? ठीक है, अब से ध्यान रखना। आनन्दघनजी तुरन्त ही खड़े हो गए। यह लो रखो तुम्हारा उपाश्रय। और रखो तुम्हारी पाट। मैं उस पेड़ के नीचे प्रवचन दूँगा। जिसे सुनना होगा वहाँ आयेगा। यूँ कहकर आनन्दघनजी वहाँ से रवाना हो गए। मैंने सुना है। उपाध्याय श्री यशोविजयजी महाराज काशी से अध्ययन करके लौटे थे, और वर्षावास सुरतनगर में बीता रहे थे। काशी में अन्य अध्ययन अधिक रहने से वे अधिक स्तवन याद नहीं कर पाए थे, अर्थात् उन्हें अधिक स्तवन नहीं आते थे, तो प्रतिक्रमण में थोड़े–थोड़े दिनों में स्तवन रीपिट होते थे।

एक दिन किसी श्रावक ने कह दिया कि महाराज क्या काशी में इतने वर्ष रह कर घास काटी? उस दिन तो वे चूप रहे, कुछ भी नहीं बोले। किन्तु दूसरे दिन प्रतिक्रमण के दौरान नमोऽस्तु के बाद। उन्होंने स्तवन बोलना प्रारंभ किया....... आधा घंटा हुआ........ एक घंटा हुआ किन्तु उनका स्तवन पूरा ही नहीं

For Private And Personal Use Only

होवे, वह श्रावक तो ऊंचा--नीचा होने लगा, और पूछ ही लिया कि महाराज ये आपका स्तवन कब पूरा होगा? तब उन्होने जवाब दिया, काशी में इतने वर्ष रह कर जो घास काटी थी उसको एकत्रित करके अब बांध रहा हूँ। इतनी सारी घास काटी थी तो बांधने में वक्त लगेगा ही न।

कहते है कि उस प्रतिक्रमण में ही उन्होंने सीमन्धर स्वामी के साड़े तीन सौ गाथा के स्तवन की रचना की। याद रखना यह इन दोनों का गुस्सा नहीं था। निजानंद की मस्ती थी। जिन्हें आत्मसाक्षात्कार हुआ हो, उनमें ही ऐसी खुमारी होती है। ऐसे मस्ताना पुरूष जो बोलते है वही मंत्र बनता है, जहाँ चलते है वहाँ तीर्थ होता है।

ज्ञानानन्द की मस्ती उन्हे ही मिल सकती है जो पुर्वोक्त उनत्तीस शिक्षाओं सूचनाओं के अनुसार जीवन जीता है। सचमुच प्रभु कृपा के बिना ऐसी शिक्षाएँ अच्छी भी नहीं लगती, प्रभु कृपा हो तभी इन शिक्षाओं को जीवन में उतारने का मन होता है। जिसे ज्ञानानन्द मिला, आत्मानन्द मिला उसे सर्वस्व मिला।

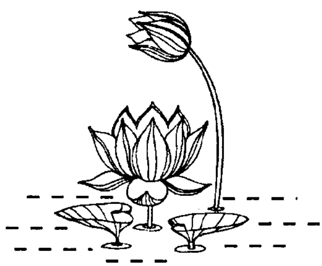

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रिय शिक्षाएँ

पापियों की भी भवस्थिति का विचार करना

गुणीजनों का बहुमान करना

बालक से भी हितकर चीज स्वीकारनी

आत्म नियंत्रण करना

अन्य की आशा नहीं रखनी

दुर्जन के बकवास से क्रोधित न होना

संग मात्र बंधन जानना (समजना)

लोगों की निंदा से क्रोधित नहीं होना

स्वप्रशंसा से अहंकार न करना

दम्भी मत बनो

धर्मगुरू की सेवा करनी

तत्व जिज्ञासा रखनी चाहिए

लोक में किसी की भी निंदा नहीं करनी

स्थिरता रखनी

पवित्रता रखनी

थोडे/छोटे से गुण पर भी प्रेम रखना

भगवान में भक्ति धारण करनी चाहिए

वृद्ध पुरुषों का अनुसरण करना

संसार के दोषों का दर्शन करना

वैराग्यभाव धारण करना

प्रमादरूपी शत्रु का भरोसा मत करो

देह आदि की विरूपता सोचनी

सदा एकान्त स्थान का सेवन करना

सम्यक्त्व में स्थिर रहना

आत्म तत्व का साक्षात्कार करना

ज्ञानानंद से मस्त होकर रहना

आत्मज्ञान की निष्ठा का ध्येय रखना

कुविकल्पों का त्याग करना

सभी जगह आगम को आगे रखना

Serving JinShasan
129628
gyanmandir@kobatirth.org

S M O T
9414463673

For Private And Personal Use Only